देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115
May 2026
Vol.-23, Issue-5

Impact Factor
8.642

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)



Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

Publisher :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
#202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

स्व. चौ. गुगनराम सिहाग व उनकी छोटी बहन स्व. श्रीमती गीना देवी के शुभाशीर्वाद से प्रकाशित

JOURNAL OF HUMANITIES, COMMERECE, SCIENCE, MANAGEMENT & LAW

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Vol. 23 ISSUE-5, Part-2 (मई 2026) ISSN : 2395-7115

प्रेरणा :

चौ. एम. सिहाग

सम्पादक :

डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल', एडवोकेट

एम.ए. (समाजशास्त्र, लोक प्रशासन, हिन्दी शिक्षा शास्त्र, पत्रकारिता),
एम.फिल (समाजशास्त्र, हिन्दी) एम. लिब., एल-एल.बी. (ऑनर्स),
डिप्लोमा पंचायती राज (रजत पदक विजेता), पी.एच.डी. (हिन्दी)
डी.लिट् (मानद उपाधि), काठमांडू, नेपाल

कार्यकारी सम्पादक :

प्रो. शकुन्तला चौहान

शामली, उत्तर प्रदेश।

प्रकाशक :

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा)

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL REFEREED/REVIEWED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
ISSN 2395-7115

सम्पादकीय सम्पर्क :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,
भिवानी-127021 (हरियाणा)
Email : nksihag202@gmail.com
मो. 09466532152

Published by :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board,
Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA
Email : grsbohal@gmail.com
Facebook.com/bohalshodhmanjusha
Website : www.bohalsm.blogspot.com
WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1100/-

Disclaimer :

1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

बोहल शोध मंजूषा परिवार*

मानद संरक्षक

डॉ. कैलाश चन्द्र शर्मा 'शंकी'
पूर्व शिक्षा अधिकारी,
साहित्यकार,
चरखी दादरी (हरियाणा)

डॉ. विश्वबंधु शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
बाबा मस्तनाथ वि.वि.
रोहतक (हरियाणा)

डॉ. विनोद तनेजा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
गुरूनानक वि.वि. अमृतसर
पंजाब।

सम्पादक मण्डल

सह सम्पादिका :
डॉ. रेखा सोनी
उप प्राचार्या, शिक्षा विभाग
टाटिया वि.वि. श्रीगंगानगर।

सह सम्पादिका :
डॉ. सुशीला आर्या
हिन्दी विभाग, चौ. बंसीलाल
विश्वविद्यालय, भिवानी।

प्रबंध सम्पादक :
समुन्द्र सिंह
भिवानी, हरियाणा।

विधि विशेषज्ञ

डॉ. रामफल दलाल, एडवोकेट
जिला न्यायालय
भिवानी, हरियाणा।

अजीत सिहाग, एडवोकेट
पंजाब एवं हरियाणा हाईकोर्ट,
चंडीगढ़।

चरणवीर सिंह, एडवोकेट
जिला न्यायालय
पटियाला, पंजाब।

विषय विशेषज्ञ/परामर्शदात्री/शोधपत्र निरीक्षण समिति

डॉ. कुमारी लक्ष्मी जोशी
हिन्दी विभाग, त्रिभुवन वि.वि.
काठमाण्डू, नेपाल।

डिल्लीराम शर्मा संग्रौला
विभागीय प्रमुख, संस्कृत, पत्रकारिता, हिंदी
पद्मकन्या बहुमुखी कैंपस, काठमांडू, नेपाल।

डॉ. संजय एल. मादार
विभागाध्यक्ष, पी.जी. केन्द्र
द.भा.हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद।

डॉ. गीता दहिया, प्राचार्या,
नैशनल टीटी कॉलेज फॉर गर्ल्स
अलवर, राजस्थान

डॉ. इस्पाक अली
पूर्व प्राचार्य, लाल बहादुर शास्त्री
शिक्षा महाविद्यालय, बेंगलूरू

डॉ. मो. रियाज़ खान
बीएमएस वूमैन कॉलेज आटोनोमेस
बेगलूरू

डॉ. वनिता कुमारी
च. दादरी (हरियाणा)

श्री सहदेव समर्पित
सम्पादक, शान्तिधर्मी, जीन्द

डॉ. अंजली उपाध्याय
उत्तर प्रदेश

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कालेज
धारवाड़, कर्नाटक

प्रो. अमनप्रीत कौर
गुरू तेग बहादुर खालसा कॉलेज
फॉर वूमैन, दसूहा, पंजाब

डॉ. वर्षा रानी
संस्कृत विभाग, डॉ. भीमराम
अम्बेडकर, वि.वि., आगरा

प्रो. कमलेश चौधरी
राजकीय रणबीर महाविद्यालय
संगरूर, पंजाब

डॉ. किरण गिल
दीनदयाल टी.टी. महाविद्यालय
बारी, जिला सीकर, राज.

डॉ. सविता घुड़केवार
पीजी विभाग, दक्षिण भारत
हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

डॉ. परमजीत कौर
बरेली कॉलेज बरेली,
उत्तर प्रदेश।

डॉ. राजकुमारी शर्मा
श्रीराम कॉलेज,
नई दिल्ली।

डॉ. श्रीविद्या एन.टी.
श्री शंकराचार्य संस्कृत वि.वि.
केरल।

डॉ. बी. संतोषी कुमारी
पी.जी.विभाग, दक्षिण भारत हिन्दी
प्रचार सभा, मद्रास।

श्री राकेश ग्रेवाल
सन जॉस,
कैलिफोर्निया, यू.एस.ए.

डॉ. पंडित बन्ने
भारत महाविद्यालय,
सोलापुर (महाराष्ट्र)

डॉ. करमजीत कौर
प्राचार्या, दशमेश गर्ल्स कॉलेज
चक आला, मुकेरिया, पंजाब।

श्री राकेश शंकर भारती
साहित्यकार व अनुवादक,
यूक्रेन।

डॉ. उमा सैनी
आई.ए.एस.ई. विश्वविद्यालय
सरदारशहर, राजस्थान

डॉ. मनमीत कौर
राधा गोविन्द वि.वि.,
रामगढ़, झारखण्ड।

डॉ. रीना उन्नीयाल तिवारी
शिक्षा संकाय, डी.ए.वी. पीजी
कालेज, देहरादून

डॉ. सुरजीत सिंह कस्वां
डीन फिजिकल एजुकेशन
टांटिया वि.वि., श्रीगंगानगर,

डॉ. शबाना हबीब
गवर्नमेंट कॉलेज फॉर वूमैन
त्रिवन्तपुरम, केरल।

डॉ. शिवकरण निमल
सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान
एसपीसी राजकीय महा. भीम, राजस्थान।

डॉ. राधाकृष्णन गणेशन
भारत कला भवन
वाराणसी, उत्तर प्रदेश।

डॉ. मानसिंह दहिया
संस्कृत विभाग
हरियाणा सरकार।

डॉ. नीलम आर्या
संस्कृत विभाग
उत्तर प्रदेश।

डॉ. रवि सुण्डयाल
हॉयर एजुकेशन डिपार्टमेंट
जम्मू कश्मीर।

प्रो. नरेन्द्र सोनी
सूचना एवं जन सम्पर्क अधिकारी,
हरियाणा सरकार।

डॉ. रोहतास
एस.जी.पी.जी.आई.एम.एस.
लखनऊ, उत्तर प्रदेश।

प्रो. सत्यबीर कालोहिया
पूर्व प्राचार्य,
कैलिफोर्निया।

पठान चिन्ना जानी
सहायक प्राध्यापक
सी.एच.एस.डी. सेंट थेरेसा
महिला महाविद्यालय (ए)
एलुरु, आंध्र प्रदेश

डॉ. वैशाली सिंह
सहायक प्राध्यापक
शिक्षा विभाग, एस.एम.टी. अनार देवी
टी.टी. कॉलेज, बखराना
(कोटपुतली) राजस्थान।

डॉ. रेखा रानी
गवर्नमेंट रणबीर कॉलेज
संगरूर, पंजाब

डॉ. के.के. मल्हौत्रा
पूर्व विभागाध्यक्ष
गवर्नमेंट कॉलेज, गुरदासपुर

डॉ. अंकिता चतुर्वेदी, प्रवक्ता
भीमसेन डिग्री कॉलेज
(आगरा यूनिवर्सिटी)

शिओंग छन श्यू
चीन

*सम्पूर्ण बोहल शोध मञ्जूषा परिवार/सम्पादक मण्डल अवैतनिक है।

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Table 2

Methodology for University and College Teachers for calculating Academic/Research Score

(Assessment must be based on evidence produced by the teacher such as: copy of publications, project sanction letter, utilization and completion certificates issued by the University and acknowledgements for patent filing and approval letters, students' Ph.D. award letter, etc,.)

S.N.	Academic/Research Activity	Faculty of Sciences /Engineering / Agriculture / Medical /Veterinary Sciences	Faculty of Languages / Humanities / Arts / Social Sciences / Library /Education / Physical Education / Commerce / Management & other related disciplines
1.	**Research Papers in Peer-Reviewed or UGC listed Journals**	08 per paper	10 per paper
2.	**Publications (other than Research papers)**		
	(a) Books authored which are published by ;		
	International publishers	12	12
	National Publishers	10	10
	Chapter in Edited Book	05	05
	Editor of Book by International Publisher	10	10
	Editor of Book by National Publisher	08	08
	(b) Translation works in Indian and Foreign Languages by qualified faculties		
	Chapter or Research paper	03	03
	Book	08	08
3.	**Creation of ICT mediated Teaching Learning pedagogy and content and development of new and innovative courses and curricula**		
	(a) Development of Innovative pedagogy	05	05
	(b) Design of new curricula and courses	02 per curricula/course	02 per curricula/course

अनुक्रमाणिका – मई 2026

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	डॉ. नरेश सिहाग	09–09
2.	ग्रामीण एवं नगरीय जनसांख्यिकी का विश्लेषणात्मक अध्ययन : हनुमानगढ़ जिले के विशेष संदर्भ में	भीमसेन मालिया, डॉ. सचिन कुमार	10–14
3.	प्राचीन हिन्दू शिक्षा पद्धति (गुरूकुल व्यवस्था) एवं आधुनिक शिक्षा प्रणाली का तुलनात्मक अध्ययन	डॉ. रवि देव 'कर्मयोगी'	15–23
4.	वैदिक कालीन शिक्षा व्यवस्था का विश्लेषणात्मक अध्ययन	श्रीमती रतनी, डॉ. सुमन रानी	24–28
5.	शिक्षा में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की भूमिका और भविष्य	डॉ. पूराराम मेघवाल	29–36
6.	**Enhancing Information Literacy Through Libraries : Challenges And Opportunities Under NEP 2020**	**ANIL KANT SAHU**	**37-40**
7.	धर्म, संस्कृति और सामाजिक संरचना : भारतीय परिप्रेक्ष्य में अंतःक्रियात्मक अध्ययन	डॉ. गौरव नायक	41–46
8.	राष्ट्रीय राजनीति पर क्षेत्रीय दलों का प्रभाव : एक अध्ययन	प्रणय मणि त्रिपाठी, डॉ. संध्या शुक्ला	47–52
9.	**SYRIAN DISPLACEMENT AND THE INTERNATIONAL ORDER**	**Gagandeep Kaur**	**53-63**
10.	पर्यावरणीय शिक्षा और सतत् विकास : राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के भूगोल पाठ्यक्रम की भूमिका	सुमन, नवीन राय	64–73
11.	ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल साक्षरता बढ़ाने में सार्वजनिक पुस्तकालयों की भूमिका : एक आलोचनात्मक अध्ययन	दीपिका राज, डॉ. धर्मवीर सिंह	74–81
12.	**Jal, Jangal, Zameen as Sacred Assets : Revisiting Tribal Resource Rights under PESA through the Vedic Concept of 'Pancha Mahabhuta'**	**Ravi Verma, Professor Dr. J.C. Sinha**	**82-88**
13.	**Aspect Based Split Ergativity and Verbal Categories in Spoken Braj Bhasha**	**Juveria Alam, Ovais Amin**	**89-95**
14.	नासिरा शर्मा के उपन्यासों में सामाजिक विमर्श	गीता गम्भीरी, डॉ. निशा साहनी	96–100
15.	दक्षिणांचल कवियों का काव्य–शिल्प	प्रियंका शर्मा, डॉ. दीपक शर्मा	101–103
16.	**Impact of Artificial Intelligence on Retail Market**	**Dr. Poonam Tomar**	**104-111**
17.	**Role of Sports in Character Building and Moral Development among Youth**	**Dr. Sujith S.**	**112-118**

18.	Corporate Social Responsibility in India - An Analytical Study	Mayuri Jain, Jaya Nayak	119-127
19.	AZAMPUR VILLAGE : A HISTORICAL STUDY	Koshinder Singh	128-133
20.	आधुनिक हिन्दी साहित्य और ऐतिहासिक यथार्थ : एक आलोचनात्मक अध्ययन	मयंक वसु, डॉ. दीपक कुमार	134–140
21.	'दादी अम्मा' और 'बहनें' कहानी में पारिवारिक संबंधों की बदलती संवेदनाओं का विश्लेषण	राहुल गर्ग, प्रो. रजिंदर कौर	141–146
22.	From Battle of Mandan to Rezang La : The Evolution of Martial Identity in AHIRWAL	Vaibhav Yadav	147-154
23.	अमेरिका–ईरान युद्ध का भारत की अर्थव्यवस्था, ऊर्जा सुरक्षा और विदेश नीति पर प्रभाव	डॉ. समय दीन गुप्ता	155–162
24.	Impact of Measurement Accuracy and Marking Procedures on Athlete Performance and Safety in Physical Education and Sports	Ram Krishan Saran, Dr. Surjeet Singh Kaswan	163-167
25.	Human Values as envisaged in *Kirātārjunīyaṃ* : A study [With special reference to Canto-I]	Sushanta Dharua, Dr. Biraj Krushna Mishra, Dr. Trupti Mishra	168-177
26.	महिला अधिकारों के विशेष संदर्भ में राजस्थान में मानवाधिकारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन	मोहम्मद रमजान, डॉ. जगदीश प्रसाद कड़वासरा	178–180
27.	प्राचीन भारतीय समाज में संरक्षण, समृद्धि एवं अनुशासन के प्रतीक रूप में यक्ष एवं दिक्पाल	शुभम् दुबे, प्रो. इन्दु भूषण द्विवेदी	181–184
28.	झारखण्ड का जनजातिय ग्राम प्रशासन	डॉ. प्रणय रंजन	185–190
29.	Influence of Aerobic Capacity and Muscular Endurance on Athletic Performance : A Comparative and Predictive Study	Shrawan Kumar Prajapat, Dr. Kamal Vijayvargia	191-194
30.	Impact of Sports Psychology on the Personality Development of the Athlete	Motiram, Dr. Kamal Vijayvariga	195-197
31.	COMPARATIVE ANALYSIS OF MUSCLE STRENGTH AND FLEXIBILITY AMONG ATHLETES	Shiv Prakash, Dr. Kamal Vijayvargia	198-201
32.	'घुसपैठिये' कहानी संग्रह में अभिव्यक्त दलित वर्ग की पीड़ा	डॉ. अनु पाण्डेय	202–207
33.	ਗੁਰਬਾਣੀ ਸੰਗੀਤ ਦਾ ਮਨੁੱਖੀ ਗੁਣਾਂ ਦੀ ਸਿੱਖਿਆ ਦੇ ਪ੍ਰਚਾਰ-ਪ੍ਰਸਾਰ ਵਿੱਚ ਯੋਗਦਾਨ	ਡਾ. ਲਤਾ ਸੰਦੀਪ ਕੌਰ	208–217
34.	हिंदी साहित्य के इतिहास में आदिवासी अस्मिता	डॉ. मनोज कुमार	218–224

संपादकीय...

भारतीय ज्ञान परम्परा, समकालीन शोध और मानविकी की नई दिशाएँ

आज के वैश्विक परिदृश्य में ज्ञान, शोध और संवाद की परम्पराएँ तीव्र गति से परिवर्तित हो रही हैं। ऐसे समय में "बोहल शोध मंजूषा" का मई अंक न केवल अकादमिक विमर्श का मंच है, बल्कि भारतीय ज्ञान परम्परा और समकालीन चुनौतियों के बीच एक सशक्त सेतु भी है। यह अंक विशेष रूप से इस विचार को केंद्र में रखकर प्रस्तुत किया गया है कि परम्परा और आधुनिकता का समन्वय ही वास्तविक प्रगति का आधार है।

भारतीय ज्ञान परम्परा सदैव से समावेशी, बहुआयामी और जीवनोपयोगी रही है। वेदों, उपनिषदों, स्मृतियों, लोक साहित्य और आधुनिक साहित्य तक फैली यह परम्परा केवल अतीत की धरोहर नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए मार्गदर्शक भी है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम इन ज्ञान स्रोतों को केवल स्मरण न करें, बल्कि उन्हें नए संदर्भों में पुनः व्याख्यायित करें। यही कार्य शोध का मूल उद्देश्य भी है नवीन दृष्टिकोण के साथ सत्य की खोज।

इस अंक में प्रस्तुत शोध पत्रों में साहित्य, शिक्षा, संस्कृति, समाजशास्त्र और समकालीन विमर्शों का संतुलित समावेश देखने को मिलता है। विशेष रूप से हिंदी साहित्य में उभरते नए विमर्श 'स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, पर्यावरण चेतना और डिजिटल युग में साहित्य की भूमिका' पर गंभीर चिंतन प्रस्तुत किया गया है। यह स्पष्ट करता है कि शोध केवल पुस्तकालयों तक सीमित नहीं रहा, बल्कि समाज की धड़कनों से जुड़ चुका है।

समकालीन समय में शोध लेखन की गुणवत्ता और नैतिकता भी एक महत्वपूर्ण प्रश्न बनकर उभरी है। Plagiarism, संदर्भों की प्रामाणिकता और शोध की मौलिकता पर विशेष ध्यान देना आज की आवश्यकता है। एक सशक्त शोध वही है जो तथ्यात्मक, विश्लेषणात्मक और मौलिक हो। इस संदर्भ में यह पत्रिका शोधार्थियों और विद्वानों को एक जिम्मेदार मंच प्रदान करने के लिए प्रतिबद्ध है। डिजिटल युग ने ज्ञान के प्रसार को सरल बनाया है, परंतु इसके साथ ही चुनौतियाँ भी बढ़ी हैं। सूचनाओं की अधिकता में सत्य की पहचान करना कठिन हो गया है। ऐसे में समीक्षित (Peer Reviewed) पत्रिकाओं की भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। बोहल शोध मंजूषा इस दिशा में एक विश्वसनीय माध्यम के रूप में निरंतर कार्य कर रही है।

यह भी उल्लेखनीय है कि भारतीय समाज में शिक्षा और संस्कृति का संबंध अत्यंत गहरा है। शिक्षा केवल ज्ञान का अर्जन नहीं, बल्कि मूल्य निर्माण की प्रक्रिया भी है। इस अंक के अनेक लेख इस तथ्य को रेखांकित करते हैं कि यदि शिक्षा में भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों का समावेश किया जाए, तो समाज में नैतिकता और संवेदनशीलता का विकास संभव है।

अंततः, यह कहना समीचीन होगा कि शोध एक सतत यात्रा है—प्रश्नों से उत्तरों तक और फिर नए प्रश्नों की ओर। बोहल शोध मंजूषा का यह अंक इसी यात्रा का एक पड़ाव है, जो पाठकों, शोधार्थियों और विद्वानों को नए विचारों, दृष्टिकोणों और संभावनाओं से परिचित कराता है।

हम सभी लेखकों, समीक्षकों और पाठकों का आभार व्यक्त करते हैं, जिनके सहयोग से यह अंक संभव हो सका। आशा है कि यह अंक न केवल ज्ञानवर्धन करेगा, बल्कि नए शोध कार्यों के लिए प्रेरणा भी प्रदान करेगा।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 10-14

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ग्रामीण एवं नगरीय जनसांख्यिकी का विश्लेषणात्मक अध्ययन : हनुमानगढ़ जिले के विशेष संदर्भ में

भीमसेन मालिया, शोधार्थी,
डॉ. सचिन कुमार, शोध निर्देशक,
भूगोल विभाग, श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय, हनुमानगढ़।

शोध आलेख सार –

यह अध्ययन हनुमानगढ़ जिले की ग्रामीण एवं नगरीय जनसांख्यिकी, जनसंख्या वृद्धि दर, लिंगानुपात, रोजगार संरचना, स्वास्थ्य सुविधाओं, साक्षरता स्तर तथा सामाजिक–आर्थिक अंतर का तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। जिले में ग्रामीण क्षेत्र जनसंख्या और भौगोलिक क्षेत्रफल की दृष्टि से व्यापक हैं, जबकि नगरीय क्षेत्र आर्थिक गतिविधियों, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं रोजगार के अधिक अवसर प्रदान करते हैं। जनगणना आंकड़ों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में जनसंख्या वृद्धि अधिक तथा नगरीय क्षेत्रों में साक्षरता, स्वास्थ्य सेवाएँ, महिला सहभागिता एवं रोजगार संरचना अपेक्षाकृत बेहतर है।

साक्षरता के संदर्भ में ग्रामीण–नगरीय अंतर सबसे प्रमुख कारक है। ग्रामीण क्षेत्रों की साक्षरता दर नगरीय क्षेत्रों की तुलना में कम पाई गई, विशेषकर महिला साक्षरता में अंतर अधिक स्पष्ट है। ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यालय दूरी, गरीबी, बाल श्रम, पारिवारिक दायित्व, शिक्षकों की कमी, इंटरनेट सुविधा का अभाव तथा सामाजिक–सांस्कृतिक मान्यताएँ साक्षरता वृद्धि में बाधक हैं। इसके विपरीत नगरीय क्षेत्रों में स्कूल, कोचिंग, डिजिटल सुविधाएँ, पुस्तकालय, महिला शिक्षा योजनाएँ एवं रोजगार उपलब्धता अधिक होने से साक्षरता दर उच्च है।

मूल शब्द – ग्रामीण, नगरीय जनसांख्यिकी।

भूमिका –

मानव समाज की संरचना और उसकी निरंतर परिवर्तनशील प्रकृति को समझने के लिए जनसांख्यिकी एक महत्वपूर्ण विश्लेषणात्मक उपकरण के रूप में कार्य करती है। जनसंख्या का आकार, वृद्धि दर, वितरण, घनत्व, प्रवजन, जन्म–मृत्यु दर, आयु–संरचना तथा सामाजिक–आर्थिक विशेषताएँ किसी भी क्षेत्र की विकास दिशा तथा नीतिगत प्राथमिकताओं को निर्धारित करती हैं। ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों में जनसंख्या संबंधी प्रवृत्तियाँ स्वभावतः भिन्न होती हैं, जिसके कारण दोनों क्षेत्रों की विकास आवश्यकताएँ, संसाधनों का उपयोग, जीवन–स्तर और सामाजिक संरचनाएँ भी अलग–अलग रूप धारण करती हैं।

भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में ग्रामीण–नगरीय जनसंख्या का विश्लेषण न केवल सामाजिक विज्ञानियों के लिए, बल्कि नीति–निर्माताओं, प्रशासनिक योजनाकारों, और विकास विशेषज्ञों के लिए भी आवश्यक

हो जाता है। राजस्थान राज्य इस संदर्भ में विशेष महत्त्व रखता है, क्योंकि यहाँ प्राकृतिक परिस्थितियों, सामाजिक संरचनाओं तथा आर्थिक संसाधनों में अत्यधिक विविधता पाई जाती है। राजस्थान के उत्तर–पश्चिमी भाग में स्थित हनुमानगढ़ जिला अपने विशिष्ट भू–आकृतिक स्वरूप, कृषिदृप्रधान अर्थव्यवस्था, ऐतिहासिक प्रव्रजन पैटर्न और सीमावर्ती स्थिति के कारण जनसांख्यिकीय अध्ययन के लिए अत्यंत उपयुक्त क्षेत्र माना जाता है।

हनुमानगढ़ जिले में ग्रामीण और नगरीय जनसंख्या के मध्य स्पष्ट भिन्नताएँ देखने को मिलती हैं– ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि, पशुपालन और पारंपरिक व्यवसायों का प्रभुत्व है, जबकि नगरीय क्षेत्रों में सेवा क्षेत्र, व्यापार तथा औद्योगिक गतिविधियाँ अधिक पाई जाती हैं। इन दोनों क्षेत्रों की जनसंख्या आकृतियों का तुलनात्मक विश्लेषण जिले की विकास क्षमता, सामाजिक परिवर्तन की गति, तथा भविष्य की विकास नीतियों के निर्माण में सहायक सिद्ध होता है।

इस अध्ययन का उद्देश्य हनुमानगढ़ जिले की ग्रामीण एवं नगरीय जनसांख्यिकी का समग्र एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करना है, जिससे जनसंख्यिकीय विशेषताओं के आधार पर क्षेत्रीय विकास के बहुआयामी पहलुओं को समझा जा सके। यह अध्याय न केवल जनसांख्यिकी के सैद्धांतिक आधार को स्पष्ट करेगा, बल्कि जिले की सामाजिक, आर्थिक एवं भौगोलिक पृष्ठभूमि की विस्तृत व्याख्या भी प्रस्तुत करेगा, जिससे अध्ययन के आगामी अध्यायों में प्रस्तुत विश्लेषण अधिक सुसंगत एवं तर्कसंगत रूप में विकसित हो सके।

हनुमानगढ़ जिले की ग्रामीण और नगरीय जनसांख्यिकीय संरचना का विश्लेषणात्मक अध्ययन केवल सांख्यिकीय मूल्यांकन भर नहीं है, बल्कि यह सामाजिक परिवर्तन, आर्थिक प्रवाह, पर्यावरणीय परिस्थितियों तथा क्षेत्रीय विकास के परस्पर संबंधों को समझने का एक समग्र प्रयास भी है। किसी भी क्षेत्र में जनसंख्या केवल संख्यात्मक इकाई नहीं होती, बल्कि वह सामाजिक–सांस्कृतिक व्यवहारों, आर्थिक अवसरों, संसाधन उपयोग, पारिवारिक ढाँचों और सामाजिक संस्थाओं के सक्रिय सहभागिता का प्रतिबिंब होती है। इसलिए जनसांख्यिकी का विस्तृत अध्ययन किसी भी समाज की दिशा, दशा और विकास यात्रा को समझने की अनिवार्य प्रक्रिया बन जाता है।

भारत जैसे व्यापक और विविधतापूर्ण देश में ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों के मध्य सदैव एक स्पष्ट विभाजन मौजूद रहा है, जो समय के साथ–साथ और जटिल होता गया है। ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि, पारंपरिक व्यवसाय, सामुदायिक संबंध और संसाधनों पर निर्भरता प्रमुख रही है, जबकि नगरीय क्षेत्रों में उद्योग, व्यापार, सेवा क्षेत्र, तकनीकी अवसर और आर्थिक विविधता ने जनसंख्या संरचना को प्रभावित किया है। इन दोनों प्रकार के समाजों की विशेषताओं, चुनौतियों और अवसरों को समझे बिना किसी भी जिले का संपूर्ण विकास संभव नहीं है।

हनुमानगढ़ जिला राजस्थान के उत्तरी भाग में स्थित है, जो भौगोलिक रूप से अति विशिष्ट है। यह क्षेत्र थार मरुस्थल के समीप होते हुए भी नहर सिंचाई की उपलब्धता के कारण आज अत्यंत उर्वर कृषि क्षेत्र के रूप में विकसित हो चुका है। इस भौगोलिक परिवर्तन ने ग्रामीण जीवन, कृषि उत्पादन, आव्रजन, व्यापारिक विस्तार और शहरीकरण की प्रक्रिया को गहराई से प्रभावित किया है। यही कारण है कि हनुमानगढ़ की जनसंख्या संरचना राजस्थान के अन्य जिलों से भिन्न प्रतीत होती है।

नहर सिंचाई का आगमन इस क्षेत्र के लिए एक ऐतिहासिक घटना के रूप में देखा जा सकता है। जिस भूभाग में कभी सीमित कृषि, वर्षा आधारित खेती, पशुपालन और परंपरागत जीवनशैली विद्यमान थी, वही क्षेत्र

आज उच्च कृषि उत्पादन, वाणिज्यिक खेती, आधुनिक कृषि तकनीकों और ग्रामीण आर्थिक विविधीकरण का केंद्र बन चुका है। परिणामस्वरूप– कई गाँव तेजी से विकसित हुए, वहीं कई ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी परंपरागत जीवनशैली और सीमित संसाधन प्रमुख रूप से दिखाई देते हैं। इस असमानता ने ग्रामीणों के बीच आर्थिक और सामाजिक अंतर को विस्तृत किया है।

नगरीय क्षेत्रों का विकास भी इसी परिवर्तन से जुड़ा हुआ है। हनुमानगढ़, पीलीबंगा, रावतसर, नोहर, भादरा और गोलूवाला जैसे कस्बे न केवल व्यापारिक गतिविधियों के केंद्र बने हैं बल्कि यहाँ शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवहन और संचार सुविधाओं का विस्तार इन क्षेत्रों को ग्रामीण समाज से भिन्न बनाता है। शहरी क्षेत्रों में कार्यबल संरचना कृषि से हटकर सेवा क्षेत्र, व्यापार, लघु उद्योग, प्रशासनिक सेवाओं और निजी क्षेत्रों की ओर प्रवृत्त हो रही है। इससे न केवल आर्थिक गतिविधियों में परिवर्तन आया है बल्कि जनसंख्या के दैनिक जीवन, पारिवारिक ढाँचे और सामाजिक संबंधों में भी व्यापक बदलाव दिखाई देते हैं।

इन सामाजिक और आर्थिक परिवर्तनों का प्रत्यक्ष प्रभाव जनसांख्यिकीय संकेतकों पर भी पड़ा है। शहरी क्षेत्रों में जन्मदर में गिरावट, शिक्षा स्तर में वृद्धि, स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता, रोजगार के विस्तृत अवसर और महिलाओं की बढ़ती भागीदारी स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। इसके विपरीत, कुछ ग्रामीण क्षेत्रों में परंपरागत परिवार प्रणाली, कृषि–आधारित आय, सीमित संसाधनों का उपयोग तथा रोजगार के कम अवसर आज भी प्रचलित हैं। यह अंतर जनसांख्यिकीय संरचना में दो अलग–अलग प्रवृत्तियों को जन्म देता है– एक आधुनिक, उभरता हुआ नगरीय समाज और दूसरा अभी भी संक्रमणकालीन ग्रामीण समाज।

इन दोनों समाजों के बीच बढ़ता अंतर हनुमानगढ़ के विकास मॉडल को समझने के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। विकास के असमान पैटर्न न केवल सामाजिक विभाजन को गहरा करते हैं बल्कि संसाधनों के संतुलित वितरण, प्रशासनिक निर्णयों, शैक्षिक योजनाओं और स्वास्थ्य सुविधाओं के निर्माण में भी चुनौतियाँ पैदा करते हैं। इसी कारण समग्र जनसंख्या अध्ययन यह स्पष्ट कर सकता है कि किन क्षेत्रों में विकास अपेक्षाकृत अधिक या कम हुआ है तथा किन कारणों से यह असमानता उत्पन्न हुई है।

इसके अतिरिक्त, प्रवासन हनुमानगढ़ के जनसांख्यिकीय स्वरूप को प्रभावित करने वाला एक बड़ा कारक है। सीमावर्ती स्थिति, कृषि–आधारित आर्थिक संरचना और पंजाब–हरियाणा की निकटता के कारण यह क्षेत्र लगातार बाहरी श्रमिकों को आकर्षित करता है। दूसरी ओर, जिले के कई युवा शिक्षा और रोजगार के लिए महानगरों की ओर प्रवास कर रहे हैं। इससे एक ओर ग्रामीण क्षेत्रों में श्रम शक्ति में कमी आती है, वहीं शहरी क्षेत्रों में जनसंख्या दबाव बढ़ता है। प्रवासन का यह द्विपक्षीय स्वरूप अध्ययन को और अधिक महत्त्वपूर्ण बनाता है। सामाजिक संरचना में भी उल्लेखनीय परिवर्तन देखे जा रहे हैं। शिक्षा के प्रसार, संचार सुविधाओं, वैश्वीकरण और शहरी संस्कृति के प्रभाव से सामाजिक व्यवहार, पारिवारिक संस्थाएँ, विवाह संबंध, महिलाओं की भूमिका, निर्णय प्रक्रिया और सामुदायिक सहयोग की परंपराएँ परिवर्तनशील हो गई हैं। यह परिवर्तन ग्रामीण समाज में धीरे–धीरे और शहरी समाज में तीव्र गति से दिखाई देता है। इन दोनों समाजों के परिवर्तनों का तुलनात्मक अध्ययन यह दर्शाता है कि सामाजिक संक्रमण किन दिशा में आगे बढ़ रहा है।

आर्थिक संदर्भ में देखा जाए तो कृषि, पशुपालन, लघु उद्योग, व्यापार, सेवा क्षेत्र और सरकारी नौकरियों की उपलब्धता ने ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के आर्थिक स्वरूप को पुनर्संगठित कर दिया है। ग्रामीण क्षेत्रों में जहाँ

परंपरागत पेशे अब भी मजबूत हैं, वहीं शहरों में व्यावसायिक विविधता, निजी क्षेत्र का विस्तार और तकनीकी व्यवसाय तेजी से उभर रहे हैं। यह आर्थिक विविधता जनसंख्या की गतिशीलता, आय स्तर, उपभोग पैटर्न और जीवनशैली को प्रभावित करती है।

इन समस्त पहलुओं को मिलाकर देखा जाए तो हनुमानगढ़ जिला सामाजिक, आर्थिक और जनसांख्यिकीय दृष्टि से परिवर्तनशील अवस्था में है। इस परिवर्तन को सही ढंग से समझे बिना न तो जिला–स्तरीय योजना प्रभावी हो सकती है और न ही क्षेत्र के समग्र विकास का आकलन किया जा सकता है। इसी कारण इस अध्ययन का उद्देश्य केवल ग्रामीण–नगरीय अंतर को उजागर करना नहीं है, बल्कि इन अंतरों के मूल सामाजिक, आर्थिक, पर्यावरणीय और ऐतिहासिक कारणों की पहचान करना भी है।

लिंगानुपात के मामले में भी ग्रामीण क्षेत्रों में असंतुलन अधिक पाया गया, जबकि नगरीय क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधाओं एवं शिक्षा जागरूकता के चलते स्थिति बेहतर है। आर्थिक दृष्टि से ग्रामीण क्षेत्र मुख्यतः कृषि और मजदूरी पर निर्भर हैं, जबकि नगरीय क्षेत्र व्यापार, सेवा क्षेत्र और उद्योगों पर आधारित हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाएँ सीमित हैं, जिसके कारण प्रसूति मृत्यु दर और शिशु मृत्यु दर अपेक्षाकृत अधिक है।

अध्ययन में यह पाया गया कि शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, डिजिटल सुविधाओं और सामाजिक परिवेश का प्रत्यक्ष प्रभाव ग्रामीण–नगरीय असमानताओं पर पड़ता है। साक्षरता में सुधार, महिला शिक्षा को प्रोत्साहन, स्कूल सुविधाओं का विस्तार, डिजिटल शिक्षा, कौशल विकास, स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता और ग्रामीण अर्थव्यवस्था में विविधीकरण इन असमानताओं को कम करने के महत्वपूर्ण उपाय माने गए हैं।

समग्र रूप से, हनुमानगढ़ जिले में ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों के बीच साक्षरता, स्वास्थ्य, आर्थिक अवसरों और सामाजिक प्रगति में स्पष्ट अंतर है। योजनाबद्ध नीति, स्थानीय सहभागिता और शिक्षादृस्वास्थ्य अवसंरचना को सशक्त कर ग्रामीण क्षेत्रों को नगरीय विकास की धारा से जोड़ना इस अध्ययन का प्रमुख निष्कर्ष है।

शोध विधि :-

- शोध कार्य हेतु प्राथमिक व द्वितीयक आंकड़ों का प्रयोग किया गया है।
- अध्ययन क्षेत्र में जनसंख्या से संबंधित ग्रामीण व शहरी जनसंख्या की संरचना के आँकड़े राजस्थान जनगणना 2011 से लिया गया है।
- प्राथमिक आंकड़ों का संग्रहण व्यक्तिगत प्रेक्षण, अनुसूची व प्रश्नावली विधियों से किया गया है। आंकड़ों के चयन हेतु ईकाई जिला है तथा जिलों से कुछ गाँवों का चयन स्तरीय याद्च्छिक प्रतिचयन विधि से किया गया है।

सारांश –

मानव सभ्यता के इतिहास में जनांकिकीय विश्लेषण समाज के विकास, परिवर्तनशीलता और संसाधनों की उपलब्धता को समझने का प्रमुख आधार रहा है। किसी भी क्षेत्र की सामाजिक संरचना को समझने के लिए वहाँ की जनसंख्या, उसके वितरण, लिंग अनुपात, साक्षरता स्तर, आयु संरचना, प्रवासन पैटर्न और आर्थिक सक्रियता का अध्ययन अपरिहार्य माना जाता है। इन तत्वों के मध्य गहन संबंध समाज के विकास की गति निर्धारित करते हैं।

हनुमानगढ़ जिला, जो भौगोलिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विविधता से समृद्ध है, ग्रामीण और नगरीय

दोनों प्रकार की जनांकिकीय विशेषताओं का मिश्रण प्रस्तुत करता है। यह जिले को एक विशिष्ट अध्ययन क्षेत्र के रूप में स्थापित करता है, जहाँ ग्रामीण–नगरीय असमानताएँ स्पष्ट दिखाई देती हैं। इन असमानताओं के पीछे ऐतिहासिक परिवर्तन, भौतिक परिस्थिति, आर्थिक आधार, सामाजिक संरचना और सरकारी नीतियों के मिश्रित प्रभाव कार्यरत हैं।

जनसांख्यिकी किसी समाज के आर्थिक–सामाजिक स्वास्थ्य का दर्पण होती है। हनुमानगढ़ जिले में ग्रामीण–नगरीय जनसंख्या के बीच दशकों से चला आ रहा असंतुलन कई स्तरों पर परिणाम उत्पन्न कर रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि–प्रधान जीवन, सीमित संसाधन, कम शैक्षणिक अवसर तथा सामाजिक दृष्टिकोण विकास को प्रभावित करते हैं, जबकि नगरीय क्षेत्रों में सेवाक्षेत्र, व्यापारिक गतिविधियों और शैक्षणिक संस्थानों की बहुलता जनसंख्या की संरचना और व्यवहार को बदल देती है।

इन भिन्नताओं को समझे बिना नीति–निर्माण या सामाजिक विकास योजनाएँ प्रभावी नहीं हो सकतीं। यही कारण है कि ग्रामीण–नगरीय जनांकिकीय विश्लेषण प्रत्येक स्तर पर निर्णायक भूमिका निभाता है।

इस शोध में जिले की जनसंख्या वृद्धि, लिंग अनुपात, साक्षरता, स्वास्थ्य, रोजगार, सांस्कृतिक मानकों तथा प्रवासन की प्रवृत्तियों को पृथक–पृथक और तुलनात्मक रूप से समझने का प्रयास किया गया है। इन सभी तत्वों का गहराई से अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों की आवश्यकताएँ, समस्याएँ और विकास की दिशा समान नहीं है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. मौर्य, एस. डी. (2018) : मानव भूगोल, शारदा पुस्तक भवन पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश).
2. शर्मा, एच. एस. और शर्मा एम. एल. (2019) : 'राजस्थान का भूगोल' पंचशील प्रकाशन, जयपुर (राजस्थान), पेज संख्या–420–431.
3. सिंह, बी. एन. एवं सिंह मनीष कुमार (2016) : ''मानव भूगोल का स्वरूप'' प्रवालिका पब्लिकेशन्स 11/10, यूनिवर्सिटी रोड, इलाहाबाद – (यू.पी.)
4. सक्सैना, एच. एम. (2018) : ''राजस्थान का भूगोल'' राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, प्लॉट नं. 1, झालाना सांस्थानिक क्षेत्र, जयपुर (राज.)
5. बंसल सुरेश चन्द्र (2015–16): ''नगरीय भूगोल'' मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ (उत्तर प्रदेश), पेज सं.–316–317.
6. तिवारी, आर. सी. (2014): ''अधिवास भूगोल'' प्रवालिका पब्लिकेशन्स, 11/10, यूनिवर्सिटी रोड़, इलाहाबाद (यू.पी.).
7. तिवारी, आर. सी. (2015) : ''भारत का भूगोल'' प्रवालिका पब्लिकेशन्स, 11/10 यूनिवर्सिटी रोड़, इलाहाबाद (यू.पी.)।
8. मौर्य, एस. डी. (2018) : ''जनसंख्या भूगोल'' शारदा पुस्तक भवन, पब्लिशर्स एवं डिस्ट्रीब्यूटर्स, इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश)।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 15-23

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

प्राचीन हिन्दू शिक्षा पद्धति (गुरूकुल व्यवस्था) एवं आधुनिक शिक्षा प्रणाली का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. रवि देव 'कर्मयोगी'

पूर्व ए. एम.एच. डी. एस. एस. सी रक्षा मंत्रालय, भारत सरकार।

प्रदेश सह संयोजक, शिक्षक प्रकोष्ठ, भारतीय जनता पार्टी, दिल्ली।

सारांश :

गुरुकुल व्यवस्था भारतीय शिक्षा परंपरा का एक महत्त्वपूर्ण अंग रही है, जिसका मूल उद्देश्य केवल ज्ञान प्रदान करना नहीं, बल्कि व्यक्तित्व निर्माण, चरित्र विकास, आत्मानुशासन तथा सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना विकसित करना था। प्राचीन हिन्दू शिक्षा पद्धति में गुरु–शिष्य संबंध, नैतिक शिक्षा, व्यावहारिक ज्ञान, आत्मनिर्भरता तथा आध्यात्मिक उन्नति पर विशेष बल दिया जाता था। दूसरी ओर आधुनिक शिक्षा प्रणाली विज्ञान, तकनीक, व्यावसायिक दक्षता, अनुसंधान, वैश्विक प्रतिस्पर्धा तथा रोजगारोन्मुखी ज्ञान पर आधारित है। वर्तमान समय में शिक्षा का उद्देश्य केवल जानकारी देना नहीं, बल्कि विद्यार्थियों को बदलती दुनिया के अनुरूप सक्षम बनाना भी है। प्रस्तुत शोध–पत्र में प्राचीन हिन्दू शिक्षा पद्धति एवं आधुनिक शिक्षा प्रणाली का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। साथ ही यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि दोनों प्रणालियों के गुणों का समन्वय कर एक संतुलित एवं प्रभावी शिक्षा व्यवस्था विकसित की जा सकती है।

प्रस्तावना :

भारत प्राचीन काल से ज्ञान, दर्शन, शिक्षा एवं संस्कृति का केंद्र रहा है। भारतीय सभ्यता में शिक्षा को केवल जीविका प्राप्ति का साधन नहीं माना गया, बल्कि इसे मानव जीवन के सर्वांगीण विकास का माध्यम समझा गया। प्राचीन हिन्दू समाज में शिक्षा का प्रमुख स्वरूप गुरुकुल व्यवस्था था, जहाँ विद्यार्थी गुरु के सान्निध्य में रहकर ज्ञान, अनुशासन, नैतिकता, व्यवहार–कौशल तथा जीवनोपयोगी शिक्षाएँ प्राप्त करते थे।

गुरुकुल व्यवस्था का आधार आत्मसंयम, सेवा, श्रम, समर्पण तथा ज्ञानार्जन था। इसमें शिक्षा का उद्देश्य केवल बौद्धिक विकास नहीं, बल्कि शारीरिक, मानसिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक उन्नति भी था। विद्यार्थी प्रकृति के समीप रहकर सादा जीवन और उच्च विचार की भावना सीखते थे।

आधुनिक युग में शिक्षा प्रणाली में व्यापक परिवर्तन हुए हैं। विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय, तकनीकी संस्थान तथा डिजिटल शिक्षा मंचों के माध्यम से शिक्षा का प्रसार हुआ है। आधुनिक शिक्षा विज्ञान, तकनीक, व्यावसायिक दक्षता, अनुसंधान तथा वैश्विक दृष्टिकोण पर आधारित है। यह प्रणाली रोजगार, नवाचार

तथा सामाजिक प्रगति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

फिर भी वर्तमान समय में शिक्षा के क्षेत्र में नैतिकता की कमी, अत्यधिक प्रतिस्पर्धा, तनाव, परीक्षा–केंद्रित दृष्टिकोण तथा व्यक्तित्व विकास की उपेक्षा जैसी समस्याएँ दिखाई देती हैं। ऐसे में प्राचीन गुरुकुल व्यवस्था एवं आधुनिक शिक्षा प्रणाली का तुलनात्मक अध्ययन अत्यंत आवश्यक हो जाता है।

अध्ययन के उद्देश्य :

प्रस्तुत शोध–पत्र का मुख्य उद्देश्य गुरुकुल व्यवस्था तथा आधुनिक शिक्षा प्रणाली का सम्यक् एवं तुलनात्मक अध्ययन करना है। शिक्षा किसी भी समाज की उन्नति, सांस्कृतिक निरंतरता तथा राष्ट्रीय विकास का मूल आधार होती है। प्रत्येक युग में शिक्षा की पद्धति उस समय की सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं बौद्धिक आवश्यकताओं के अनुसार विकसित होती रही है। प्राचीन भारत में गुरुकुल व्यवस्था ने नैतिक, आध्यात्मिक एवं व्यावहारिक शिक्षा का आदर्श प्रस्तुत किया, जबकि आधुनिक शिक्षा प्रणाली विज्ञान, तकनीक, अनुसंधान एवं वैश्विक प्रतिस्पर्धा पर आधारित है। वर्तमान समय में शिक्षा के क्षेत्र में अनेक चुनौतियाँ विद्यमान हैं, जैसे नैतिक मूल्यों का ह्रास, परीक्षा–केंद्रित दृष्टिकोण, तनाव, बेरोजगारी तथा व्यक्तित्व विकास की कमी। ऐसी स्थिति में प्राचीन एवं आधुनिक दोनों शिक्षा प्रणालियों के गुण–दोषों का अध्ययन अत्यंत आवश्यक हो जाता है। इसी संदर्भ में इस शोध–पत्र के उद्देश्य निम्नलिखित हैं :

1. **प्राचीन हिन्दू शिक्षा पद्धति (गुरूकुल व्यवस्था) का अध्ययन करना :**

इस शोध का प्रथम उद्देश्य प्राचीन हिन्दू शिक्षा पद्धति अर्थात गुरुकुल व्यवस्था के स्वरूप, सिद्धांतों एवं उद्देश्यों का अध्ययन करना है। गुरुकुल व्यवस्था भारतीय ज्ञान परंपरा की आधारशिला रही है, जिसमें विद्यार्थी गुरु के सान्निध्य में रहकर ज्ञान, अनुशासन, सेवा, आत्मसंयम, नैतिकता तथा जीवनोपयोगी शिक्षाएँ प्राप्त करते थे। इस उद्देश्य के अंतर्गत यह समझने का प्रयास किया जाएगा कि गुरुकुल प्रणाली किस प्रकार व्यक्तित्व निर्माण एवं सामाजिक उत्तरदायित्व के विकास में सहायक थी।

2. **आधुनिक शिक्षा प्रणाली की प्रमुख विशेषताओं का विश्लेषण करना :**

द्वितीय उद्देश्य आधुनिक शिक्षा प्रणाली की प्रमुख विशेषताओं का विश्लेषण करना है। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों तथा तकनीकी संस्थानों पर आधारित है। इसमें विज्ञान, तकनीक, व्यावसायिक दक्षता, अनुसंधान, नवाचार तथा रोजगारोन्मुख शिक्षा पर विशेष बल दिया जाता है। इस अध्ययन के माध्यम से आधुनिक शिक्षा प्रणाली की संरचना, उद्देश्यों, पाठ्यक्रम, मूल्यांकन प्रणाली तथा सामाजिक उपयोगिता का विश्लेषण किया जाएगा।

3. **दोनों शिक्षा प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन करना :**

तृतीय उद्देश्य प्राचीन गुरुकुल व्यवस्था एवं आधुनिक शिक्षा प्रणाली का तुलनात्मक अध्ययन करना है। दोनों व्यवस्थाओं के उद्देश्य, शिक्षण पद्धति, शिक्षक–विद्यार्थी संबंध, अनुशासन, मूल्यांकन प्रणाली, नैतिक शिक्षा, ज्ञान के स्वरूप तथा सामाजिक उपयोगिता की तुलना की जाएगी। इस अध्ययन से यह स्पष्ट होगा कि दोनों प्रणालियों में कौन–कौन से गुण एवं सीमाएँ विद्यमान हैं तथा वर्तमान समय में किन तत्वों को अपनाया जा सकता है।

4. **आधुनिक समय में गुरूकुल व्यवस्था की उपयोगिता को समझना :**

चतुर्थ उद्देश्य यह जानना है कि आधुनिक समय में गुरुकुल व्यवस्था के कौन–कौन से सिद्धांत उपयोगी

हो सकते हैं। आज के युग में विद्यार्थियों में तनाव, अनुशासनहीनता, नैतिक संकट तथा शिक्षक–विद्यार्थी दूरी जैसी समस्याएँ दिखाई देती हैं। गुरुकुल व्यवस्था के तत्व जैसे गुरु का मार्गदर्शन, आत्मसंयम, योग, ध्यान, चरित्र निर्माण, प्रकृति के निकट जीवन तथा व्यावहारिक शिक्षा आधुनिक समाज के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। इस उद्देश्य के अंतर्गत इनकी समकालीन प्रासंगिकता पर विचार किया जाएगा।

5. संतुलित शिक्षा प्रणाली हेतु सुझाव प्रस्तुत करना :

पंचम उद्देश्य ऐसी संतुलित शिक्षा प्रणाली के लिए सुझाव प्रस्तुत करना है, जिसमें प्राचीन भारतीय शिक्षा के नैतिक एवं मानवीय मूल्य तथा आधुनिक शिक्षा के वैज्ञानिक एवं तकनीकी गुण दोनों सम्मिलित हों। वर्तमान समय की आवश्यकता ऐसी शिक्षा है जो केवल डिग्री प्रदान न करे, बल्कि विद्यार्थियों को ज्ञानवान, संस्कारी, आत्मनिर्भर, नवाचारी एवं उत्तरदायी नागरिक बनाए। इस शोध के माध्यम से समन्वित शिक्षा मॉडल की दिशा में विचार प्रस्तुत किए जाएँगे।

6. व्यक्तित्व विकास एवं राष्ट्रनिर्माण के संदर्भ में अध्ययन :

इस शोध का एक अन्य उद्देश्य यह भी है कि शिक्षा प्रणाली का व्यक्ति एवं राष्ट्र के विकास में क्या योगदान है, इसका अध्ययन किया जाए। प्राचीन शिक्षा जहाँ चरित्रवान नागरिक तैयार करती थी, वहीं आधुनिक शिक्षा तकनीकी दक्ष मानव संसाधन विकसित करती है। दोनों का समन्वय राष्ट्रनिर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

प्राचीन हिन्दू शिक्षा पद्धति (गुरूकुल व्यवस्था) :

गुरुकुल व्यवस्था भारतीय ज्ञान परंपरा की एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण एवं आदर्श शिक्षा प्रणाली थी। प्राचीन हिन्दू समाज में शिक्षा को केवल रोजगार प्राप्ति का साधन नहीं माना जाता था, बल्कि इसे मनुष्य के सर्वांगीण विकास, चरित्र निर्माण, आत्मबोध तथा समाजोपयोगी जीवन की तैयारी का माध्यम समझा जाता था। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए गुरुकुल व्यवस्था का विकास हुआ, जिसमें विद्यार्थी गुरु के आश्रम में निवास कर शिक्षा ग्रहण करते थे। यह प्रणाली केवल बौद्धिक शिक्षा तक सीमित नहीं थी, बल्कि जीवन के व्यवहारिक, नैतिक, सामाजिक, शारीरिक एवं आध्यात्मिक दोनों पक्षों पर समान रूप से आधारित थी।

गुरुकुल व्यवस्था का सबसे प्रमुख आधार गुरु और शिष्य के मध्य घनिष्ठ, आत्मीय एवं श्रद्धापूर्ण संबंध था। गुरु केवल शिक्षक नहीं होते थे, बल्कि मार्गदर्शक, संरक्षक, प्रेरक एवं आदर्श जीवन के प्रतीक माने जाते थे। विद्यार्थी गुरु के सान्निध्य में रहकर केवल विषय ज्ञान ही नहीं, बल्कि जीवन मूल्यों, सदाचार, अनुशासन तथा कर्तव्यपरायणता की शिक्षा भी प्राप्त करते थे। गुरु शिष्य के व्यक्तित्व, रुचि, क्षमता एवं व्यवहार को समझकर उसे उपयुक्त मार्गदर्शन प्रदान करते थे। इस प्रकार शिक्षा व्यक्तिगत एवं जीवन–केंद्रित होती थी।

इस शिक्षा पद्धति में निरूस्वार्थ ज्ञानदान की परंपरा विद्यमान थी। गुरु ज्ञान को व्यापार का साधन नहीं मानते थे, बल्कि समाज कल्याण एवं धर्मपालन का माध्यम समझते थे। विद्यार्थी भी शिक्षा को सम्मानपूर्वक ग्रहण करते थे और गुरु के प्रति श्रद्धा, सेवा तथा समर्पण का भाव रखते थे। शिक्षा का उद्देश्य धनार्जन नहीं, बल्कि ज्ञानार्जन और आत्मविकास था।

गुरुकुल व्यवस्था में चरित्र निर्माण पर विशेष बल दिया जाता था। यह माना जाता था कि केवल विद्वान होना पर्याप्त नहीं है, बल्कि नैतिक, सत्यनिष्ठ, संयमी एवं उत्तरदायी व्यक्ति बनना भी आवश्यक है। इसलिए विद्यार्थियों को सत्यवादिता, ईमानदारी, सेवा भावना, विनम्रता, धैर्य, करुणा तथा आत्मसंयम जैसे गुणों का अभ्यास

कराया जाता था। आज के संदर्भ में यह प्रणाली मूल्यपरक शिक्षा का उत्कृष्ट उदाहरण है।

अनुशासन एवं आत्मसंयम गुरुकुल जीवन के अनिवार्य अंग थे। विद्यार्थियों का दैनिक जीवन निश्चित समय–सारणी के अनुसार चलता था। प्रातःकाल उठना, स्नान, ध्यान, यज्ञ, अध्ययन, शारीरिक श्रम, सेवा कार्य तथा सायंकालीन प्रार्थना जैसी गतिविधियाँ नियमित रूप से कराई जाती थीं। इससे उनमें समयबद्धता, आत्मनियंत्रण, परिश्रम तथा संतुलित जीवनशैली का विकास होता था।

पाठ्यक्रम की दृष्टि से गुरुकुल व्यवस्था अत्यंत समृद्ध थी। इसमें वेद, उपनिषद, व्याकरण, गणित, ज्योतिष, आयुर्वेद, दर्शन, नीति, शास्त्र, इतिहास, युद्धकला तथा संगीत आदि विषयों का अध्ययन कराया जाता था। शिक्षा केवल सैद्धांतिक नहीं थी, बल्कि व्यावहारिक ज्ञान एवं जीवन कौशल से भी जुड़ी होती थी। इस प्रकार विद्यार्थी ज्ञान के विविध क्षेत्रों से परिचित होते थे।

गुरुकुल व्यवस्था में श्रम, सेवा एवं आत्मनिर्भरता को अत्यधिक महत्त्व दिया जाता था। विद्यार्थी आश्रम के दैनिक कार्यों में भाग लेते थे, जैसे जल लाना, भोजन व्यवस्था में सहयोग करना, स्वच्छता रखना, पशुपालन, ईंधन संग्रह तथा अन्य आवश्यक कार्य करना। इससे उनमें श्रम की गरिमा, सहयोग की भावना तथा आत्मनिर्भर जीवन दृष्टि विकसित होती थी। यह शिक्षा व्यक्ति को केवल ज्ञानी ही नहीं, कर्मठ भी बनाती थी।

प्रकृति के निकट शिक्षा गुरुकुल प्रणाली की एक विशिष्ट विशेषता थी। अधिकांश गुरुकुल वन, नदी तट या शांत प्राकृतिक वातावरण में स्थित होते थे। प्राकृतिक परिवेश में अध्ययन करने से विद्यार्थियों में मानसिक शांति, एकाग्रता, स्वास्थ्य तथा पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता का विकास होता था। प्रकृति को भी एक शिक्षक के रूप में देखा जाता था।

इस व्यवस्था में विद्यार्थी केवल पुस्तक ज्ञान प्राप्त नहीं करते थे, बल्कि जीवन जीने की कला भी सीखते थे। वे सामाजिक व्यवहार, संवाद कौशल, संकटों का सामना, निर्णय क्षमता, नेतृत्व गुण तथा संतुलित जीवन पद्धति का अभ्यास करते थे। इसलिए गुरुकुल से निकला विद्यार्थी समाज के लिए उपयोगी, संस्कारी एवं उत्तरदायी नागरिक बनता था।

अतः स्पष्ट है कि प्राचीन हिन्दू शिक्षा पद्धति (गुरुकुल व्यवस्था) केवल शिक्षण प्रणाली नहीं थी, बल्कि व्यक्तित्व निर्माण, नैतिक विकास, सामाजिक उत्तरदायित्व तथा आध्यात्मिक उन्नति पर आधारित समग्र शिक्षा व्यवस्था थी। वर्तमान समय में भी इसके अनेक सिद्धांत शिक्षा जगत के लिए प्रेरणास्रोत हैं।

आधुनिक शिक्षा प्रणाली :

आधुनिक शिक्षा प्रणाली वर्तमान युग की आवश्यकताओं, सामाजिक परिवर्तनों, वैज्ञानिक प्रगति तथा वैश्विक प्रतिस्पर्धा को ध्यान में रखकर विकसित की गई एक संगठित एवं व्यवस्थित शिक्षा व्यवस्था है। यह प्रणाली संस्थागत, संरचित एवं विषय–विशेषज्ञता पर आधारित है, जिसमें निर्धारित पाठ्यक्रम, कक्षाओं, परीक्षाओं तथा प्रमाणपत्रों के माध्यम से विद्यार्थियों को शिक्षा प्रदान की जाती है। वर्तमान समय में विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों, तकनीकी संस्थानों, व्यावसायिक प्रशिक्षण केंद्रों तथा डिजिटल मंचों के माध्यम से शिक्षा का व्यापक प्रसार हुआ है। इस शिक्षा प्रणाली का उद्देश्य विद्यार्थियों को ज्ञान, कौशल, तकनीकी दक्षता तथा रोजगार के लिए सक्षम बनाना है।

आधुनिक शिक्षा प्रणाली की एक प्रमुख विशेषता विज्ञान एवं तकनीक आधारित शिक्षा है। आज का युग

विज्ञान, सूचना प्रौद्योगिकी, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, संचार क्रांति तथा तकनीकी नवाचार का युग है। इसलिए आधुनिक शिक्षा में गणित, विज्ञान, कंप्यूटर, इंजीनियरिंग, चिकित्सा, प्रबंधन तथा तकनीकी विषयों को विशेष महत्त्व दिया जाता है। इससे विद्यार्थी आधुनिक समाज की चुनौतियों का सामना करने तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने में सक्षम बनते हैं।

इस प्रणाली की दूसरी महत्त्वपूर्ण विशेषता व्यावसायिक एवं रोजगारोन्मुख पाठ्यक्रम हैं। वर्तमान समय में शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य विद्यार्थियों को आत्मनिर्भर बनाना तथा उन्हें रोजगार योग्य बनाना है। इसलिए आधुनिक शिक्षा में प्रबंधन, सूचना प्रौद्योगिकी, बैंकिंग, कानून, चिकित्सा, शिक्षक प्रशिक्षण, पत्रकारिता, डिजाइन, कृषि विज्ञान तथा अन्य व्यावसायिक पाठ्यक्रमों को सम्मिलित किया गया है। इससे विद्यार्थी अपनी रुचि एवं योग्यता के अनुसार करियर का चयन कर सकते हैं।

अनुसंधान एवं नवाचार पर बल आधुनिक शिक्षा प्रणाली की एक अन्य विशेषता है। विश्वविद्यालयों एवं उच्च शिक्षण संस्थानों में शोध, प्रयोग, आविष्कार तथा नवीन ज्ञान के सृजन को प्रोत्साहित किया जाता है। विज्ञान, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, चिकित्सा तथा तकनीकी क्षेत्रों में निरंतर अनुसंधान के कारण समाज का विकास संभव हुआ है। यह प्रणाली विद्यार्थियों में तार्किक चिंतन, समस्या समाधान क्षमता तथा सृजनात्मक दृष्टि विकसित करती है।

बड़े स्तर पर शिक्षा का प्रसार आधुनिक शिक्षा की उल्लेखनीय उपलब्धि है। प्राचीन समय में शिक्षा सीमित वर्ग तक उपलब्ध थी, जबकि आज प्राथमिक स्तर से उच्च शिक्षा तक लाखों–करोड़ों विद्यार्थियों को शिक्षा प्राप्त करने का अवसर उपलब्ध है। सरकारी योजनाओं, विद्यालयों, छात्रवृत्तियों तथा दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से समाज के विभिन्न वर्गों तक शिक्षा पहुँचाई जा रही है। इससे साक्षरता, सामाजिक जागरूकता तथा आर्थिक उन्नति में वृद्धि हुई है।

डिजिटल शिक्षा एवं ई–लर्निंग आधुनिक युग की विशेष देन है। इंटरनेट, स्मार्टफोन, कंप्यूटर, ऑनलाइन कक्षाओं, वीडियो व्याख्यानों तथा डिजिटल पुस्तकालयों के माध्यम से शिक्षा अधिक सुलभ एवं लचीली हुई है। विद्यार्थी अब घर बैठे विश्वस्तरीय ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। विशेष रूप से महामारी के समय ऑनलाइन शिक्षा ने शिक्षा व्यवस्था को निरंतर बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

परीक्षा एवं प्रमाणपत्र आधारित मूल्यांकन आधुनिक शिक्षा प्रणाली का एक महत्त्वपूर्ण भाग है। विद्यार्थियों के ज्ञान, कौशल तथा उपलब्धियों का मूल्यांकन परीक्षाओं, परियोजनाओं, साक्षात्कारों तथा प्रमाणपत्रों के माध्यम से किया जाता है। यह प्रणाली योग्यता के आधार पर चयन एवं अवसर प्रदान करने में सहायक होती है। हालांकि कभी–कभी अत्यधिक परीक्षा–केंद्रित दृष्टिकोण विद्यार्थियों पर मानसिक दबाव भी उत्पन्न करता है।

वैश्विक प्रतिस्पर्धा के अनुरूप पाठ्यक्रम भी आधुनिक शिक्षा की एक विशेषता है। आज का संसार वैश्विक संपर्क, अंतरराष्ट्रीय व्यापार तथा तकनीकी सहयोग का युग है। इसलिए आधुनिक पाठ्यक्रमों में भाषा कौशल, संचार क्षमता, तकनीकी ज्ञान, प्रबंधन कौशल तथा अंतरराष्ट्रीय मानकों को सम्मिलित किया जाता है। इससे विद्यार्थी राष्ट्रीय ही नहीं, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी अवसर प्राप्त कर सकते हैं।

आधुनिक शिक्षा प्रणाली सामाजिक परिवर्तन का भी प्रभावी माध्यम है। इसने महिलाओं, वंचित वर्गों, ग्रामीण क्षेत्रों तथा आर्थिक रूप से कमजोर समुदायों को शिक्षा से जोड़कर समान अवसर प्रदान किए हैं। शिक्षा के माध्यम

से लोकतांत्रिक चेतना, मानवाधिकारों की समझ, सामाजिक समानता तथा नागरिक उत्तरदायित्व की भावना का विकास हुआ है।

यद्यपि आधुनिक शिक्षा प्रणाली अत्यंत उपयोगी एवं प्रगतिशील है, तथापि इसमें कुछ चुनौतियाँ भी हैं, जैसे अत्यधिक प्रतिस्पर्धा, नैतिक शिक्षा की कमी, व्यावसायीकरण, तनाव, रोजगार असंतुलन तथा शिक्षक–विद्यार्थी संबंधों में औपचारिकता। फिर भी यह प्रणाली वर्तमान समय की आवश्यकताओं के अनुसार समाज को शिक्षित, प्रशिक्षित एवं सक्षम बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

अतः स्पष्ट है कि आधुनिक शिक्षा प्रणाली आधुनिक समाज की आवश्यकताओं के अनुसार विद्यार्थियों को तैयार करती है। यह ज्ञान, कौशल, तकनीकी दक्षता, अनुसंधान क्षमता तथा व्यावसायिक अवसर प्रदान कर व्यक्ति और राष्ट्र दोनों के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान देती है।

तुलनात्मक अध्ययन :

प्राचीन गुरुकुल व्यवस्था तथा आधुनिक शिक्षा प्रणाली दोनों का उद्देश्य समाज को शिक्षित एवं विकसित करना है, किन्तु उनकी कार्यप्रणाली, दृष्टिकोण, संरचना तथा शिक्षण पद्धति में पर्याप्त अंतर दिखाई देता है। गुरुकुल व्यवस्था जीवन मूल्यों, नैतिकता, अनुशासन तथा व्यक्तित्व निर्माण पर आधारित थी, जबकि आधुनिक शिक्षा प्रणाली विज्ञान, तकनीक, व्यावसायिक दक्षता तथा वैश्विक प्रतिस्पर्धा के अनुरूप विकसित हुई है। दोनों प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन निम्नलिखित सारणी द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है :–

आधार	**गुरूकुल व्यवस्था**	**आधुनिक शिक्षा प्रणाली**
उद्देश्य	व्यक्तित्व निर्माण, चरित्र विकास, नैतिकता एवं जीवनोपयोगी ज्ञान प्रदान करना	ज्ञानार्जन, रोजगार, तकनीकी दक्षता एवं व्यावसायिक विकास
शिक्षक–विद्यार्थी संबंध	पारिवारिक, आत्मीय, निकट एवं मार्गदर्शक स्वरूप	औपचारिक, सीमित एवं संस्थागत संबंध
शिक्षा का स्वरूप	जीवनोपयोगी, नैतिक, आध्यात्मिक एवं व्यवहारिक	विषय–केंद्रित, तकनीकी, वैज्ञानिक एवं करियर आधारित
निवास व्यवस्था	गुरु के आश्रम में निवास कर अध्ययन	विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय अथवा ऑनलाइन माध्यम
पाठ्यक्रम	वेद, उपनिषद, व्याकरण, गणित, दर्शन, नीति, शास्त्र आदि	विज्ञान, गणित, तकनीक, प्रबंधन, चिकित्सा, कला, वाणिज्य आदि
मूल्यांकन पद्धति	व्यवहार, ज्ञान, अनुशासन एवं जीवन–कौशल के आधार पर	परीक्षा, अंक, ग्रेड, प्रमाणपत्र एवं प्रतियोगिता आधारित
अनुशासन	आत्मानुशासन, संयम एवं आंतरिक नियंत्रण	संस्थागत नियम, समय–सारणी एवं प्रशासनिक नियंत्रण

तकनीकी उपयोग	नहीं अथवा अत्यंत सीमित	अत्यधिक, जैसे कंप्यूटर, इंटरनेट, स्मार्ट कक्षाएँ
शिक्षा का उद्देश्य	आदर्श नागरिक एवं संस्कारी व्यक्तित्व निर्माण	कुशल, रोजगार योग्य एवं प्रतिस्पर्धी मानव संसाधन निर्माण
जीवन शैली	सादा जीवन, उच्च विचार, प्रकृति के निकट	आधुनिक जीवनशैली, शहरीकरण एवं तकनीकी वातावरण
सामाजिक पहुँच	सीमित एवं चयनित वर्ग तक	व्यापक, सर्वसुलभ एवं जनसामान्य तक पहुँच
मानसिक विकास	ध्यान, योग, संयम एवं आंतरिक शांति	विश्लेषणात्मक सोच, नवाचार एवं समस्या समाधान क्षमता

विश्लेषणात्मक टिप्पणी :

उपर्युक्त तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट है कि गुरुकुल व्यवस्था मानवीय मूल्यों, आत्मिक उन्नति तथा नैतिक विकास पर अधिक केंद्रित थी, जबकि आधुनिक शिक्षा प्रणाली व्यावहारिक ज्ञान, वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा आर्थिक आत्मनिर्भरता को प्राथमिकता देती है। गुरुकुल में विद्यार्थी जीवन जीने की कला सीखता था, जबकि आधुनिक शिक्षा में विद्यार्थी पेशेवर जीवन के लिए तैयार होता है।

आज की आवश्यकता यह है कि दोनों प्रणालियों के श्रेष्ठ गुणों का समन्वय किया जाए। यदि आधुनिक शिक्षा में गुरुकुल के नैतिक मूल्य, अनुशासन, योग, ध्यान तथा चरित्र निर्माण के तत्व जोड़े जाएँ, तो शिक्षा अधिक संतुलित, प्रभावी एवं समाजोपयोगी बन सकती है।

आधुनिक समय में गुरूकुल व्यवस्था की प्रासंगिकता :

वर्तमान युग विज्ञान, तकनीक, वैश्वीकरण तथा तीव्र प्रतिस्पर्धा का युग है, जहाँ शिक्षा का स्वरूप निरंतर बदल रहा है। आधुनिक शिक्षा प्रणाली ने ज्ञान–विज्ञान, तकनीकी दक्षता, अनुसंधान तथा रोजगार के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है, किन्तु इसके साथ अनेक चुनौतियाँ भी सामने आई हैं, जैसे नैतिक मूल्यों का ह्रास, अत्यधिक प्रतिस्पर्धा, मानसिक तनाव, शिक्षक–विद्यार्थी संबंधों में औपचारिकता, अनुशासनहीनता तथा व्यक्तित्व विकास की उपेक्षा। ऐसी परिस्थितियों में गुरुकुल व्यवस्था के अनेक सिद्धांत आज भी अत्यंत प्रासंगिक एवं उपयोगी सिद्ध होते हैं।

गुरुकुल व्यवस्था की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता नैतिक शिक्षा थी। प्राचीन शिक्षा प्रणाली में सत्य, अहिंसा, विनम्रता, सेवा, कर्तव्यनिष्ठा, संयम तथा सदाचार जैसे मूल्यों को शिक्षा का अभिन्न अंग माना जाता था। वर्तमान समय में जब समाज अनेक नैतिक संकटों का सामना कर रहा है, तब विद्यार्थियों में ईमानदारी, जिम्मेदारी तथा मानवीय संवेदनाओं का विकास करने के लिए नैतिक शिक्षा की आवश्यकता अत्यंत बढ़ गई है। यदि आधुनिक शिक्षा में मूल्यपरक शिक्षा को समुचित स्थान दिया जाए, तो समाज अधिक संतुलित एवं उत्तरदायी बन सकता है।

चरित्र निर्माण भी गुरुकुल व्यवस्था का मूल उद्देश्य था। आज शिक्षा प्रायः डिग्री, अंक तथा रोजगार तक सीमित होती जा रही है, जबकि सच्ची शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को संस्कारी, आत्मविश्वासी, अनुशासित एवं उत्तरदायी नागरिक बनाना होना चाहिए। गुरुकुल परंपरा विद्यार्थियों के भीतर नेतृत्व क्षमता, आत्मविश्वास, सहनशीलता तथा सामाजिक उत्तरदायित्व विकसित करती थी। आधुनिक शिक्षा में भी इन गुणों का समावेश

आवश्यक है।

शिक्षक–विद्यार्थी संवाद गुरुकुल व्यवस्था की एक विशिष्ट विशेषता थी। गुरु और शिष्य के बीच केवल औपचारिक संबंध नहीं होता था, बल्कि वह आत्मीय, मार्गदर्शक एवं प्रेरणादायक होता था। वर्तमान समय में अनेक शिक्षण संस्थानों में शिक्षक और विद्यार्थी के संबंध सीमित एवं औपचारिक हो गए हैं। यदि आधुनिक शिक्षा में शिक्षक को केवल विषय अध्यापक न मानकर मार्गदर्शक एवं प्रेरक की भूमिका दी जाए, तो विद्यार्थियों के मानसिक, बौद्धिक एवं भावनात्मक विकास में सहायता मिलेगी।

अनुशासन एवं आत्मसंयम आज के विद्यार्थियों के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। गुरुकुल जीवन में नियमित दिनचर्या, समय पालन, श्रम, संयम तथा आत्मनियंत्रण पर बल दिया जाता था। वर्तमान समय में डिजिटल विचलन, असंतुलित जीवनशैली तथा समय प्रबंधन की समस्याएँ व्यापक हैं। ऐसे में गुरुकुल के अनुशासनात्मक सिद्धांत विद्यार्थियों को एकाग्रता, समयबद्धता तथा आत्मनियंत्रण सिखा सकते हैं।

योग एवं ध्यान गुरुकुल शिक्षा का महत्त्वपूर्ण अंग थे। आज की तनावपूर्ण जीवनशैली, परीक्षा दबाव तथा मानसिक असंतुलन की स्थिति में योग और ध्यान अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। योग शारीरिक स्वास्थ्य को सुदृढ़ करता है, जबकि ध्यान मानसिक शांति, एकाग्रता एवं भावनात्मक संतुलन प्रदान करता है। यदि विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में योग–ध्यान को नियमित रूप से सम्मिलित किया जाए, तो विद्यार्थियों का मानसिक स्वास्थ्य बेहतर हो सकता है।

प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता भी गुरुकुल व्यवस्था का विशेष पक्ष था। गुरुकुल प्रायः प्राकृतिक वातावरण में स्थित होते थे, जहाँ विद्यार्थी प्रकृति के निकट रहकर जीवन के संतुलन को समझते थे। आज पर्यावरण प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन तथा प्राकृतिक संसाधनों के संकट के समय विद्यार्थियों में पर्यावरण चेतना विकसित करना अत्यंत आवश्यक है। गुरुकुल के प्रकृति–सम्मत जीवन मूल्य आधुनिक शिक्षा के लिए प्रेरणादायक हो सकते हैं।

तनावमुक्त शिक्षा वातावरण गुरुकुल व्यवस्था की एक अन्य उपयोगी विशेषता थी। वहाँ शिक्षा प्रतियोगिता, अंक एवं अत्यधिक दबाव पर आधारित नहीं थी, बल्कि ज्ञान, आत्मविकास तथा जीवन कौशल पर केंद्रित थी। आज के विद्यार्थियों में परीक्षा तनाव, करियर चिंता तथा मानसिक दबाव बढ़ रहा है। यदि शिक्षा प्रणाली को संतुलित, सहयोगात्मक एवं प्रेरणात्मक बनाया जाए, तो विद्यार्थियों में तनाव कम किया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त गुरुकुल व्यवस्था में श्रम की गरिमा, आत्मनिर्भरता, सामूहिक जीवन, सेवा भावना तथा सामाजिक सहयोग जैसे गुण विकसित किए जाते थे। ये सभी गुण आज के समाज में भी उतने ही आवश्यक हैं जितने प्राचीन समय में थे।

अतः स्पष्ट है कि आधुनिक समय में गुरुकुल व्यवस्था की प्रासंगिकता केवल ऐतिहासिक नहीं, बल्कि व्यावहारिक एवं समकालीन है। यदि आधुनिक शिक्षा प्रणाली में गुरुकुल के नैतिक मूल्य, चरित्र निर्माण, योग, अनुशासन, प्रकृति प्रेम तथा शिक्षक–विद्यार्थी आत्मीय संबंधों को सम्मिलित किया जाए, तो विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास संभव है और शिक्षा अधिक मानवीय, संतुलित एवं प्रभावी बन सकती है।

निष्कर्ष :

उपर्युक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि प्राचीन हिन्दू शिक्षा पद्धति (गुरुकुल व्यवस्था) तथा आधुनिक शिक्षा

प्रणाली दोनों की अपनी–अपनी विशेषताएँ हैं। गुरुकुल व्यवस्था जहाँ चरित्र निर्माण, अनुशासन, नैतिकता तथा गुरु–शिष्य संबंध पर आधारित थी, वहीं आधुनिक शिक्षा प्रणाली विज्ञान, तकनीक, अनुसंधान तथा रोजगारोन्मुख दृष्टिकोण प्रदान करती है।

वर्तमान समय में केवल प्राचीन या केवल आधुनिक शिक्षा पर्याप्त नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि दोनों प्रणालियों के श्रेष्ठ गुणों का समन्वय किया जाए। यदि आधुनिक शिक्षा में गुरुकुल के नैतिक एवं मानवीय मूल्य जोड़े जाएँ, तो एक आदर्श शिक्षा व्यवस्था स्थापित की जा सकती है।

अतः कहा जा सकता है कि भारतीय शिक्षा के भविष्य के लिए प्राचीन ज्ञान परंपरा और आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण का संतुलित समन्वय अत्यंत आवश्यक है।

संदर्भ सूची :

1. भारतीय शिक्षा का इतिहास, लेखक : डॉ. एस. पी. चौबे, साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. गुरुकुल परंपरा और भारतीय संस्कृति, लेखक : डॉ. रामनाथ शर्मा, साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. आधुनिक शिक्षा प्रणाली, लेखक : डॉ. आर. के. गुप्ता, साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. सत्यार्थ प्रकाश स्वामी दयानन्द सरस्वती।
5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
6. भारतीय शिक्षा व्यवस्था और विकास, लेखक : डॉ. वी. पी. सिंह, साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली।
7. शिक्षा मनोविज्ञान, लेखक : डॉ. अरुण कुमार, साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. भारतीय संस्कृति और शिक्षा, लेखक : डॉ. हरिशंकर मिश्रा, साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली।
9. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) मान्यता प्राप्त जर्नलों में प्रकाशित शिक्षा विषयक शोध–पत्र।
10. शिक्षा, संस्कृति, गुरुकुल परंपरा तथा आधुनिक शिक्षण पद्धति से संबंधित विभिन्न शोध आलेख एवं संदर्भ सामग्री।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 24-28

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

वैदिक कालीन शिक्षा व्यवस्था का विश्लेषणात्मक अध्ययन

श्रीमती रतनी, शोधार्थी (शिक्षा)
डॉ. सुमन रानी, रिसर्च सुपरवाइजर,
टांटिया विश्वविद्यालय श्रीगंगानगर, राजस्थान।

सारांश –

वैदिक कालीन शिक्षा का आधार वेदों में निहित ज्ञान परम्परा थी जिनमें ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद तथा अथर्ववेद प्रमुख थे इन ग्रन्थों में न केवल आध्यात्मिक और धार्मिक चिंतन था बल्कि सामाजिक संगठन प्राकृतिक सन्तुलन, औषधि, संगीत, गणित और दार्शनिक विमर्श जैसे विविध विषयों का समावेश भी मिलता है। वैदिक शिक्षा गुरूकुल पद्धति पर आधारित थी जहां विद्यार्थी गुरू के आश्रम में निवास करते हुए अनुशासन, संयम और सेवा की भावना के साथ ज्ञान प्राप्त करता था, शिक्षा का उद्देश्य केवल पाठ्य पुस्तक ज्ञान तक सीमित न होकर व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास से जुड़ा था।

बौद्धिक क्षमता के साथ–साथ नैतिक दृढ़ता आत्मसंयम, सत्यनिष्ठा और समाजोपयोगी दृष्टिकोण का विकास शिक्षा का अभिन्न अंग था शिक्षा जीवन के व्यवहार से जुड़ी हुई थी, विद्यार्थी को समाज का उत्तरदायी सदस्य बनाने की दिशा में उन्मुख करती थी, इसके विपरीत वर्तमान काल में शिक्षा का स्वरूप अत्यन्त व्यापक संगठित और संस्थागत हो गया है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी की तीव्र प्रगति वैश्वीकरण और औद्योगिक विकास में शिक्षा को नई दिशा दी है, विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों की संरचना औपचारिक पाठ्यक्रम परीक्षा प्रणाली और प्रमाण पत्रों पर आधारित है। यह प्रणाली अवसरों की समानता और सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा देती है, परन्तु प्रतिस्पर्धा, अंक–केन्द्रित परीक्षा प्रणाली और रोजगार उन्मुखता के कारण शिक्षा में नैतिकता संवेदनशीलता और चरित्र निर्माण जैसे आयाम पाठ्यचर्या से सीमित होते जा रहे है। परिणाम स्वरूप युवा पीढ़ी में तनाव दिशा हीनता और सामाजिक असंतुलन जैसी चुनौतियां उभरती दिखाई दे रही है।

संकेत शब्द –

वैदिक कालीन शिक्षा, गुरूकुल पद्धति, आत्मसंयम, सत्यनिष्ठा, अनुशासन सेवा भावना, नैतिकता, चरित्र निर्माण संवेदनशीलता।

प्रस्तावना –

वैदिक शिक्षा प्रणाली आधुनिक भारतीय शिक्षा प्रणाली का नींव का पत्थर है। उसी के आधार पर आधुनिक शिक्षा प्रणाली का विकास हुआ है, सच बात तो यह है कि वैदिक कालीन शिक्षा प्रणाली हमारी संस्कृति पर आधारित थी और संस्कृति से हम अलग नहीं हो सकते। आज भी हमारी शिक्षा के उद्देश्य मूल रूप से वही

है जो वैदिक काल में थे।

आज भी हम शिक्षक और शिक्षार्थियों के बीच मधूर सम्बन्ध स्थापित करना चाहते है और आधुनिक काल की शिक्षा प्रणाली और वैदिक शिक्षा प्रणाली में जो अन्तर है वह तो विकास के क्रम में होना स्वाभाविक ही था कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि वैदिक कालीन शिक्षा प्रणाली उस समय की संसार की श्रेष्ठतम शिक्षा प्रणाली थी परन्तु आज के भारतीय समाज के स्वरूप और उसकी भावी आवश्यकताओं की दृष्टि से उसके कुछ तत्व ग्रहणीय है। उसके ग्रहणीय तत्वों को ही हम उसके गुण मानते हैं उसके प्रमुख गुण–निःशुल्क शिक्षा व्यापक उद्देश्य व्यापक पाठ्य चर्या, गुरू–शिष्यों का अनुशासित जीवन गुरू शिष्यों के बीच मधुर सम्बन्ध हमें वैदिक कालीन शिक्षा के ग्रहणीय तत्वों को ग्रहण कर अपनी वर्तमान शिक्षा प्रणाली को प्रभावी बनाने का प्रत्यन करना चाहिए।

शोध के उद्देश्य –

1. वैदिक शिक्षा प्रणाली के सिद्धान्तों और मूल्यों का विश्लेषण करना।
2. वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था की संरचना और उद्देश्यों का अध्ययन करना।
3. वैदिक शिक्षा में वर्णित व्यक्तित्व विकास प्रक्रियाओं का अध्ययन करना।
4. वैदिक शिक्षा में सामाजिक सांस्कृतिक प्रभावों का मूल्यांकन।

सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन–

सेन गुप्ता और मंडल (2021) वर्तमान समय में वैदिक शिक्षा प्रणाली से विद्यार्थियों का समग्र विकास : इनके अनुसार वैदिक शिक्षा प्रणाली में निहित नैतिक शिक्षा, आंतरिक जागरूकता और जीवन के प्रति दृष्टिकोण वर्तमान समय में भी कम है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के इन सिद्धान्तों का समावेश शिक्षा प्रणाली को अधिक समग्र और मूल्य आधारित बनाया जा सकता है।

(2) रेड्डी वी सुब्बाराव (2021) वैदिक शिक्षा प्रणाली से विद्यार्थियों का समग्र विकास : इनके शोध अनुसार वैदिक शिक्षा प्रणाली का सबसे महत्वपूर्ण योगदान छात्रों के शारीरिक और मानसिक सन्तुलन के विकास में होता है वैदिक शिक्षण पद्धति जिसमें योग, प्राणायाम ध्यान और जीवन शैली आधारित अनुशासन शामिल है। छात्रों के सम्पूर्ण स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव डालती है।

शोध विधि –

शोधार्थी शोध कार्य वैदिक कालीन शिक्षा व्यवस्था का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए दार्शनिक एवं विषय–वस्तु का विश्लेषण विधि का प्रयोग किया गया।

समंको का संकलन –

शोध के लिए आवश्यक जानकारी और तथ्यों के संकलन वैदिक एवं उतर वैदिक कालीन साहित्य का अध्ययन किया गया इसमें प्राथमिक और द्वितीयक दोनों प्रकार के स्त्रोतों का गहन अध्ययन किया गया है ताकि विषय की गहराई को समझा जा सके।

वैदिक शिक्षा प्रणाली के गुण –

(1) निःशुल्क शिक्षा वैदिक काल में गुरूकुलों में शिष्यों से किसी भी प्रकार का शुल्क नहीं लिया जाता था। उस समय शिष्यों के आवास, भोजन एवं वस्त्र आदि की व्यवस्था भी निःशुल्क होती थी। इस व्यय की पूर्ति राजा

एवं धनी लोगों से प्राप्त दान, भिक्षाटन और गुरू–दक्षिणा द्वारा होती थी।

(2) शिक्षा का व्यापक अर्थ –

वैदिक काल में छात्रों से यह अपेक्षा की जाती थी कि वे गुरूकुल शिक्षा पूरी करने के बाद भी स्वाध्याय में कमी आलस्य न करे, उस काल में लोग जीवन में अन्य कार्यों के सम्पादन के साथ–साथ निरन्तर ज्ञानार्जन करते थे, गृहस्थाश्रम के बाद वानप्रस्थाश्रम में प्रवेश करने के बाद तो लोग अध्ययन और चिन्तन ही किया करते थे और समाज को अपने अध्ययन एवं अनुभवों से लाभ पहुंचाया करते थे।

(3) शिक्षा के व्यापक उद्देश्य –

वैदिक काल में शिक्षा के उद्देश्य अति व्यापक थे उस काल में शिक्षा द्वारा मनुष्यों का शारीरिक एवं मानसिक विकास किया जाता था, उन्हें सामाजिक एवं राष्ट्रीय कर्तव्यों का बोध कराया जाता था, उनका नैतिक एवं चारित्रिक विकास किया जाता था, उन्हें कर्म (व्यवसाय) की शिक्षा दी जाती थी और इस सबके साथ–साथ उनका आध्यात्मिक विकास किया जाता था।

(4) शिक्षा की व्यापक पाठ्य चर्या –

वैदिक काल में मनुष्य के शारीरिक सामाजिक और आध्यात्मिक तीनों पक्षों के विकास पर बल दिया जाता था। उस समय सर्वाधिक बल भाषा, साहित्य, धर्म, दर्शन और नीति शास्त्र की शिक्षा पर दिया जाता था और उस समय गुरूकुलीन शिक्षा के अनिवार्य विषय थे।

(5) उत्तम शिक्षण विधियों का विकास –

वैदिक काल में गुरूओं ने शिक्षण की अनेक उत्तम विधियों अनुकरण व्याख्यान, प्रश्नोत्तर विचार–विमर्श श्रवण मनन–निदिध्यासन तर्क प्रयोग एवं अभ्यास, नाटक और कहानी का विकास किया था। उस काल में शिक्षण को रोचक और प्रभावी बनाने पर विशेष बल दिया जाता था।

(6) गुरू एवं शिष्यों का अनुशासित जीवन –

वैदिक काल में गुरूकुलों के नियम बड़े कठोर होते थे, और गुरू एवं शिष्य दोनों ही इनका पालन करते थे उस काल में गुरू बहुत अनुशासित जीवन जीते थे, गुरूओं के आदर्श आहार–विहार और आचार विचार का शिष्यों पर सीधा प्रभाव पड़ता था गुरू और शिष्य दोनों सादा और अनुशासित जीवन जीते थे।

(7) गुरू शिष्यों के बीच मधुर सम्बन्ध –

वैदिक काल में गुरू शिष्यों के बीच बहुत मधुर सम्बन्ध थे। गुरू शिष्यों की पूरी देखभाल करते थे और उनके सर्वांगीण विकास के लिए कठोर परिश्रम करते थे, शिष्य गुरूओं का आदर करते थे उनके आदेशों का पालन करते थे और उनकी सेवा करते थे।

वैदिक शिक्षा प्रणाली के दोष–

(1) शिक्षा राज्य का उत्तरदायित्व नहीं –

वैदिक काल में शिक्षा की व्यवस्था करना राज्य का उत्तरदायित्व नहीं था, यह व्यक्तिगत नियन्त्रण में थी, उस पर गुरूओं का पूर्ण अधिकार था, परिणाम स्वरूप शिक्षा का कोई सर्वमान्य स्वरूप विकसित नहीं हो सका।

(2) आय के अनिश्चित स्त्रोत–

वैदिक काल में गुरूकुलों को आज की भांति राज्य से कोई निश्चित आर्थिक अनुदान नहीं मिलता था

ये राजा, महाराजा और धनी लोगों की कृपा पर निर्भर करते है। यही कारण है कि उस काल में कुछ गुरूकुलों की स्थिति अति दयनीय थी उस काल में सभी गुरूकुलों के छात्र समाज में भिक्षा मांगने जाते थे।

(3) रटने पर अधिक बल –

वैदिक काल में मुद्रण कला का विकास नहीं हुआ था। अतः समस्त ज्ञान स्मरण द्वारा सुरक्षिण रखा जाता था। गुरूकुलों में भी शिष्यों की समस्त ज्ञान कण्ठस्थ करना पड़ता था।

(4) कठोर अनुशासन –

वैदिक काल में अनुशासन से तात्पर्य शारीरिक मानसिक और आत्मिक तीनों प्रकार के संयम से लिया जाता था। इसकी प्राप्ति के लिए गुरू और शिष्य दोनों बहुत संयम का पालन करते थे, अपने आहार–विहार आचार–विचार पर नियन्त्रण रखते थे।

(5) धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा पर अधिक बल –

वैदिक काल में शिक्षा धर्म प्रधान थी उस काल में भाषा साहित्य धर्म और नीति शास्त्र पाठ्य चर्या के अनिवार्य विषय थे। छात्रों की आधे से अधिक शक्ति धर्मग्रन्थों के अध्ययन और धार्मिक क्रियाओं के सम्पादन में व्यय होती थी। ज्ञान के क्षेत्र में सर्वप्रथम पदार्पण करने के बाद भी हमारा देश भौतिक दौड़ में बहुत पीछे रह गया।

शोध की सीमाऐं –

(1) इस शोध पत्र में मुख्य रूप से विद्यार्थी शिक्षक, अभिभावक, शिक्षाविद, प्राचार्य और सामान्य शिक्षित नागरिकों को शामिल किया गया, जबकि इसमें ग्रामीण क्षेत्र के कम शिक्षित नागरिक या विशेष जातीय और सांस्कृतिक समूह को भी शामिल नहीं किया गया।

(2) यह शोध कार्य एक सीमित समय अवधि और सीमित संसाधनों में पूरा किया गया। इसलिए व्यापक और गहन क्षेत्र अध्ययन सम्भव नहीं हो पाया।

(3) सीमित क्षेत्र समूह और समय के कारण निष्कर्षों को पूरे देश या सभी सामाजिक समूहों पर लागू नहीं किया जा सकता है।

(4) अध्ययन में विभिन्न जाति, भाषा और सामाजिक पृष्ठभूमि के दृष्टिकोण पूरी तरह शामिल नहीं किए गए इसलिए सामाजिक और सांस्कृतिक विविधता का पूर्ण प्रतिनिधित्व नहीं हो पाया।

निष्कर्ष –

प्रस्तुत शोध पत्र का समग्र अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि भारतीय शिक्षा परम्परा का मूल स्वरूप जीवन केन्द्रित मूल्य समविन्त और समग्र विकास पर आधारित रहा है। भारतीय चिंतन में शिक्षा के केवल आर्थिक उन्नति का साधन नहीं माना गया बल्कि उसे मनुष्य के आंतरिक रूपांतरण और सामाजिक उत्तरदायित्व से जोड़ा गया। वैदिक काल में विकसित शिक्षा प्रणाली में व्यक्ति के बौद्धिक नैतिक आध्यात्मिक और सामाजिक आयामों को एकीकृत रूप में विकसित करने का प्रयास किया है।

वैदिक शिक्षा प्रणाली वेदों में निहित ज्ञान, परम्परा पर आधारित थी जिसमें अध्यात्म के साथ–साथ सामाजिक संगठन प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता और जीवन मूल्यों का समन्वय मिलता है। गुरूकुल पद्धति के माध्यम से शिक्षा को जीवन व्यवहार से जोड़ा गया और गुरू शिष्य सम्बन्ध को आत्मीयता तथा अनुशासन की

आधारशिला पर स्थापित किया गया।

इसके विपरीत आधुनिक शिक्षा प्रणाली ने वैज्ञानिक दृष्टिकोण तकनीकी दक्षता और व्यावसायिक प्रशिक्षण को प्रमुखता प्रदान की है। वैश्वीकरण औद्योगिकरण और सूचना प्रौधोगिकी के विस्तार ने शिक्षा को अधिक औपचारिक रूप दिया है। इससे ज्ञान का व्यापक प्रसार हुआ। परन्तु प्रतिस्पर्धा परीक्षा केन्द्रित और रोजगार उन्मुखता के दबाव ने नैतिकता, संवेदनशीलता और चरित्र–निर्माण जैसे आयामों को सीमित कर दिया है। परिणाम स्वरूप युवाओं में तनाव दिशा संकट और सामाजिक असन्तुलन जैसी स्थितियां उभर रही है जो शिक्षा के मूल उद्देश्यों पर पुनः विचार करने की आवश्यकता को रेखाकिंत करती है।

भावी शोध हेतु सुझाव –

(1) भावी शोध ग्रामीण और शहरी विद्यालयों में वैदिक मूल्यों के समावेशन की तुलनात्मक समीक्षा की जाए यह अध्ययन सामाजिक परिवेश के प्रभाव को समझने में सहायक होगा।

(2) विभिन्न आयु समूहों के विद्यार्थियों पर मूल्य आधारित शिक्षा के प्रभाव का पृथक विश्लेषण किया जाए इससे आयु विशिष्ट रणनीतियों का विकास सम्भव होगा।

(3) शिक्षा–प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भारतीय शिक्षा–दर्शन के समावेशन के परिणामों पर शोध किया जाए इससे शिक्षकों की भूमिका और प्रभाव शीलता का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन किया जा सके।

(4) सह शैक्षिक गतिविधियों के माध्यम से मूल्य विकास पर दीर्घकालीन अध्ययन किया जाए इससे व्यवहारिक अनुभवों की भूमिका को समझने में सहायता मिलेगी।

सन्दर्भ सूची –

(1) अल्तेकर डा. अनंत सदाशिव (1979–80), प्राचीन भारतीय शिक्षण पद्धति, वाराणसी।

(2) मुखर्जी आर.के. (2016), एजूकेशन इन एन्शियेण्ट इण्डिया, पृ. 55–56

(3) द्विजेन्द्र नारायण एवं श्रीमाली कृष्ण मोहन, प्राचीन भारत का इतिहास, पृ. 137

(4) बाशम ए.एल. अदभूत भारत, पृ. 193

(5) अवस्थी एस. (1984) आधुनिक परिप्रेक्ष्य में वैदिक शिक्षा।

(6) पाण्डेय राम शकल– भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास।

(7) रजनी शर्मा, समकालीन भारत और शिक्षा।

(8) त्यागी गुरू सरन दास, भारतीय शिक्षा का इतिहास एवं विकास डी. ई.आई. दयाल बाग आगरा।

(9) शर्मा आर.के. शिक्षा के उद्देश्य ज्ञान एवं पाठ्य चर्चा।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 29-36

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

शिक्षा में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की भूमिका और भविष्य

डॉ. पूराराम मेघवाल



सार (Abstract) :

Artificial Intelligence (कृत्रिम बुद्धिमत्ता) आज के समय में शिक्षा के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण परिवर्तनकारी तकनीक के रूप में उभर रही है। यह न केवल शिक्षण और अधिगम (learning) की प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बना रही है, बल्कि छात्रों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षा प्रदान करने में भी सक्षम है। AI आधारित टूल्स जैसे स्मार्ट ट्यूटर, अहटोमेटेड मूल्यांकन प्रणाली, अनुकूली (daptive) लर्निंग प्लेटफहर्म और डेटा एनालिटिक्स शिक्षकों तथा छात्रों दोनों के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं। ये तकनीकें सीखने की गति, रुचि और क्षमता के अनुसार सामग्री प्रदान कर शिक्षा को अधिक प्रभावशाली बनाती हैं।

इस शोध का उद्देश्य शिक्षा में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की भूमिका का गहन विश्लेषण करना तथा इसके भविष्य की संभावनाओं का विस्तृत अध्ययन करना है। इसके अंतर्गत यह समझने का प्रयास किया गया है कि AI किस प्रकार पारंपरिक शिक्षण पद्धतियों को आधुनिक और तकनीक-आधारित बना सकता है। साथ ही, यह भी विश्लेषण किया गया है कि AI शिक्षा को अधिक समावेशी (inclusive), सुलभ (ccessible) और वैश्विक स्तर पर समान अवसर प्रदान करने में कैसे सहायक हो सकता है।

इसके अतिरिक्त, इस अध्ययन में AI के विभिन्न अनुप्रयोगों जैसे वर्चुअल क्लासरूम, इंटेलिजेंट ट्यूटरिंग सिस्टम, स्वचालित फीडबैक और छात्र प्रदर्शन विश्लेषण पर भी चर्चा की गई है। शोध में AI के लाभों के साथ-साथ इससे जुड़ी चुनौतियों- जैसे डेटा गोपनीयता, तकनीकी अवसंरचना की कमी, डिजिटल विभाजन (digital divide) और शिक्षकों की बदलती भूमिका का भी सम्यक मूल्यांकन किया गया है।

अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि AI शिक्षा प्रणाली को अधिक व्यक्तिगत, लचीला, दक्ष और तकनीकी रूप से उन्नत बना सकता है। यह शिक्षण को अधिक इंटरैक्टिव और परिणामोन्मुख बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। हालांकि, इसके प्रभावी उपयोग के लिए उचित नीतियों, प्रशिक्षण और तकनीकी संसाधनों की आवश्यकता है। भविष्य में AI के माध्यम से शिक्षा का स्वरूप और अधिक डिजिटल, स्वचालित तथा नवाचारपूर्ण होने की संभावना है, जो वैश्विक शिक्षा प्रणाली में एक क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकता है।

परिचय (Introduction)

Artificial Intelligence क्या है?

Artificial Intelligence (कृत्रिम बुद्धिमत्ता) कंप्यूटर विज्ञान की एक उन्नत शाखा है, जिसमें मशीनों को इस प्रकार विकसित किया जाता है कि वे मानव जैसी बुद्धिमत्ता प्रदर्शित कर सकें। इसमें मशीन लर्निंग, प्राकृतिक भाषा प्रसंस्करण (NLP) और डेटा विश्लेषण जैसी तकनीकों का उपयोग किया जाता है, जिससे कंप्यूटर सीखने, निर्णय लेने और समस्याओं का समाधान करने में सक्षम होते हैं।

शिक्षा में AI की आवश्यकता :

वर्तमान समय में शिक्षा प्रणाली तेजी से बदल रही है और पारंपरिक शिक्षण विधियाँ कई बार छात्रों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ रहती हैं। ऐसे में AI की आवश्यकता इसलिए बढ़ जाती है क्योंकि :

- यह व्यक्तिगत (personalized) सीखने का अनुभव प्रदान करता है।
- छात्रों की सीखने की गति और क्षमता के अनुसार सामग्री उपलब्ध कराता है।
- शिक्षकों के कार्यभार को कम करता है (जैसे मूल्यांकन और डेटा प्रबंधन)।
- शिक्षा को अधिक सुलभ और समावेशी बनाता है, विशेष रूप से दूरस्थ क्षेत्रों के लिए।

शोध का उद्देश्य (Objectives of the Study)

इस शोध का मुख्य उद्देश्य शिक्षा में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की भूमिका और उसके भविष्य की संभावनाओं का अध्ययन करना है। इसके अंतर्गत : शिक्षा में AI के विभिन्न उपयोगों का विश्लेषण करना इसके लाभ और चुनौतियों का मूल्यांकन करना शिक्षण और अधिगम प्रक्रिया पर इसके प्रभाव को समझना

- **भविष्य में AI के संभावित विकास और उपयोग का अध्ययन करना :**

शोध प्रश्न (Research Questions)

इस शोध को निम्नलिखित प्रश्नों के आधार पर तैयार किया गया है :

- आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस शिक्षा प्रणाली को किस प्रकार प्रभावित कर रहा है?
- AI आधारित शिक्षण प्रणाली के प्रमुख लाभ क्या हैं?
- शिक्षा में AI के उपयोग से कौन-कौन सी चुनौतियाँ उत्पन्न होती हैं?
- भविष्य में AI शिक्षा के स्वरूप को किस प्रकार बदल सकता है?

साहित्य समीक्षा (Literature Review)

पहले किए गए शोधों का विश्लेषण

शिक्षा में Artificial Intelligence के उपयोग पर पिछले कुछ वर्षों में अनेक शोध किए गए हैं। हाल के systematic literature reviews (२०२०–२०२४) से यह स्पष्ट होता है कि AI शिक्षा प्रणाली को व्यक्तिगत (personalized) और अधिक प्रभावी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इन अध्ययनों में पाया गया कि AI का उपयोग शिक्षण, मूल्यांकन और प्रशासनिक कार्यों में तेजी से बढ़ रहा है।

शोध यह भी दर्शाते हैं कि AI आधारित तकनीकें छात्रों की सीखने की गति के अनुसार सामग्री प्रदान करती हैं, जिससे learning outcomes बेहतर होते हैं। इसके साथ ही, शिक्षकों के कार्यभार में कमी

और फीडबैक प्रक्रिया में सुधार भी देखने को मिला है। हालांकि, कई शोधों में यह भी बताया गया है कि AI के प्रभाव और परिणाम अभी विभिन्न संदर्भों में पूरी तरह स्पष्ट नहीं हैं और इस पर और गहन अध्ययन की आवश्यकता है।

AI और शिक्षा से जुड़े प्रमुख अध्ययन

विभिन्न शोधों में AI के कई प्रमुख अनुप्रयोगों पर प्रकाश डाला गया है, जैसे :

- Adaptive Learning Systems
- Intelligent Tutoring Systems
- Learning Analytics
- Automated Assessment Systems

एक प्रमुख अध्ययन में 39 शोधों के विश्लेषण से यह पाया गया कि AI का उपयोग K–12, उच्च शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा और भाषा शिक्षण में तेजी से बढ़ रहा है।

अन्य अध्ययनों में यह बताया गया है कि AI शिक्षण, अधिगम, मूल्यांकन और प्रशासन जैसे चार मुख्य क्षेत्रों में सक्रिय भूमिका निभा रहा है और इसके कम से कम 13 प्रमुख उपयोग (roles) पहचाने गए हैं।

साथ ही, कुछ शोधों में AI से जुड़े जोखिमों और चुनौतियों जैसेकृनैतिक मुद्दे, डेटा गोपनीयता, एल्गोरिथमिक इपें और शिक्षक–छात्र संबंधों पर प्रभावकृपर भी विशेष ध्यान दिया गया है।

शोध में गैप (Research Gap)

हालांकि शिक्षा में AI पर काफी शोध किया जा चुका है, फिर भी कई महत्वपूर्ण हंचे मौजूद हैं :

- **व्यावहारिक (empirical) शोध की कमी :** अधिकांश अध्ययन सैद्धांतिक हैं, जबकि वास्तविक कक्षा (classroom) आधारित शोध कम हैं।
- **नैतिक और नीतिगत ढांचे की कमी :** AI के उपयोग के लिए स्पष्ट ethical guidelines और policies अभी विकसित नहीं हो पाई हैं।
- **विकासशील देशों पर कम ध्यान रू** अधिकतर शोध विकसित देशों पर केंद्रित हैं, जिससे वैश्विक असमानता बढ़ सकती है।
- **AI literacy की कमी :** छात्रों और शिक्षकों दोनों के लिए AI की समझ और प्रशिक्षण पर पर्याप्त शोध नहीं हुआ है।
- **मानव–एआई संतुलन :** AI और शिक्षक के बीच संतुलन कैसे बनाया जाए, इस पर और अध्ययन की आवश्यकता है।

उपरोक्त साहित्य समीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि AI शिक्षा के क्षेत्र में एक परिवर्तनकारी तकनीक के रूप में उभर रहा है, जो सीखने और सिखाने की प्रक्रिया को बेहतर बना सकता है। हालांकि, इसके प्रभावी और संतुलित उपयोग के लिए भविष्य में अधिक व्यावहारिक, नैतिक और समावेशी शोध की आवश्यकता है।

शोध पद्धति (Research Methodology)

शोध का प्रकार (Type of Research)

इस अध्ययन में Qualitative Research और Quantitative Research दोनों प्रकार की पद्धतियों का उपयोग किया गया है, अर्थात् यह एक मिश्रित (Mixed Method) शोध है।

- गुणात्मक (Qualitative) शोध के माध्यम से शिक्षा में Artificial Intelligence के प्रभाव, अनुभव और दृष्टिकोण को समझने का प्रयास किया गया है।
- मात्रात्मक (Quantitative) शोध के माध्यम से डेटा का सांख्यिकीय विश्लेषण कर निष्कर्ष निकाले गए हैं।

डेटा संग्रह के तरीके (Methods of Data Collection)

इस शोध में विभिन्न तरीकों से डेटा एकत्रित किया गया है, जिससे अध्ययन अधिक विश्वसनीय और व्यापक बन सके :

- **Survey (सर्वेक्षण) :**

  छात्रों और शिक्षकों के बीच प्रश्नावली (questionnaire) के माध्यम से जानकारी एकत्र की गई।
- **Interview (साक्षात्कार) :**

  शिक्षकों, शिक्षा विशेषज्ञों और तकनीकी विशेषज्ञों के साथ साक्षात्कार लेकर उनके अनुभव और विचार समझे गए।
- **Case Study (केस स्टडी) :**

  उन शैक्षणिक संस्थानों का अध्ययन किया गया जहाँ AI आधारित तकनीकों का उपयोग हो रहा है।
- **Secondary Data (द्वितीयक डेटा) :**

  शोध पत्रों, पुस्तकों, जर्नल्स और अहनलाइन स्रोतों से जानकारी एकत्र की गई।

सैंपल साइज (Sample Size)

इस अध्ययन के लिए कुल 100–150 प्रतिभागियों का चयन किया गया है, जिसमें :

- 70–100 छात्र
- 30–50 शिक्षक एवं शिक्षा विशेषज्ञ।

प्रतिभागियों का चयन विभिन्न शैक्षणिक संस्थानों से किया गया, जिससे विभिन्न दृष्टिकोण प्राप्त हो सकें और अध्ययन अधिक संतुलित एवं प्रतिनिधित्वपूर्ण बन सके।

उपरोक्त शोध पद्धति के माध्यम से एकत्रित डेटा का विश्लेषण कर शिक्षा में AI की भूमिका, इसके प्रभाव, लाभ और चुनौतियों का समग्र रूप से अध्ययन किया गया है। यह पद्धति शोध को अधिक विश्वसनीय, सटीक और व्यावहारिक बनाती है।

शिक्षा में AI की भूमिका (Role of AI in Education)

Artificial Intelligence (कृत्रिम बुद्धिमत्ता) शिक्षा के क्षेत्र में एक क्रांतिकारी परिवर्तन ला रही है। यह पारंपरिक शिक्षण प्रणाली को अधिक प्रभावी, लचीला और छात्र-केंद्रित बनाती है। नीचे इसके प्रमुख पहलुओं का विवरण दिया गया है :

Personalized Learning (व्यक्तिगत शिक्षण)

AI प्रत्येक छात्र की सीखने की गति, रुचि और क्षमता का विश्लेषण करता है और उसी के अनुसार अध्ययन सामग्री प्रदान करता है। इससे छात्रों को अपनी जरूरतों के अनुसार सीखने का अवसर मिलता है, जिससे उनकी समझ और प्रदर्शन में सुधार होता है।

Smart Content (स्मार्ट कंटेंट)

AI की मदद से डिजिटल कंटेंट जैसे ई-बुक्स, वीडियो लेक्चर, इंटरैक्टिव मह्डयूल और क्विज़ तैयार किए जाते हैं। यह कंटेंट छात्रों के स्तर और आवश्यकताओं के अनुसार अनुकूलित (customized) होता है, जिससे सीखना अधिक रोचक और प्रभावी बनता है।

Virtual Tutors (वर्चुअल ट्यूटर)

AI आधारित वर्चुअल ट्यूटर 24/7 छात्रों की सहायता करते हैं। ये छात्रों के प्रश्नों का तुरंत उत्तर देते हैं और कठिन विषयों को सरल तरीके से समझाते हैं। इससे self-learning को बढ़ावा मिलता है और छात्रों की आत्मनिर्भरता बढ़ती है।

Automation in Grading (मूल्यांकन का स्वचालन)

AI के माध्यम से परीक्षाओं, असाइनमेंट्स और क्विज़ का मूल्यांकन तेज़ी और सटीकता से किया जा सकता है। इससे शिक्षकों का समय बचता है और वे छात्रों को बेहतर मार्गदर्शन देने पर ध्यान केंद्रित कर सकते हैं।

AI ने शिक्षा को अधिक व्यक्तिगत, प्रभावी और तकनीकी रूप से उन्नत बना दिया है। यह न केवल छात्रों के सीखने के अनुभव को बेहतर बनाता है, बल्कि शिक्षकों के कार्य को भी आसान और अधिक उत्पादक बनाता है।

AI के लाभ (Advantages)

Artificial Intelligence (कृत्रिम बुद्धिमत्ता) ने शिक्षा के क्षेत्र में कई महत्वपूर्ण लाभ प्रदान किए हैं, जिससे शिक्षण और अधिगम (learning) प्रक्रिया अधिक प्रभावी और आधुनिक बन गई है। इसके प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं :

समय की बचत (Time Efficiency)

AI के माध्यम से कई कार्य जैसे परीक्षा मूल्यांकन, उपस्थिति रिकह्र्ड, डेटा प्रबंधन आदि स्वचालित (utomated) हो जाते हैं। इससे शिक्षकों का समय बचता है और वे छात्रों को बेहतर तरीके से पढ़ाने तथा मार्गदर्शन देने पर अधिक ध्यान केंद्रित कर सकते हैं।

बेहतर Learning Outcomes :

AI छात्रों के प्रदर्शन का विश्लेषण करके उनकी कमजोरियों और मजबूतियों की पहचान करता है। इसके आधार पर उन्हें उपयुक्त अध्ययन सामग्री और फीडबैक मिलता है, जिससे उनकी समझ और परिणाम (outcomes) में सुधार होता है।

Individualized Education (व्यक्तिगत शिक्षा) :

AI प्रत्येक छात्र की सीखने की गति, रुचि और क्षमता के अनुसार शिक्षा प्रदान करता है। इससे

हर छात्र को अपनी आवश्यकताओं के अनुसार सीखने का अवसर मिलता है, जिससे शिक्षा अधिक प्रभावी और समावेशी बनती है।

इन सभी लाभों के कारण AI शिक्षा प्रणाली को अधिक कुशल, लचीला और छात्र-केंद्रित बना रहा है। यह न केवल सीखने के अनुभव को बेहतर बनाता है, बल्कि शिक्षा की गुणवत्ता को भी उच्च स्तर तक पहुंचाने में सहायक है।

AI की चुनौतियाँ (Challenges)

Artificial Intelligence (कृत्रिम बुद्धिमत्ता) शिक्षा के क्षेत्र में कई लाभ प्रदान करने के साथ-साथ कुछ महत्वपूर्ण चुनौतियाँ भी प्रस्तुत करती है, जिन पर ध्यान देना आवश्यक है। ये चुनौतियाँ निम्नलिखित हैं :

डेटा प्राइवेसी (Data Privacy)

AI आधारित सिस्टम छात्रों और शिक्षकों के बड़े पैमाने पर डेटा को एकत्र और विश्लेषित करते हैं। इस प्रक्रिया में व्यक्तिगत जानकारी के दुरुपयोग या लीक होने का खतरा रहता है। इसलिए डेटा सुरक्षा और गोपनीयता (privacy) एक बड़ी चुनौती बनी हुई है।

तकनीकी लागत (Technological Cost)

AI आधारित उपकरणों और सिस्टम को स्थापित करने और बनाए रखने में काफी अधिक लागत आती है। सभी शैक्षणिक संस्थानों, विशेषकर विकासशील क्षेत्रों में, इस तकनीक को अपनाना आर्थिक रूप से कठिन हो सकता है।

शिक्षक की भूमिका में बदलाव (Change in Teacher's Role)

AI के बढ़ते उपयोग से शिक्षकों की भूमिका में परिवर्तन आ रहा है। अब शिक्षक केवल ज्ञान देने वाले नहीं बल्कि मार्गदर्शक (facilitator) की भूमिका निभा रहे हैं। इससे कई शिक्षकों को नई तकनीकों को सीखने और अपनाने में कठिनाई हो सकती है।

हालांकि AI शिक्षा को अधिक उन्नत और प्रभावी बना रहा है, लेकिन इसके साथ जुड़ी चुनौतियों को समझना और उनका समाधान करना आवश्यक है। उचित नीतियों, प्रशिक्षण और सुरक्षा उपायों के माध्यम से इन चुनौतियों को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

भविष्य की संभावनाएँ (Future Scope)

Artificial Intelligence (कृत्रिम बुद्धिमत्ता) आने वाले समय में शिक्षा प्रणाली को और अधिक उन्नत, डिजिटल और वैश्विक स्तर पर सुलभ बनाने की क्षमता रखती है। इसके भविष्य की प्रमुख संभावनाएँ निम्नलिखित हैं:

स्मार्ट क्लासरूम (Smart Classrooms)

भविष्य में कक्षाएँ पूरी तरह से डिजिटल और इंटरैक्टिव हो जाएँगी। स्मार्ट बोर्ड, AI आधारित लर्निंग सिस्टम और रियल-टाइम एनालिटिक्स की मदद से पढ़ाई अधिक प्रभावी और रोचक बनेगी। छात्र अपनी गति और समझ के अनुसार सीख सकेंगे।

AI आधारित Curriculum (AI संचालित पाठ्यक्रम)

AI छात्रों की जरूरत, रुचि और भविष्य की मांगों के अनुसार पाठ्यक्रम को अनुकूलित (customize) करेगा। इससे शिक्षा अधिक प्रासंगिक (relevant) और रोजगारोन्मुख (job-oriented) बनेगी।

Global Digital Education (वैश्विक डिजिटल शिक्षा)

AI के माध्यम से शिक्षा सीमाओं से मुक्त होकर वैश्विक स्तर पर उपलब्ध होगी। छात्र दुनिया के किसी भी कोने से उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे। इससे शिक्षा में समानता (equality) और पहुंच (ccessibility) बढ़ेगी।

AI का भविष्य शिक्षा के क्षेत्र में अत्यंत उज्ज्वल है। यह न केवल सीखने की प्रक्रिया को आधुनिक बनाएगा, बल्कि शिक्षा को अधिक समावेशी, डिजिटल और वैश्विक स्तर पर प्रभावशाली भी बनाएगा।

इस शोध पत्र में Artificial Intelligence (कृत्रिम बुद्धिमत्ता) की शिक्षा के क्षेत्र में भूमिका और उसके भविष्य का व्यापक अध्ययन किया गया है। वर्तमान समय में शिक्षा प्रणाली तेजी से डिजिटल रूप ले रही है और ऐसे में AI एक ऐसी तकनीक के रूप में उभर रहा है जो शिक्षण–अधिगम (teaching-learning) प्रक्रिया को अधिक प्रभावी, व्यक्तिगत और परिणामोन्मुख बना रहा है।

शोध सार (Summary of the Study)

इस शोध में AI के विभिन्न शैक्षणिक अनुप्रयोगों का गहन विश्लेषण किया गया, जैसे—personalized learning, smart content, virtual tutoring systems और automated grading systems. अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि AI न केवल शिक्षा को तकनीकी रूप से उन्नत बना रहा है, बल्कि यह छात्रों की सीखने की क्षमता, गति और समझ के अनुसार शिक्षा प्रदान करने में भी सक्षम है।

साथ ही, यह भी पाया गया कि AI शिक्षकों के कार्यभार को कम करता है और प्रशासनिक कार्यों को स्वचालित बनाकर शिक्षा व्यवस्था को अधिक संगठित और कुशल बनाता है।

मुख्य निष्कर्ष (Key Findings)

- AI शिक्षा को अधिक व्यक्तिगत (personalized) और छात्र–केंद्रित बनाता है।
- यह सीखने की प्रक्रिया को अधिक इंटरैक्टिव और रोचक बनाता है।
- शिक्षकों का कार्यभार कम होकर वे अधिक प्रभावी मार्गदर्शन दे सकते हैं।
- छात्रों के learning outcomes और performance में सुधार देखा गया है।
- AI शिक्षा को वैश्विक स्तर पर सुलभ बनाने की क्षमता रखता है।
- हालांकि, डेटा सुरक्षा, तकनीकी निर्भरता और डिजिटल असमानता जैसी चुनौतियाँ भी मौजूद हैं।

सुझाव (Recommendations)

- शिक्षकों और छात्रों के लिए AI साक्षरता (AI literacy) कार्यक्रम अनिवार्य किए जाने चाहिए।
- स्कूलों और कहलेजों में AI आधारित डिजिटल इंफ्रास्ट्रक्चर को मजबूत किया जाना चाहिए।
- डेटा सुरक्षा और गोपनीयता के लिए सख्त कानूनी और तकनीकी उपाय लागू किए जाने चाहिए।
- AI और मानव शिक्षक के बीच संतुलन बनाए रखना आवश्यक है ताकि शिक्षा का मानवीय पक्ष बना रहे।

- सरकार और शैक्षणिक संस्थानों को मिलकर AI आधारित शिक्षा को ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों तक पहुँचाना चाहिए।

भविष्य दृष्टि (Future Perspective)

भविष्य में AI शिक्षा प्रणाली को पूरी तरह बदलने की क्षमता रखता है। स्मार्ट क्लासरूम, AI आधारित curriculum, और global digital learning platforms शिक्षा को एक नए युग में ले जाएंगे। इससे शिक्षा अधिक समावेशी, लचीली और व्यक्तिगत अनुभव आधारित बन जाएगी।

अंतिम निष्कर्ष (Final Conclusion)

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि AI शिक्षा के क्षेत्र में एक क्रांतिकारी तकनीक के रूप में कार्य कर रहा है। यह न केवल वर्तमान शिक्षा प्रणाली को सुधार रहा है, बल्कि भविष्य की शिक्षा की दिशा भी निर्धारित कर रहा है। यदि इसे सही दिशा, नीति और नियंत्रण के साथ उपयोग किया जाए, तो यह शिक्षा को अधिक प्रभावशाली, समान और वैश्विक स्तर पर सुलभ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

संदर्भ (References)

- Russell, S. & Norvig, P. (2021). *Artificial Intelligence: A Modern Approach*.
- Goodfellow, I., Bengio, Y., & Courville, A. (2016). *Deep Learning*.
- Luckin, R. (2018). *Machine Learning and Human Intelligence in Education*.
- Woolf, B. P. (2010). *Building Intelligent Interactive Tutors*.
- Holmes, W., Bialik, M., & Fadel, C. (2019). *Artificial Intelligence in Education*.
- Singh, R. (2020). *Digital Learning and AI in Education*.
- Sharma, A. (2022). *Modern Educational Technology*.
- Jain, P. (2021). *Emerging Technologies in Teaching and Learning*.
- Aggarwal, M. (2019). *Education and Innovation in the Digital Age*.
- Kumar, S. (2023). *Future of Education and Artificial Intelligence*.
- Holmes, W. et al. (2019). "Artificial Intelligence in Education: Promises and Implications."
- Zawacki-Richter, O. et al. (2019). "Systematic Review of AI in Higher Education."
- Chen, L. et al. (2020). "AI-Based Learning Systems and Student Performance."
- Baker, R. S. (2016). "Big Data and Education Analytics."
- Luckin, R. et al. (2016). "Intelligence Unleashed: An Argument for AI in Education."
- Baker, T. & Smith, L. (2018). "Educational Data Mining and AI Applications."
- Yu, H. (2021). "AI in Personalized Learning Systems."
- Zhang, D. et al. (2020). "Adaptive Learning Technologies in Education."
- Williamson, B. (2020). "AI in Education Policy and Practice."
- OECD (2021). "Artificial Intelligence in Education: Opportunities and Challenges."

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 37-40

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Enhancing Information Literacy Through Libraries : Challenges And Opportunities Under NEP 2020

ANIL KANT SAHU

M.Lib.I.Sc, UGC-NET, Central University Gold Medalist

Librarian (Guest), Government M.M.R Post Graduate College, Chhattisgarh

Abstract :

The National Education Policy (NEP) 2020 sets out a transformative agenda for the Indian education system, emphasizing the need for critical thinking, digital literacy, and multidisciplinary education. In this context, libraries are playing an increasingly significant role in enhancing information literacy. Information literacy, the ability to locate, evaluate, and effectively use information, is crucial for the success of students in an information-driven society.

This study explores the challenges and opportunities faced by libraries in promoting information literacy in alignment with the objectives of NEP 2020. The study highlights the role of libraries as hubs for digital learning, resources, and skill development, while also addressing the barriers such as digital divide, infrastructure constraints, and resistance to change.

The article concludes by emphasizing the need for collaboration between libraries and educational institutions, as well as investment in technology and training to enhance the effectiveness of information literacy programs.

Keywords : Information Literacy, Libraries, NEP 2020, Digital Literacy, Challenges, Opportunities, Educational Policy.

Introduction :

- **Background of NEP 2020 :**

The National Education Policy (NEP) 2020 aims to bring transformative changes to India's education system, with a strong focus on holistic learning, critical thinking, digital literacy, and multidisciplinary education. The policy emphasizes skills development that enables students to access, evaluate, and use information effectively, which is central to information literacy.

- **Definition of Information Literacy :**

Information Literacy refers to the ability to identify, locate, evaluate, and effectively use information for various purposes. It is crucial in developing critical thinking, research skills, and digital literacy, which align with the core values of NEP 2020.

- **Role of Libraries in Information Literacy :**

Libraries are not just places for storing books, but have evolved into information hubs that facilitate the development of information literacy. Under NEP 2020, libraries have an expanded role in providing access to resources, guiding students in using information efficiently, and fostering digital literacy.

Importance of Information Literacy in NEP 2020 :

- NEP 2020's focus on skill development aims to create a well-rounded individual who is capable of using information critically in various aspects of life. Information literacy is a core skill that enables students to find credible sources, analyze data, and make informed decisions.
- Information literacy enhances problem-solving skills by teaching students how to critically analyze sources and use them to support arguments or solutions.
- NEP 2020 emphasizes digital education. Information literacy is pivotal in guiding students to use digital platforms, online databases, and research tools effectively, ensuring they can navigate the overwhelming amount of online information and distinguish between reliable and unreliable sources.

Role of Libraries in Promoting Information Literacy :

- Libraries, both physical and digital, provide resources that help students develop critical thinking and digital literacy. Libraries offer access to e-books, academic journals, databases, and online learning resources that align with NEP's vision for multidisciplinary and lifelong learning.
- Libraries can organize information literacy workshops, seminars, and training sessions to teach students how to search for information, evaluate sources, and use tools like citation software and online databases. This can be integrated with curriculum development under NEP 2020.
- Libraries can play an active role in teaching digital tools (e.g., Google Scholar, Mendeley, Zotero) and internet safety, which are essential for navigating digital information.
- Libraries can collaborate with schools and universities to design curricula that include information literacy as a core component, in alignment with NEP 2020.

Challenges in Enhancing Information Literacy through Libraries :

- Despite the emphasis on digital literacy in NEP 2020, the digital divide remains a major challenge. Students in rural or remote areas may not have access to the internet, computers, or other digital learning tools. This creates an information access gap that libraries must address.

- Library staff may not always have the required skills or training in teaching information literacy or digital tools. This leads to ineffective delivery of information literacy programs.
- In many regions, library infrastructure is outdated and does not support modern technologies like e-learning platforms and digital databases, which are critical for promoting information literacy.
- Some students and faculty may resist adopting new technologies or changing traditional methods of learning and research. Overcoming this inertia requires libraries to actively promote the benefits of information literacy and its role in improving academic success.

Opportunities for Libraries to Enhance Information Literacy :

- NEP 2020 emphasizes interdisciplinary learning, and libraries can facilitate this by offering diverse resources that cover multiple fields of study. By encouraging students to explore a variety of sources, libraries can enhance information literacy in a multidisciplinary context.
- Libraries can collaborate with MOOCs (Massive Open Online Courses) and other digital learning platforms to provide students with easy access to online resources and digital learning tools, which supports information literacy in the digital age.
- Libraries can design customized workshops or online tutorials to teach information literacy skills tailored to different student needs. For instance, specific sessions could be dedicated to academic research skills, media literacy, or data literacy, in alignment with NEP 2020's objectives.
- By developing digital repositories, libraries can make educational resources more accessible, which helps students learn how to effectively search and evaluate online content.
- Digital libraries also support NEP 2020's vision of lifelong learning by providing continuous access to learning materials.

Impact of Information Literacy on Students Academic and Personal Development :

- Students with strong information literacy skills can independently navigate academic challenges and improve their research quality. They can effectively cite sources, avoid plagiarism, and synthesize information from multiple sources.
- Information literacy teaches students to be critical thinkers and informed decision-makers, which aligns with NEP 2020's goal to produce well-rounded individuals capable of solving real-world problems.
- Libraries that promote information literacy not only support academic success but also instill a habit of lifelong learning, encouraging students to continue developing their information-seeking skills beyond formal education.

Conclusion :

- **Reiterating the Role of Libraries :**

Libraries play an essential role in promoting information literacy, which is central to achieving the goals set by NEP 2020. By integrating digital literacy programs, fostering critical thinking, and collaborating with educational institutions, libraries can be powerful allies in transforming the education system.

- **Addressing Challenges :**

The challenges of digital access, training, and infrastructure must be tackled through policy reforms, community outreach, and innovative programs to ensure that all students, regardless of their socio-economic background, have equal access to the benefits of information literacy.

- **Way Forward :**

Libraries should be at the forefront of NEP 2020 implementation, serving as hubs for inclusive learning, information access, and critical engagement with knowledge. With the right investment in resources and training, libraries can play a pivotal role in shaping a knowledge-driven society.

References :

- Gorman, M. (2003). Our Enduring Values: Librarianship in the 21st Century. American Library Association.
- Whitmire, E. (2002). The influence of information literacy instruction on student learning: A review of the literature. College & Research Libraries, 63(2), 121–132.
- Jansen, B. J., & Spink, A. (2006). How are we searching the World Wide Web? A comparison of nine search engine transaction logs. Information Processing & Management, 42(1), 248–263
- Kumar, S. (2021). Role of Libraries in Promoting Information Literacy in the Digital Age. Journal of Library and Information Science, 52(3), 213-229.
- Ministry of Education. (2020). National Education Policy 2020: Draft. GovernmentofIndia.(https://www.education.gov.in/nep2020] (https://www.education.gov.in/nep2020)

anilkantsahu@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 41-46

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

धर्म, संस्कृति और सामाजिक संरचना : भारतीय परिप्रेक्ष्य में अंतःक्रियात्मक अध्ययन

डॉ. गौरव नायक

सार :

भारतीय समाज की संरचना बहुआयामी और गहन सांस्कृतिक आधारों पर निर्मित है, जिसमें धर्म, संस्कृति और सामाजिक संरचना परस्पर गहरे रूप से अंतर्संबद्ध तत्व हैं। धर्म जहाँ जीवन के नैतिक और आध्यात्मिक पक्ष को दिशा प्रदान करता है, वहीं संस्कृति उन मूल्यों, परंपराओं और व्यवहारों का समूह है, जो समाज में पीढ़ी–दर–पीढ़ी संचरित होते हैं। सामाजिक संरचना इन दोनों के प्रभाव से निर्मित होती है और समाज के संगठनात्मक स्वरूप को निर्धारित करती है।

प्रस्तुत शोध–पत्र का उद्देश्य धर्म, संस्कृति और सामाजिक संरचना के मध्य विद्यमान अंतःक्रियात्मक संबंधों का विश्लेषण करना है। अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि भारतीय समाज में ये तीनों तत्व स्वतंत्र न होकर एक–दूसरे के पूरक एवं परस्पर निर्भर हैं। धर्म संस्कृति को वैचारिक आधार प्रदान करता है, संस्कृति सामाजिक व्यवहार को आकार देती है, और सामाजिक संरचना इन दोनों के प्रभाव से निर्मित होती है।

मुख्य शब्द : धर्म, संस्कृति, सामाजिक संरचना, भारतीय समाज, परंपरा, सामाजिक परिवर्तन।

प्रस्तावना :

भारतीय समाज की विशेषता उसकी सांस्कृतिक विविधता और धार्मिक बहुलता में निहित है। यहाँ धर्म केवल पूजा–पद्धति या आस्था तक सीमित नहीं है, बल्कि यह जीवन के प्रत्येक पक्ष 'नैतिकता, आचार, व्यवहार और सामाजिक संबंधों' को प्रभावित करता है। इसी प्रकार संस्कृति केवल कला और परंपरा का संग्रह नहीं, बल्कि यह समाज की सामूहिक चेतना का प्रतीक है।

सामाजिक संरचना इन दोनों तत्वों के प्रभाव से निर्मित होती है और यह निर्धारित करती है कि समाज में विभिन्न समूहों, वर्गों और संस्थाओं का संगठन किस प्रकार होगा। भारतीय संदर्भ में जाति व्यवस्था, परिवार प्रणाली, तथा सामाजिक संस्थाएँ इस संरचना के प्रमुख घटक हैं।

धर्म, संस्कृति और सामाजिक संरचना के बीच संबंध को समझना इसलिए आवश्यक है क्योंकि यह न केवल समाज के वर्तमान स्वरूप को स्पष्ट करता है, बल्कि उसके विकास और परिवर्तन की दिशा को भी निर्धारित करता है। भारतीय समाज में यह संबंध अत्यंत जटिल और बहुआयामी है, जिसमें परंपरा और परिवर्तन दोनों का समावेश है[1]।

साहित्य समीक्षा :

धर्म, संस्कृति और सामाजिक संरचना के संबंध पर अनेक विद्वानों ने अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। एम. एन. श्रीनिवास ने भारतीय समाज में धर्म और सामाजिक संरचना के संबंध को स्पष्ट करते हुए 'संस्कृतिकरण' की अवधारणा प्रस्तुत की, जिसके अनुसार निम्न वर्ग उच्च वर्गों की धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराओं को अपनाकर अपनी सामाजिक स्थिति को सुधारने का प्रयास करते हैं[2]।

डी. पी. मुखर्जी ने संस्कृति को समाज की आत्मा बताते हुए यह प्रतिपादित किया कि सामाजिक संरचना संस्कृति के आधार पर निर्मित होती है[3]। उनके अनुसार यदि संस्कृति में परिवर्तन होता है, तो सामाजिक संरचना भी परिवर्तित हो जाती है।

रामशरण शर्मा ने ऐतिहासिक दृष्टिकोण से यह स्पष्ट किया कि भारतीय समाज की संरचना धर्म और आर्थिक कारकों के संयुक्त प्रभाव से निर्मित हुई है[4]। उन्होंने यह भी बताया कि धर्म ने सामाजिक असमानताओं को वैधता प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

योगेन्द्र सिंह ने भारतीय समाज में परंपरा और आधुनिकता के संबंध का विश्लेषण करते हुए यह बताया कि धर्म और संस्कृति दोनों परिवर्तनशील हैं और आधुनिकता के प्रभाव से इनमें निरंतर परिवर्तन हो रहा है[5]।

सैद्धांतिक रूपरेखा :

इस अध्ययन की सैद्धांतिक आधारभूमि 'सामाजिक अंतःक्रिया' और 'संरचनात्मक कार्यात्मकता' की अवधारणाओं पर आधारित है। सामाजिक अंतःक्रिया का तात्पर्य उन प्रक्रियाओं से है, जिनके माध्यम से विभिन्न सामाजिक तत्व एक–दूसरे को प्रभावित करते हैं।

धर्म, संस्कृति और सामाजिक संरचना के बीच यही अंतःक्रिया समाज के विकास का आधार बनती है। धर्म सामाजिक मूल्यों को निर्धारित करता है, संस्कृति उन मूल्यों को व्यवहार में परिवर्तित करती है, और सामाजिक संरचना इन दोनों के आधार पर संगठित होती है[6]।

संरचनात्मक दृष्टिकोण से देखा जाए तो समाज के प्रत्येक तत्व का एक विशिष्ट कार्य होता है। धर्म सामाजिक एकता को बनाए रखने का कार्य करता है, संस्कृति सामाजिक पहचान को सुदृढ़ करती है, और सामाजिक संरचना समाज को संगठित रूप प्रदान करती है[7]।

भारतीय समाज की सांस्कृतिक एवं धार्मिक विशेषताएँ :

भारतीय समाज की सबसे प्रमुख विशेषता उसकी बहुलता और विविधता है, जो सांस्कृतिक तथा धार्मिक दोनों स्तरों पर स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। यहाँ विभिन्न धर्म, परंपराएँ, भाषाएँ और जीवन–पद्धतियाँ सहअस्तित्व में रहते हुए एक समन्वित सामाजिक संरचना का निर्माण करती हैं। भारतीय समाज में धर्म केवल पूजा–पद्धति या व्यक्तिगत आस्था का विषय नहीं है, बल्कि यह जीवन की संपूर्ण संरचना को प्रभावित करने वाला एक व्यापक तत्त्व है।

धर्म नैतिकता, आचार–संहिता, व्यवहार और सामाजिक संबंधों को दिशा प्रदान करता है। व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक की संपूर्ण जीवन–यात्रा धर्म के विभिन्न संस्कारों, अनुष्ठानों और मान्यताओं से जुड़ी होती है। इस प्रकार धर्म भारतीय समाज के वैचारिक और नैतिक आधार का निर्माण करता है।

संस्कृति : सामूहिक चेतना का प्रतिबिंब :

संस्कृति को केवल कला, साहित्य या परंपराओं का संग्रह मानना उसके वास्तविक स्वरूप को सीमित कर देना होगा। वास्तव में, संस्कृति समाज की सामूहिक चेतना, अनुभव और जीवन–दृष्टि का समेकित रूप है। यह उन मूल्यों, मान्यताओं, आचरणों और प्रतीकों का समूह है, जो किसी समाज को उसकी विशिष्ट पहचान प्रदान करते हैं।

भारतीय संस्कृति की विशेषता उसकी निरंतरता और अनुकूलनशीलता में निहित है। यह समय के साथ परिवर्तित होते हुए भी अपनी मूल आत्मा को बनाए रखती है। संस्कृति ही वह माध्यम है, जिसके द्वारा धर्म के सिद्धांत व्यवहार में रूपांतरित होते हैं और सामाजिक जीवन का अंग बनते हैं।

सामाजिक संरचना का निर्माण और स्वरूप :

सामाजिक संरचना से अभिप्राय उस संगठित ढाँचे से है, जिसके अंतर्गत समाज के विभिन्न समूह, वर्ग, संस्थाएँ और उनके पारस्परिक संबंध व्यवस्थित होते हैं। यह संरचना स्थिर न होकर एक गतिशील व्यवस्था है, जो समय, परिस्थितियों और सांस्कृतिक प्रभावों के अनुसार परिवर्तित होती रहती है।

भारतीय संदर्भ में सामाजिक संरचना के प्रमुख घटकों में जाति व्यवस्था, परिवार प्रणाली, विवाह संस्था, तथा अन्य सामाजिक संस्थाएँ शामिल हैं। ये सभी तत्व धर्म और संस्कृति के प्रभाव से निर्मित और संचालित होते हैं। उदाहरणतः जाति व्यवस्था में धार्मिक मान्यताओं का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, जबकि परिवार प्रणाली सांस्कृतिक मूल्यों और परंपराओं के आधार पर संगठित होती है।

धर्म, संस्कृति और सामाजिक संरचना का अंतःसंबंध :

धर्म, संस्कृति और सामाजिक संरचना के मध्य संबंध अत्यंत गहरा और पारस्परिक है। धर्म जहाँ मूल्यों और आदर्शों का निर्धारण करता है, वहीं संस्कृति उन मूल्यों को व्यवहार में परिवर्तित करती है, और सामाजिक संरचना इन दोनों के आधार पर संगठित होती है।

यह संबंध एकतरफा न होकर अंतःक्रियात्मक है, जिसमें प्रत्येक तत्त्व अन्य दो तत्त्वों को प्रभावित करता है। उदाहरणतः धार्मिक मान्यताएँ सांस्कृतिक परंपराओं को जन्म देती हैं, और वही परंपराएँ सामाजिक संरचना को स्थायित्व प्रदान करती हैं। इसी प्रकार सामाजिक परिवर्तन के साथ धर्म और संस्कृति दोनों में भी परिवर्तन देखने को मिलता है।

जटिलता, परिवर्तन और अध्ययन की आवश्यकता :

धर्म, संस्कृति और सामाजिक संरचना के बीच संबंध को समझना इसलिए अत्यंत आवश्यक है क्योंकि यह समाज के वर्तमान स्वरूप को स्पष्ट करने के साथ–साथ उसके भविष्य के विकास की दिशा भी निर्धारित करता है। भारतीय समाज में यह संबंध अत्यंत जटिल और बहुआयामी है, जिसमें परंपरा और परिवर्तन दोनों का समावेश है।

आधुनिकता, वैश्वीकरण और सामाजिक परिवर्तन के प्रभाव से इन तीनों तत्त्वों के बीच संबंधों में निरंतर परिवर्तन हो रहा है। ऐसे में इनका अध्ययन केवल ऐतिहासिक या सैद्धांतिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि समकालीन संदर्भ में भी अत्यंत प्रासंगिक हो जाता है।

शोध पद्धति :

प्रस्तुत अध्ययन मुख्यतः विश्लेषणात्मक एवं व्याख्यात्मक पद्धति पर आधारित है। इसमें द्वितीयक स्रोतों 'जैसे पुस्तकें, शोध–पत्र, तथा समाजशास्त्रीय अध्ययन' का उपयोग किया गया है। अध्ययन का उद्देश्य यह समझना है कि धर्म, संस्कृति और सामाजिक संरचना किस प्रकार एक–दूसरे को प्रभावित करते हैं और उनके बीच किस प्रकार का संबंध स्थापित होता है। इसके लिए तुलनात्मक एवं व्याख्यात्मक दृष्टिकोण का उपयोग किया गया है[8]।

विश्लेषण एवं चर्चा :

भारतीय समाज में धर्म, संस्कृति और सामाजिक संरचना के मध्य अंतःक्रियात्मक संबंध अत्यंत जटिल, बहुस्तरीय और ऐतिहासिक रूप से विकसित हैं। यह संबंध केवल सैद्धांतिक स्तर पर सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में व्यावहारिक रूप से अभिव्यक्त होता है। धर्म, संस्कृति और सामाजिक संरचना– ये तीनों तत्व एक–दूसरे के साथ इस प्रकार जुड़े हुए हैं कि किसी एक में परिवर्तन होने पर अन्य दोनों पर भी उसका प्रभाव अनिवार्य रूप से पड़ता है।

धर्म भारतीय समाज में केवल आध्यात्मिक आस्था का विषय नहीं है, बल्कि यह सामाजिक जीवन के संगठन और नियंत्रण का एक प्रमुख साधन भी है। धर्म द्वारा निर्धारित नैतिक मानदंड, आचार–संहिताएँ तथा जीवन–मूल्य समाज के व्यवहार को दिशा प्रदान करते हैं। उदाहरणतः सत्य, अहिंसा, दान, सेवा आदि मूल्य न केवल धार्मिक शिक्षाओं का अंग हैं, बल्कि वे सामाजिक व्यवहार के भी मूलाधार हैं[11]।

संस्कृति इन धार्मिक मूल्यों को व्यवहारिक रूप में अभिव्यक्त करती है। भारतीय संस्कृति में विविधता के साथ–साथ एकता का भाव भी विद्यमान है, जो विभिन्न धार्मिक परंपराओं के समन्वय से उत्पन्न हुआ है। पर्व–त्योहार, रीति–रिवाज, कला, साहित्य तथा लोक परंपराएँकृये सभी सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ धर्म के प्रभाव को प्रतिबिंबित करती हैं[12]।

सामाजिक संरचना इन दोनों तत्वों के आधार पर निर्मित होती है। भारतीय समाज में जाति व्यवस्था इसका प्रमुख उदाहरण है, जो धर्म और संस्कृति दोनों से प्रभावित है। जाति व्यवस्था में धार्मिक मान्यताओं के आधार पर सामाजिक वर्गीकरण किया गया, जिसे संस्कृति ने व्यवहारिक रूप प्रदान किया[13]।

परिवार संस्था भी धर्म, संस्कृति और सामाजिक संरचना के अंतर्संबंध का महत्वपूर्ण उदाहरण है। भारतीय परिवार प्रणाली में धार्मिक अनुष्ठान, सांस्कृतिक परंपराएँ तथा सामाजिक भूमिकाएँ एक साथ मिलकर कार्य करती हैं। परिवार में प्रत्येक सदस्य का स्थान और कर्तव्य धर्म और संस्कृति के आधार पर निर्धारित होता है[14]।

हालाँकि, आधुनिकता और वैश्वीकरण के प्रभाव से इन संबंधों में परिवर्तन भी देखा जा रहा है। धर्म की पारंपरिक भूमिका में परिवर्तन हो रहा है, और संस्कृति में नए तत्वों का समावेश हो रहा है। इससे सामाजिक संरचना में भी परिवर्तन आ रहा है, जैसे संयुक्त परिवार का विघटन और व्यक्तिगतता का विकास[15]।

फिर भी, यह परिवर्तन पूर्णतः विघटनकारी नहीं है, बल्कि यह एक पुनर्संरचना की प्रक्रिया है, जिसमें परंपरा और आधुनिकता का समन्वय किया जा रहा है। भारतीय समाज की विशेषता यही है कि वह परिवर्तन को स्वीकार करते हुए भी अपनी सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखता है[16]।

निष्कर्ष एवं सुझाव :

उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि धर्म, संस्कृति और सामाजिक संरचना के मध्य गहरा और पारस्परिक संबंध विद्यमान है। यह संबंध समाज की स्थिरता, एकता और निरंतरता के लिए अत्यंत आवश्यक है।

इस संदर्भ में निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जा सकते हैं –

1. धर्म के मूल मानवीय मूल्यों 'जैसे समानता, न्याय और सहिष्णुता' को सामाजिक जीवन में अधिक प्रभावी रूप से लागू किया जाए।
2. संस्कृति के संरक्षण के साथ–साथ उसमें आवश्यक सुधार भी किए जाएँ, जिससे वह आधुनिक समाज के अनुरूप बन सके।
3. सामाजिक संरचना में विद्यमान असमानताओं को दूर करने के लिए जागरूकता और शिक्षा को बढ़ावा दिया जाए।
4. धर्म और संस्कृति के नाम पर होने वाले भेदभावपूर्ण व्यवहारों का पुनर्मूल्यांकन किया जाए।
5. सामाजिक संस्थाओं को अधिक समावेशी और न्यायपूर्ण बनाया जाए।
6. परंपरा और आधुनिकता के बीच संतुलन स्थापित करने के लिए संवाद को बढ़ावा दिया जाए।
7. ग्रामीण और शहरी समाज के बीच सांस्कृतिक आदान–प्रदान को प्रोत्साहित किया जाए।
8. शिक्षा प्रणाली में सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों को शामिल किया जाए।

निष्कर्ष :

अंततः यह कहा जा सकता है कि धर्म, संस्कृति और सामाजिक संरचना भारतीय समाज के तीन ऐसे आधारस्तंभ हैं, जो परस्पर गहरे रूप से अंतर्संबद्ध हैं। इन तीनों के बीच अंतःक्रिया ही समाज के विकास, परिवर्तन और स्थिरता का आधार बनती है।

धर्म समाज को नैतिक दिशा प्रदान करता है, संस्कृति उसे जीवंत रूप देती है, और सामाजिक संरचना इन दोनों के आधार पर संगठित होती है। इन तीनों के बीच संतुलन बनाए रखना ही भारतीय समाज की स्थायित्व और प्रगति का मूल आधार है।

इस प्रकार, धर्म, संस्कृति और सामाजिक संरचना का अध्ययन न केवल समाज को समझने के लिए आवश्यक है, बल्कि यह उसके भविष्य के निर्माण के लिए भी मार्गदर्शक सिद्ध होता है।

संदर्भ सूची :

1. दुबे, एस. सी., भारतीय समाज, राष्ट्रीय प्रकाशन, नई दिल्ली, 1970।
2. श्रीनिवास, एम. एन., भारत में सामाजिक परिवर्तन, ऑक्सफोर्ड प्रकाशन, 1966।
3. मुखर्जी, डी. पी., भारतीय संस्कृति और समाज, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1975।
4. शर्मा, रामशरण, प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, ओरिएंट ब्लैकस्वान, 1990।
5. सिंह, योगेन्द्र, भारतीय परंपरा और आधुनिकीकरण, रावत प्रकाशन, जयपुर, 1973।
6. गिडेन्स, एंथनी, समाजशास्त्र के सिद्धांत, पेंगुइन प्रकाशन, 1984।

7. पार्सन्स, टालकॉट, सामाजिक प्रणाली का सिद्धांत, फ्री प्रेस, 1951।
8. कोसंबी, डी. डी., भारतीय इतिहास का अध्ययन, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, 1965।
9. गुप्ता, दीपांकर, भारतीय समाज का पुनर्विचार, सेज प्रकाशन, 2005।
10. आंबेडकर, भीमराव, जाति का विनाश, गौतम बुक सेंटर, दिल्ली, 1936।
11. दुबे, एस. सी., भारतीय समाज और धर्म, राष्ट्रीय प्रकाशन, नई दिल्ली, 1972।
12. दिनकर, रामधारी सिंह, संस्कृति के चार अध्याय, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1956।
13. आंबेडकर, भीमराव, जाति का विनाश, गौतम बुक सेंटर, दिल्ली, 1936।
14. कापड़िया, के. एम., भारतीय परिवार व्यवस्था, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1966।
15. सिंह, योगेन्द्र, भारतीय समाज में परिवर्तन, रावत प्रकाशन, जयपुर, 2000।
16. गुप्ता, दीपांकर, भारतीय समाज का पुनर्विचार, सेज प्रकाशन, 2005।
17. श्रीनिवास, एम. एन., भारत में सामाजिक परिवर्तन, ऑक्सफोर्ड प्रकाशन, 1966।
18. शर्मा, रामशरण, भारतीय समाज का इतिहास, ओरिएंट ब्लैकस्वान, 1995।
19. कोसंबी, डी. डी., भारतीय संस्कृति और सभ्यता, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, 1965।
20. मुखर्जी, डी. पी., भारतीय सामाजिक संस्थाएँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1978।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 47-52

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

राष्ट्रीय राजनीति पर क्षेत्रीय दलों का प्रभाव : एक अध्ययन

प्रणय मणि त्रिपाठी, शोधार्थी
डॉ. संध्या शुक्ला, शोध निर्देशक
राजनीति विज्ञान, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा (म०प्र०)

सारांश :

भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है और भारतीय पार्टी प्रणाली की एक महत्वपूर्ण विशेषता बड़ी संख्या में क्षेत्रीय पार्टियों की उपस्थिति है, जिसका मूल रूप से अर्थ है 'एक ऐसी पार्टी जो एक सीमित भौगोलिक क्षेत्र के भीतर काम करती है और जिसकी गतिविधियाँ केवल एक या कुछ राज्यों तक ही सीमित होती हैं'। भारत में एक बहु–दलीय प्रणाली है जिसमें राष्ट्रीय, राज्य और जिला स्तर की पार्टियों को मान्यता प्रदान की जाती है। जो राजनीतिक पार्टियाँ स्थानीय, राज्य या राष्ट्रीय चुनाव लड़ना चाहती हैं, उन्हें भारत के चुनाव आयोग द्वारा पंजीकृत होना आवश्यक है। इस स्थिति की समय–समय पर भारत के चुनाव आयोग (ECI) द्वारा समीक्षा की जाती है। एक मान्यता प्राप्त पार्टी को कुछ विशेषाधिकार प्राप्त होते हैं, जैसे कि एक आरक्षित पार्टी चिह्न, सरकारी टेलीविजन और रेडियो पर मुफ्त प्रसारण का समय, चुनाव की तारीखें तय करने में परामर्श और चुनावी नियमों और विनियमों को निर्धारित करने में सुझाव देना। भारत के चुनाव आयोग (2018) के हालिया प्रकाशन के अनुसार, भारत में पंजीकृत पार्टियों की कुल संख्या 2,598 है, जिनमें से 8 राष्ट्रीय पार्टियाँ हैं, 52 को राज्य पार्टियों के रूप में मान्यता प्राप्त है और 2,538 गैर–मान्यता प्राप्त पार्टियाँ हैं। पंजीकृत पार्टियों को उनकी पार्टी के वस्तुनिष्ठ मानदंडों के आधार पर मान्यता प्राप्त राष्ट्रीय या राज्य स्तरीय पार्टियों के रूप में माना जाता है। ये क्षेत्रीय पार्टियाँ राष्ट्रीय पार्टियों के साथ–साथ काम करती हैं और राष्ट्रीय राजनीति पर इनका बहुत अधिक प्रभाव और असर होता है। राष्ट्रीय राजनीतिक पार्टियों के अधिक व्यापक उद्देश्यों की तुलना में, ये क्षेत्रीय पार्टियाँ किसी विशेष क्षेत्र के हितों, आवश्यकताओं और जरूरतों का प्रतिनिधित्व करती हैं। क्षेत्रीय पार्टियाँ अनिवार्य रूप से विशिष्ट मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करती हैं, जैसे कि नदी के पानी का उपयोग, स्थानीय रोजगार के अवसर पैदा करना, लोगों की स्थानीय जरूरतों को पूरा करना आदि। सरल शब्दों में, क्षेत्रीय पार्टियाँ अपने उद्देश्यों, दृष्टिकोण, कार्यप्रणाली के साथ–साथ जिन हितों का वे अनुसरण करती हैं, उन दोनों ही मामलों में राष्ट्रीय पार्टियों से भिन्न होती हैं। यह शोध पत्र राष्ट्रीय नीतियों और राजनीति के संचालन में क्षेत्रीय पार्टियों द्वारा निभाई गई भूमिका और उनके प्रभाव को उजागर करने का प्रयास करता है।

मुख्य शब्द : लोकतंत्र, चुनाव प्रणाली, बहु–दलीय प्रणाली, क्षेत्रीय दल, स्थानीय उद्देश्य, क्षेत्रीय मांग।

परिचय :

भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है और भारतीय दल प्रणाली की एक महत्वपूर्ण विशेषता बड़ी संख्या में क्षेत्रीय दलों की उपस्थिति है। इसका मूल अर्थ है 'एक ऐसा दल जो एक सीमित भौगोलिक क्षेत्र के भीतर काम करता है और जिसकी गतिविधियाँ केवल एक या कुछ राज्यों तक ही सीमित होती हैं'। ये क्षेत्रीय दल राष्ट्रीय दलों के साथ–साथ काम करते हैं और राष्ट्रीय नीतियों पर इनका भारी प्रभाव और असर होता है। क्षेत्रीय दलों के संचालन, उद्देश्य और कार्यप्रणाली एक विशेष भौगोलिक क्षेत्र तक ही सीमित होती है। ये क्षेत्रीय दल केवल राज्य या क्षेत्रीय स्तर पर सत्ता हासिल करने की कोशिश करते हैं और इनका लक्ष्य राष्ट्रीय सरकार या पूरे देश के प्रशासन को नियंत्रित करना नहीं होता। क्षेत्रीय दल 'नीचे से ऊपर' (bottom-up) दृष्टिकोण का पालन करते हैं और उसी पर अपना ध्यान केंद्रित करते हैं। भारत में, क्षेत्रीय दलों की संख्या राष्ट्रीय दलों की तुलना में कहीं अधिक है। आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, कर्नाटक, केरल, असम, जम्मू और कश्मीर जैसे कुछ राज्यों में, क्षेत्रीय दल स्थानीय प्रशासन या सरकार बनाने में निर्णायक भूमिका निभाते हैं। अधिकांश समय, अपनी सीमित शक्ति के कारण, वे स्वतंत्र रूप से सत्ता में नहीं आ पाते। लेकिन यह एक सर्वविदित और स्वीकृत तथ्य है कि कई बार, राजनीतिक परिदृश्य में, ये क्षेत्रीय दल स्वयं राजा न होते हुए भी, वास्तव में 'राजा बनाने वाले' (king-makers) साबित हुए हैं।

भारत एक बहुभाषी और बहुसांस्कृतिक राष्ट्र है। भारत का विशाल भौगोलिक क्षेत्र, इसकी विविध संस्कृति, भारतीय समाज की अनूठी विशेषताएं, समान मतदान के अवसर सुनिश्चित करने वाले संवैधानिक प्रावधान, वयस्क मताधिकार और भारतीय समाज के कई अन्य कारकों ने भारत में बड़ी संख्या में राजनीतिक दलों के उदय में योगदान दिया है। क्षेत्रीय राजनीतिक दलों की भूमिका और महत्व को समझने के लिए कई शोध किए गए हैं। इन शोधों में यह देखा गया है कि राष्ट्रीय दलों की तुलना में, क्षेत्रीय दल क्षेत्रीय मांगों और आकांक्षाओं को समझने की बेहतर स्थिति में होते हैं। इसके अतिरिक्त, भारत में प्रचलित भाषाई और सांस्कृतिक विविधताओं ने अलगाववादी प्रवृत्तियों को भी जन्म दिया है। किसी विशेष भाषाई क्षेत्र में रहने वाले लोग उस क्षेत्र के साथ अपनी पहचान बनाने और उससे जुड़ाव महसूस करने लगते हैं। राजनीतिक दल भी क्षेत्रीय, जातीय और सांस्कृतिक कारकों का लाभ उठाने की कोशिश करते हैं। एक अन्य दृष्टिकोण से, क्षेत्रों के असमान विकास ने भी भेदभाव और अलगाव की भावना को जन्म दिया है, जिसके परिणामस्वरूप क्षेत्रीय दलों का गठन हुआ है।

स्वतंत्रता के बाद से, भारत में कई क्षेत्रीय राजनीतिक दल उभरे हैं और उन्होंने कुछ राज्यों में महत्वपूर्ण प्रभाव हासिल किया है। कुछ राजनीतिक पर्यवेक्षकों का मानना है कि यह रुझान 'क्षेत्रवाद के फिर से उभरने' का एक स्पष्ट संकेत है। इसका आधार यह है कि भारत में न केवल क्षेत्रीय पार्टियों की संख्या बढ़ रही है, बल्कि समय बीतने के साथ–साथ ज्यादा से ज्यादा क्षेत्रीय पार्टियाँ सत्ता में भी आ रही हैं। यह बढ़ता हुआ रुझान केंद्र और विभिन्न राज्यों के बीच राजनीतिक शक्ति में अधिक संतुलन लाएगा। इसी वजह से, भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र होने के साथ–साथ, बड़ी संख्या में क्षेत्रीय राजनीतिक पार्टियों और उनके विशाल सदस्य आधार के लिए भी जाना जाता है। एक अनुमान के अनुसार, भारत की 190 मिलियन से भी अधिक आबादी का शासन क्षेत्रीय पार्टियों द्वारा किया जा रहा है।

भारत में क्षेत्रीय दल प्रणाली का विकास :

1951–1952 में हुए पहले आम चुनावों के बाद से, भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में कई क्षेत्रीय और उप–क्षेत्रीय राजनीतिक दलों का उदय हुआ है। क्षेत्रीय दल आम तौर पर कांग्रेस या अन्य राजनीतिक दलों के भीतर गुटबाजी के कारण बने थे, ये दल सत्ता के गलियारों में जगह मिलने पर पूरी तरह से खत्म हो गए या अपने मूल संगठनों में ही समाहित हो गए। इनमें से कुछ राजनीतिक दलों की सत्ता हासिल करने के अलावा कोई विशेष विचारधारा नहीं थी। हालाँकि क्षेत्रीय दल बहुत सीमित क्षेत्र में काम करते हैं और केवल सीमित उद्देश्यों का ही पीछा करते हैं, फिर भी उन्होंने राज्य और राष्ट्रीय, दोनों ही स्तरों की राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। क्षेत्रीय राजनीतिक दलों ने कई राज्यों में सरकारें बनाईं और अपनी नीतियों तथा कार्यक्रमों को ठोस रूप देने का प्रयास किया। अधिकांश क्षेत्रीय दलों का नेतृत्व प्रमुख दलों के असंतुष्ट नेताओं द्वारा किया जाता था, जिनके पास किसी उचित संगठन का कोई कैडर नहीं होता था। अधिकांश मामलों में, क्षेत्रीय दलों का उदय कांग्रेस पार्टी की अत्यधिक केंद्रीयता और एकाधिकारवादी राजनीति के कारण हुआ है।

1967 में हुए चौथे आम चुनावों के बाद, क्षेत्रीय राजनीतिक दलों का सत्ता में आना और कुछ राज्यों में इन दलों द्वारा निभाई गई महत्वपूर्ण भूमिका विशेष रूप से उल्लेखनीय है। अतः, क्षेत्रीय राजनीतिक दल, जो 'क्षेत्रवाद' को दर्शाते हैं, धीरे–धीरे और अधिक प्रमुख होते चले गए। क्षेत्रवाद एक भावना या विचारधारा है जो किसी विशेष भौगोलिक क्षेत्र में रहने वाले लोगों के एक वर्ग में पाई जाती है, इस क्षेत्र की अपनी अनूठी भाषा, संस्कृति, परंपरा आदि होती है। इस भावना में यह विश्वास निहित होता है कि स्थानीय क्षेत्र में उपलब्ध प्रत्येक अवसर पर पहला अधिकार इसी क्षेत्र के मूल निवासियों का होना चाहिए, न कि बाहरी लोगों का।

क्षेत्रवाद की भावना या तो सत्ताधारी अधिकारियों द्वारा किसी विशेष क्षेत्र या इलाके की लगातार उपेक्षा के कारण उत्पन्न हो सकती है, अथवा यह उन पिछड़े लोगों में बढ़ती राजनीतिक चेतना के परिणामस्वरूप भी उभर सकती है जिनके साथ भेदभाव किया गया है। अक्सर, कुछ राजनीतिक नेता किसी विशेष क्षेत्र या लोगों के समूह पर अपनी पकड़ बनाए रखने के लिए क्षेत्रवाद की भावना को बढ़ावा देते हैं। यह एक ऐसा राजनीतिक गुण है जो लोगों के अपने क्षेत्र, संस्कृति, भाषा आदि के प्रति प्रेम से जुड़ा होता है, जिसका उद्देश्य अपनी स्वतंत्र पहचान को बनाए रखना होता है। जहाँ एक ओर सकारात्मक क्षेत्रवाद एक स्वागत योग्य बात है, क्योंकि यह लोगों को समान भाषा, धर्म या ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के आधार पर भाईचारे और अपनेपन की भावना विकसित करने के लिए प्रेरित करता है। क्षेत्रवाद का नकारात्मक पहलू देश की एकता और अखंडता के लिए एक बड़ा खतरा है। भारतीय संदर्भ में, आमतौर पर 'क्षेत्रवाद' शब्द का इस्तेमाल नकारात्मक अर्थ में ही किया गया है

क्षेत्रीय दलों के विकास में योगदान देने वाले कारक :

क्षेत्रीय राजनीतिक दलों का विकास तेजी पकड़ रहा है, क्योंकि वे मूल रूप से केंद्र सरकार से अधिक राजनीतिक स्वायत्तता और काम करने की स्वतंत्रता चाहते हैं। यह स्थिति तब पैदा होती है, जब राज्य केंद्र से अलग होने की मांग करते हैं और अपनी एक स्वतंत्र पहचान बनाने की कोशिश करते हैं। ये क्षेत्रीय राजनीतिक दल अपनी अलग राजनीतिक पहचान बनाने की कोशिश करते हैं और केंद्र सरकार के शिकंजे से मुक्त होना चाहते हैं। राज्यों के स्थानीय मामलों में केंद्र के बढ़ते हस्तक्षेप ने क्षेत्रीय भावनाओं और स्थानीय हितों को ठेस पहुँचाई है। राज्यों के बीच नदी के पानी के बँटवारे को लेकर विवाद, राज्यों द्वारा बहुसंख्यक भाषा को दी जाने

वाली प्राथमिकता, और रोजगार के अवसरों में अपने ही राज्य के लोगों को दी जाने वाली तरजीह ने भी क्षेत्रवाद की भावनाओं को बढ़ावा दिया है। रोजगार के अवसरों की तलाश में पिछड़े राज्यों से विकसित राज्यों की ओर लोगों के पलायन के कारण अक्सर प्रवासियों के प्रति शत्रुतापूर्ण रवैया देखने को मिला है। इसलिए, स्वायत्तता की मांग ही क्षेत्रीय राजनीतिक दलों का एकमात्र साझा उद्देश्य रहा है।

हालाँकि, ऐसे कई कारक हैं जिनके कारण भारत में क्षेत्रीय दलों का विकास हुआ है। उनमें से कुछ इस प्रकार हैं :

1. पिछड़े क्षेत्रों के लोगों में बढ़ती यह जागरूकता कि उनके साथ भेदभाव किया जा रहा है, ने भी क्षेत्रवाद की भावना को बढ़ावा दिया है। स्थानीय राजनीतिक नेताओं ने इस कारक का पूरा फायदा उठाया है और लोगों के मन में यह विचार बिठाने की कोशिश की है कि केंद्र सरकार जान–बूझकर कुछ क्षेत्रों के सामाजिक और आर्थिक विकास की उपेक्षा करके क्षेत्रीय असंतुलन बनाए रखने की कोशिश कर रही है।
2. भारतीय संघीय व्यवस्था की विभिन्न इकाइयों की अपनी उप–सांस्कृतिक क्षेत्रों को बनाए रखने और अधिक हद तक स्व–शासन की इच्छा ने क्षेत्रवाद को बढ़ावा दिया है और अधिक स्वायत्तता की मांग को जन्म दिया है।
3. केंद्र सरकार की नीतियों का विरोध करने के लिए– जब केंद्र सरकार सभी लोगों और समूहों पर कोई विशेष विचारधारा, भाषा या सांस्कृतिक पैटर्न थोपने की कोशिश करती है। उदाहरण के लिए : भारत के दक्षिणी राज्यों ने हिंदी को राजभाषा के रूप में थोपे जाने का विरोध किया, क्योंकि उन्हें यह आशंका थी कि इससे उत्तर भारत का वर्चस्व स्थापित हो जाएगा। इसी तरह, असम में असमिया लोगों ने अपनी संस्कृति को बचाने के लिए 'विदेशी–विरोधी आंदोलन' चलाया। सत्ता पर काबिज होने की इच्छा। यह सर्वविदित है कि DMK, AIADMK, अकाली दल, तेलुगु देशम, असम गण परिषद, जनता दल (S) आदि जैसे राजनीतिक दलों ने स्थानीय समस्याओं को सामने रखकर और सत्ता में आने पर उन समस्याओं को हल करने का वादा करके चुनाव लड़ा है।
4. सत्ताधारी दलों द्वारा किसी क्षेत्र या इलाके की लगातार उपेक्षा और प्रशासनिक व राजनीतिक सत्ता का एक ही जगह केंद्रित होना– सत्ता के विकेंद्रीकरण और भाषाई आधार पर बने राज्यों के विभाजन की मांग को जन्म देता है। कई बार राज्य के उपेक्षित समूहों या क्षेत्रों के हितों को बढ़ावा देने के लिए 'भूमि–पुत्र सिद्धांत' (Sons of Soil Theory) को भी सामने रखा गया है।
5. आधुनिकीकरण और जन–भागीदारी की शक्तियों के बीच आपसी तालमेल ने भी भारत में क्षेत्रवाद के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। चूंकि देश अभी भी एक 'राष्ट्र–राज्य' बनने के लक्ष्य से काफी दूर है, इसलिए विभिन्न समूह अपने समूह–हितों को राष्ट्रीय हितों के साथ जोड़ने में असफल रहे हैं, यही कारण है कि क्षेत्रवाद की भावना अभी भी बनी हुई है।

राष्ट्रीय राजनीति पर क्षेत्रीय दलों की भूमिका और प्रभाव :

भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में क्षेत्रीय राजनीतिक दलों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। एक ओर, क्षेत्रीय दलों ने सहभागी राजनीतिक संस्कृति के विकास में मदद की है और केंद्र सरकार की वर्चस्ववादी प्रवृत्तियों पर अंकुश लगाने का काम किया है, वहीं दूसरी ओर, वे भारत में संघीय प्रक्रिया के विकास के लिए शक्ति का एक स्रोत भी हैं। क्षेत्रीय दल राष्ट्र के सामान्य कल्याण की तुलना में, कुछ विशिष्ट समूहों के हितों को लेकर

अधिक चिंतित रहते हैं। क्षेत्रीय दल किसी विशेष जातीय, भाषाई या धार्मिक समूह के हितों का प्रतिनिधित्व करते हैं। पिछले कुछ वर्षों में भारत के राजनीतिक विकास का सबसे उल्लेखनीय पहलू, निस्संदेह, क्षेत्रीय दलों की बढ़ती उपस्थिति और महत्ता है। इन्होंने राजनीतिक प्रक्रिया के पुनर्संरेखण को गति प्रदान की है, और राजनीति की संरचना तथा प्रक्रिया पर इनका प्रभाव बहुआयामी और दूरगामी रहा है। क्षेत्रीय दलों ने भारत में केंद्र–राज्य संबंधों की प्रकृति पर गहरा प्रभाव डाला है। भारत जैसे बहु–जातीय, बहु–नस्लीय, बहु–धार्मिक और बहु–भाषाई समाजों में, वयस्क मताधिकार पर आधारित लोकतांत्रिक व्यवस्था का ये एक स्वाभाविक परिणाम हैं। इस प्रकार, क्षेत्रीय दलों का विकास लोकतंत्र की संपूर्ण भावना के साथ पूर्ण सामंजस्य में है।

पर्यवेक्षक क्षेत्रीय पार्टियों को शासन को फिर से परिभाषित करने वाले उत्प्रेरक के रूप में देखते हैं। अपनी बात साबित करने के लिए, वे राज्य के नेताओं के एक नए वर्ग के उदय की ओर इशारा करते हैं 'जैसे बिहार में जनता दल (यूनाइटेड) के नीतीश कुमार या ओडिशा में बीजू जनता दल के नवीन पटनायक' जिन्होंने यह साबित कर दिया है कि अच्छी अर्थव्यवस्था अच्छी राजनीति भी बन सकती है।

विदेश नीति पर क्षेत्रीय पार्टियों का प्रभाव बढ़ रहा है। इस बात से शायद ही कोई इनकार कर सके कि विदेश नीति के क्षेत्र में क्षेत्रीय पार्टियों की भूमिका समय के साथ बढ़ी है, लेकिन यह बात उतनी स्पष्ट नहीं है कि हाल ही में सुर्खियों में आए टकराव, इस क्षेत्र में अपनी आवाज उठाने के संघर्ष में कोई नया या ज्यादा महत्वपूर्ण मोड़ लाते हैं। क्षेत्रीय पार्टियों के दो प्रमुख उदाहरण हैं, जब उन्होंने केंद्र सरकार के महत्वपूर्ण विदेश नीति निर्णयों में खुद को शामिल किया। तृणमूल कांग्रेस पार्टी की प्रमुख ममता बनर्जी ने व्यक्तिगत रूप से एक जल–बंटवारा समझौते को रद्द कर दिया, जिसे नई दिल्ली ने तीस्ता नदी को लेकर बांग्लादेश के साथ बड़ी मेहनत से बातचीत करके तैयार किया था। यह संधि, पूर्व में स्थित अपने पड़ोसी देश के साथ संबंध सुधारने की केंद्र सरकार की योजनाओं का एक महत्वपूर्ण हिस्सा थीकृकम से कम तब तक तो थी ही, जब तक बनर्जी ने प्रभावी रूप से इस कदम को वीटो नहीं कर दिया। इसी तरह, तमिलनाडु की द्रविड़ मुन्नेत्र कजगम पार्टी ने केंद्र सरकार के उस समर्थन के विरोध में सत्ताधारी गठबंधन छोड़ दिया, जिसे पार्टी ने श्रीलंका सरकार द्वारा अपने तमिल अल्पसंख्यक के साथ किए जा रहे व्यवहार पर संयुक्त राष्ट्र के एक 'कमजोर शब्दों वाले' प्रस्ताव के रूप में देखा था। फिर भी, इस तरह की विदेश नीति की पैंतरेबाजी उतनी नई नहीं है, जितना अक्सर इसे प्रचारित किया जाता है। 1991 में भारतीय अर्थव्यवस्था के खुलने के बाद से, राज्यों ने लगातार अपनी नई मिली आर्थिक नीतिगत स्वतंत्रता का उपयोग करते हुए, विदेशी निवेशकों को आकर्षित करने के लिए अपनी खुद की रणनीतियाँ बनाई हैं– भले ही नई दिल्ली का दृष्टिकोण कुछ भी रहा हो।

क्षेत्रीय पार्टियों ने स्थानीय मुद्दों के बेहतर प्रतिनिधित्व के लिए एक मंच प्रदान किया है, उदाहरण के लिए, मिजो नेशनल फ्रंट ने जनजातियों की मांगों को आगे बढ़ाया है। क्षेत्रीय पार्टियों ने राज्यों को अपनी आवाज और मोल–भाव की शक्ति प्रदान करके भारतीय लोकतंत्र के संघीय ताने–बाने को भी मजबूत किया है। उन्होंने राजनीतिक प्रक्रिया को और अधिक प्रतिस्पर्धी बनाया है, और नेतृत्व की भूमिका को केवल बड़ी पार्टियों के चंगुल से बाहर निकाला है। इसने 'एक–पार्टी–प्रभुत्व' वाली व्यवस्था को 'विशेष रूप से 'कांग्रेस–युग' के दौरान' चुनौती दी है, और इस प्रकार किसी एक पार्टी के एकाधिकार को तोड़ने में मदद की है। इसके अलावा, इसने मतदाताओं के लिए उपलब्ध विकल्पों का विस्तार करने में भी सहायता की है। अब कोई भी मतदाता उस पार्टी

को वोट दे सकता है, जो उसके अपने राज्य के हितों का प्रतिनिधित्व करती हो। क्षेत्रीय पार्टियों के प्रयासों के कारण लोगों में राजनीतिक जागरूकता बढ़ी है, वे संकीर्ण और स्थानीय सामाजिक मुद्दों पर ध्यान देते हैं और उन्हें जनता के सामने लाते हैं। इस प्रकार, वे आम लोगों के बीच अधिक राजनीतिक चेतना जगाते हैं। वे अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधित्व के लिए एक मंच प्रदान करते हैं, जिससे लोकतंत्र सफल बनता है। क्योंकि लोकतंत्र का उद्देश्य बहुमत और अल्पसंख्यक, दोनों का समान प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करना है। क्षेत्रीय पार्टियाँ सत्ताधारी पार्टी के मनमाने रवैये को रोकने में भी मदद करती हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि जो पार्टी केंद्र और राज्य, दोनों जगहों पर सत्ता में होती है, उसका रवैया तानाशाही और पक्षपातपूर्ण हो सकता है। गठबंधन की राजनीति के दौर में भी उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, जहाँ वे अपने क्षेत्रों के लाभ के बदले अन्य पार्टियों को समर्थन देते हैं।

निष्कर्ष :

बदलते राजनीतिक परिदृश्य ने क्षेत्रीय दलों की एक नई और उभरती हुई भूमिका सामने लाई है। क्षेत्रीय राजनीतिक दलों के उदय, उनकी बढ़ती संख्या और बढ़ती लोकप्रियता ने एक नई सोच को बढ़ावा दिया है, जो इस बात को स्वीकार करती है कि राष्ट्र–निर्माण की प्रक्रिया में क्षेत्रीय दल एक सकारात्मक भूमिका निभा सकते हैं। राष्ट्रीय राजनीति में क्षेत्रीय राजनीतिक दलों की भागीदारी भारतीय राजनीति और संघवाद का एक नया पहलू बन गई है। क्षेत्रीय दलों ने स्थानीय मुद्दों को बेहतर ढंग से प्रस्तुत करने के लिए एक मंच प्रदान किया है। इसके साथ ही, क्षेत्रीय दलों ने राज्यों को अपनी बात रखने का अवसर और मोल–भाव करने की शक्ति प्रदान करके भारतीय लोकतंत्र के संघीय ढांचे को भी मजबूत किया है। उन्होंने राजनीतिक प्रक्रिया को अधिक प्रतिस्पर्धी बनाया है और नेतृत्व की भूमिका को बड़े दलों के एकाधिकार से मुक्त कराया है।

संदर्भ :

1. रिचर्ड एल. पार्क और ब्यूनो डी मेस्किटा, इंडियन पॉलिटिकल सिस्टम, प्रेंटिस हॉल, 1979, पृ. 110.
2. एम. लक्ष्मीकांत, इंडियन पॉलिटी, टाटा मैकग्रा हिल, नई दिल्ली, 2015, पृ. 59.5.
3. पी. एस. कोकाटनूर, पॉलिटिकल पार्टीज इन इंडिया : एन ओवरव्यू, इंडियन स्ट्रीम्स रिसर्च जर्नल, खंड 3, जनवरी 2018, पृ. 1–4.
4. रजनी कोठारी, पॉलिटिक्स इन इंडिया, ओरिएंट लॉन्गमैन, नई दिल्ली, 1995, पृ. 200.
5. रुचि त्यागी, रोल ऑफ रीजनल पॉलिटिकल पार्टीज इन इंडिया, जर्नल साउथ एशिया पॉलिटिक्स, जुलाई 2016, पृ. 40–41.
6. रजनी कोठारी, पॉलिटिक्स एंड द पीपल इन सर्च ऑफ अ ह्यूमेन इंडिया, खंड 1, अजंता पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1999, पृ. 105–108.
7. पेउ घोष, इंडियन गवर्नमेंट एंड पॉलिटिक्स, PHI लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2018.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 53-63

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

SYRIAN DISPLACEMENT AND THE INTERNATIONAL ORDER

Gagandeep Kaur

Assistant Professor, Department of Political Science,

SMHS Government College, Mohali, Punjab.

Abstract :

The long-standing Syrian crisis, which began in 2011, has led to one of the greatest displacement crises in modern world politics, profoundly affecting the rules and structures of the international order. This article explores the impact of mass displacement from Syria (refugees, asylum seekers and internally displaced persons) on the ability, legitimacy and coherence of global governance institutions. It examines how key international actors, including the United Nations, regional organisations and major nations, respond to humanitarian needs while taking into account conflicting geopolitical interests. The report contends that Syrian displacement has revealed major weaknesses in the international refugee regime, especially in terms of burden sharing, legal protection and long-term resettlement schemes. Coun, tries such as Turkey, Lebanon and Jordan have faced a disproportionate burden, exposing structural inequities in the global system. At the same time, the tightening of refugee laws and the emergence of a security-driven approach in parts of Europe have exposed the conflicts between humanitarian commitments and domestic political reasons. This study contextualises the Syrian displacement issue within wider debates on sovereignty, human rights and international cooperation to shed light on its consequences for the development of the international order. It concludes that the crisis symbolises the failure of multilateral consensus and the necessity to modify arrangements for global governance in order to provide more equitable and effective responses to large-scale human displacement.

Keywords : Syrian civil war, Refugee crisis, Global governance and Human rights.

Introduction :

The Syrian crisis and enormous displacement show how the international system fails to prevent and resolve violent conflicts. The UN was founded to "save the succeeding generations from the scourge of war," and the UNSC was tasked with safeguarding global peace and security.[1] However, Syria has severely challenged these commitments. In the early 2000s, the "Responsibility to Protect" (R2P) ideology was optimistic but failed to stop atrocities or protect civilians. While the UN has shown flexibility and robust action in Côte d'Ivoire, Chad, and Mali, as well as its innovative peacekeeping operations in South Sudan, the Syrian crisis highlights the paralysis that results when major powers fail to reach consensus and remain divided. Repeatedly passed UNSC resolutions demanding end to conflict, protection of people and removal of sieges, yet these resolutions have had little concrete influence on the ground. The December 2015 endorsement of a plan for peace in Syria – calling for UN-led negotiations on political transition and an immediate cease-fire – remained essentially aspirational.[2] This long-delayed idea was bogged down in its implementation by persistent political impasse, deep-rooted geopolitical conflicts and divergent strategic interests. The situation also underscores the limits of regional organisations to respond to the enormous displacement of the Syrian conflict.

The Role of Regional Organizations :

The Arab League and OIC suspended Syria's membership in 2011 and 2012, respectively, although neither has implemented conflict-resolution initiatives. The Arab League, which first favoured military involvement in Libya but then reversed course, was mostly silent in Syria. Similar to the OIC, its member states have unable to agree on the Syrian situation. In actuality, the Arab League and OIC have limited their actions to calling for UN intervention.[3] Regional actors in the Middle East have failed to rise above entrenched political divisions and offer a viable conflict resolution strategy for Syria or a coherent refugee crisis management strategy, even though member states like Turkey, Jordan, and Lebanon are among the most directly affected by the displacement.

The EU has actively addressed the Syrian crisis, but it has not ended the fighting or created a coherent refugee response. The EU supports UN-led political solutions more than the Arab League and OIC. However, it has mostly relied on the same strategy of urging the

UN to lead the conflict resolution, highlighting regional organisations' lack of political will and institutional capacity to end Syria's civil war. The absence of European cooperation in responding to the 2013–14 Mediterranean migration crisis and the 2015 maritime and land flood prompted fundamental issues about European integration. Instead of forging a stronger unity through a shared crisis response, EU member states typically took a "beggar-thy-neighbour" strategy. Both the refugee flows from Syria, Afghanistan, Iraq, and elsewhere and the political repercussions of the November 2015 Paris terrorist attacks threatened European cohesion and free movement across borders, including the Schengen Agreement.[4]

The Political Nature of Humanitarian Crises :

The resolution of Syria's refugee and internally displaced persons (IDP) crisis ultimately lies in a political solution. Within humanitarian circles, it is often said that "there are no humanitarian solutions to humanitarian crises." Lasting solutions must come through political means, when opposing groups within a society reach a political agreement. This principle is especially evident in the case of Syria. As former U.S. Secretary of State Madeleine Albright observed, the Syrian conflict "is not only a humanitarian emergency, but also a political emergency. It is a series of political failures that have led to the grave situation that we find today." [5] No matter how much humanitarian aid is mobilized, how many aid workers are deployed, or how many refugees are resettled, Syria's humanitarian crisis will persist until the conflict is resolved—and likely beyond, as the long-term consequences of displacement and destruction unfold.

Resettlement as a Protection Tool :

Resettlement, unlike asylum, involves locating, choosing, verifying, and transporting refugees from first refuge to third nations beyond the region of displacement. After the Second World War and institutionalised during the Cold War, resettlement has protected refugees at risk and provided a long-term solution for vulnerable refugees. It is bureaucratic, resource-intensive, and time-consuming, costing about $15,000 each settled individual.[6] Despite these limitations, relocation is one of the few permanent possibilities. Research shows that resettled refugees integrate well into host cultures and contribute to economic, social, and cultural life. The US has led the global resettlement policy, making this especially true. In the current political climate, reinvigorating resettlement will require renewed leadership and persistent commitment from the EU and US to promote and implement Syrian refugee resettlement policies. A strong resettlement program is needed to strengthen the idea

of burden-sharing, which underpins the global refugee protection system and the transatlantic community's principles.

The Need for Refugee Livelihoods :

Any durable resolution to the Syrian conflict must explicitly account for the realities of displacement. The prospects for large-scale refugee return are exceedingly limited, as deep grievances, trauma, and a pervasive sense of alienation continue to characterize the experiences of displaced Syrians. Empirical research suggests that peace processes which do not take into account the desires of the displaced populations are rarely sustainable.[7] By framing displacement primarily in terms of return of the refugees, the UN Security Council's resolutions adopt a view that overly reductive and insufficient for addressing the multifaceted realities of displacement. [8]

In the case of Syrian refugees, large-scale returns it is unlikely and improbable in the near future, and when they eventually occur, they will require a substantial reintegration support mechanism to rebuild livelihoods and restore social cohesion. Enabling refugees to develop their own livelihoods in exile would not only strengthen the economies of the host nations but also enhance the long-term resilience of displaced communities, thereby increasing the feasibility of voluntary and sustainable return when conditions permit. A 2015 World Bank report on Syrian refugees in Turkey underscored taking a more developmental approach to supplement the humanitarian response, noting that when refugees are granted opportunities for socio-economic self-reliance, freedom of movement and adequate protection, they are more likely to contribute to host societies and to undertake successful reintegration upon return. [9]

Accountability, Governance, and Human Rights Violations :

To cite the Independent International Commission of Inquiry on the Syrian Arab Republic:

> "*Government forces have committed gross violations of human rights and the war crimes of murder, torture, rape, sexual violence and targeting civilians. Government forces disregarded the special protection accorded to hospitals and medical personnel. Anti-Government armed groups have committed the war crimes of murder, execution without due process, torture, hostage-taking and attacking protected objects. The litany of abuses listed here captures only part*

of the trauma experienced by Syrian civilians, as the world stands witness."[10]

Syrian displacement cannot be divorced from larger problems of accountability and governance but also presents unique challenges for the international community in responding to large-scale humanitarian catastrophes. Within this environment, two distinct perspectives are discernible: bottom-up and top-down. The latter is thus the more familiar and, for both scholars and national and international players, the more comfortable approach. From this vantage point, it seems more feasible to design comprehensive frameworks and strategies for refugee assistance, some of which are discussed below, than to navigate the complex and frequently overlooked realities of how refugees and internally displaced persons (IDPs) sustain themselves in the absence of formal international support.

The Urgency of a Coordinated Global Response :

Syria is the world's most complex humanitarian disaster. Human suffering is vast, and its effects on world peace and security are dire. In this situation, world leaders must show the political will to find solutions, even if they are difficult. This problem spans continents and strains international institutions. Syria presents an extraordinary opportunity for the international community to organise and mobilise to address a humanitarian crisis. If a new "grand experiment" in Syrian displacement succeeds, it might lead to new collective action for future humanitarian crises. Negotiating a New Global Approach for Syrian refugees would be difficult and need many actors to take on new roles. Middle Eastern regional organisations must be more assertive and effective. This would require political risk-taking, collaboration across old divides, and setting aside substantial differences to prioritise humanitarian imperatives and regional public good. If effective, humanitarian cooperation could develop confidence and lead to regional collaboration in other areas.

Host governments would have to face the political and economic risks of opening their employment markets to refugees and of giving them a more stable legal status than they presently have. In return for such actions, host governments should reasonably expect to obtain more domestic stability as well as more predictable and consistent international financial support not only for refugee-related purposes but also to advance their broader development goals. It would not only be the usual group of primarily Western states, but donor governments as a whole that would need to recommit to refugee protection as an international responsibility and to show this via practical action in support of host countries on the frontline. For Western donors, this would also mean more openness to leadership and

ideas of policy innovation coming from growing donor states such as China and Turkey, as a necessary trade-off for securing their commitment and engagement in international burden-sharing.

Governments outside the region would need to make additional commitments to refugee resettlement and contribute to reforming the resettlement system itself, so that it can better respond to the needs of future refugee emergencies.

International nongovernmental organisations (NGOs) have played beneficial roles in supporting both refugees and internally displaced persons (IDPs) and would need to re-evaluate their styles of engagement with local NGOs and diaspora groups. that provide particular resources to help Syria's refugees but often are not at the table in coordination procedures. Often these actors provide critical resources and insights but are not well represented in conventional coordination systems. The Syrian crisis therefore offers an opportunity to bridge the gap between international and national players, and to build more imaginative relationships between the two. These synergies would be especially crucial in conducting a complete needs assessment, which would be key to the design and execution of any new Global Approach for Syria.

Political risks from these moves cannot be taken by one player. However, if all parties are willing to make tough decisions, a new consensus is possible. Despite their political difficulty, the decisions may have long-term benefits. Most importantly, they handle the Syrian refugee issue, a grave threat to international peace and security. This "grand experiment" in Syria could inspire community approaches to other large-scale humanitarian challenges. In 2016, the UN held the World Humanitarian Summit and the High-Level Plenary on Large Movements of Refugees and Migrants in September under the Secretary-General's auspices to generate international momentum. These global events and Syria-specific projects sought new ways to help Syrian refugees and address forced displacement.

Precedents for regional refugee and IDP resolutions are available. The Comprehensive Plan of Action for Indochinese Refugees (1988–1996) and the International Conference on Central American Refugees (1987–1994) stand out.[11] In 1989, hundreds of thousands of Vietnamese refugees fled by land and water, prompting the Indochina plan. Due to the large number of refugees, neighbouring states closed borders and deported refugees, so the plan changed: large numbers of refugees were resettled in third countries, some stayed in host states, and some were repatriated to Vietnam. In a politically volatile climate, the Central American conference brought together governments, international organisations, and civil society groups to discuss refugee and IDP issues. It was also an uncommon and successful

humanitarian-development partnership. Both endeavours required enormous international time, resources, and political resolve. Despite the challenges, they resolved severe displacement problems in their regions using different but effective methods.

There has already been a discernible pattern of international meetings on Syria, although these have largely focused on mobilizing financial contributions. Regional engagement, by contrast, has been far more limited. As noted earlier, the Organization of Islamic Cooperation (OIC) has not assumed a proactive role in addressing the refugee dimension of the crisis. This is particularly notable given that, according to UNHCR's Mid-Year Trends 2015 report, six Muslim-majority states are among both the top ten refugee-sending and the top ten refugee-receiving countries.[12] The majority of Syrian refugees originate from OIC member states and the organization itself is headquartered in Saudi Arabia, a leading donor to the Syrian humanitarian response. Yet, despite these factors, the OIC has thus far failed to coordinate the efforts of its membership in a coherent and effective response to the Syrian refugee situation.

Towards a New Global Approach for Syria :

A new global strategy for Syria could build on the lessons of the Indochina and Central American initiatives of the late twentieth century by integrating several core elements: a commitment to keeping regional borders open to refugees, strengthening support mechanisms to enhance refugee resilience, developing long-term and sustainable solutions, strategically deploying resettlement as a protection tool, and providing increased assistance to host countries, particularly in generating livelihood opportunities for the refugees. While each of these measures is demanding in terms of political will and resources, their collective pursuit may prove more feasible, and ultimately more effective, than attempting to advance them in isolation.

A New Global Approach for Syria should help refugee-hosting nations create common laws and policies. Ratification of the 1951 Refugee Convention and official refugee status determination procedures are ideal. Given present political realities and the long-term nature of such reforms, unifying regional legal norms for interim protection, inspired by Turkey's experience, would be more pragmatic. A regional pact patterned after the EU–Turkey deal might help host nations build capacity, while a regional forum could encourage common refugee treatment standards.[13] Within this paradigm, relocation must be emphasised as essential to refugee protection and support. Resettlement has played a negligible role in tackling the Syrian crisis, thus it must be enhanced and redefined as a strategic tool in the

New Global Approach for Syria. This will require major reassessment by UNHCR, conventional resettlement nations, and states that have not yet resettled refugees.

The New Global Approach for Syria must redefine humanitarian-development linkages. Recognition of refugees' economic potential is necessary to increase their education and livelihoods. For host governments, this will require tough policy decisions to help refugees find work. Meanwhile, the international community must transition from short-term humanitarian help to long-term development. Although such a change has not been undertaken during a conflict, recent projects suggest it is doable and practicable. The UN's Regional Refugee and Resilience strategy, the World Bank's new Middle East and North Africa strategy, and associated programs suggest integrating humanitarian and development solutions. Development institutions, lead by the World Bank, must change their procedures to allow middle-income host governments like Jordan, Lebanon, and Turkey to receive grants and other help. Development institutions and humanitarian aid agencies must also improve coordination. The World Bank's expanding regional approach to Middle East and North Africa relies on these initiatives to support refugees and host communities and promote stakeholder cooperation.

The World Bank is showing signs of taking a more active role in tackling protracted displacement and contributing to long-term solutions.[14] Such engagement requires strong political leadership and donor state financial commitments. Besides UNHCR, WFP, OCHA, and UNICEF, other international institutions must increase their role. The World Bank, Islamic Development Bank, European Bank for Reconstruction and Development, and China-led Asian Infrastructure and Investment Bank are examples. A New Global Approach for Syria should also foster creative thinking on IDP solutions. As this study has shown, internal displacement and refugee flows are linked: when people cannot find enough protection in their own nation, they typically travel into adjacent countries. Addressing the needs of IDPs through protection, support, and sustainable solutions is even more complex and politically controversial than refugees, and the route forward is less guaranteed.

The inclusion of many players, including peacekeeping specialists, diaspora groups and Gulf-based NGOs, may allow for more realistic appraisals of the potential for civilian protection. In this context, the New Global Approach for Syria might establish multi-stakeholder working groups to assess the viability of measures such as safe zones, no-fly zones, humanitarian corridors and humanitarian cease-fires. In sections of Syria where things are relatively calm, it may be reasonable to think about extending humanitarian corridors into less safe areas. But in the current political environment, there are few choices to respond to

the needs of internally displaced persons (IDPs) inside Syria, or to help those who stay in the country and cannot leave. Such solutions may be developed in the space afforded by a New Global Approach, which would also provide a better platform for coordinating cross-border actions. Moreover, the New Global Approach for Syria can help build the groundwork for long-term restoration operations in preparation for the country's eventual recovery. Ultimately, much will rely on the success of political negotiations and the nature of a post-war Syrian state, which might be very different from the current one. But transitional arrangements are already being planned and these on-going activities and associated initiatives might be accommodated within the broader framework of the New Global Approach. This would allow humanitarian and development operations to be better coordinated in support of Syria's recovery and reconstruction process.

Bringing an end to the conflict in Syria and devising a long-term recovery strategy remain the most desirable solutions to displacement. Although such an outcome appears distant, the eventual configuration of a post-war Syrian state will likely be shaped to a significant degree by the patterns of displacement already underway. Proposals for safe zones, localized ceasefires, or structural reorganization of the state are often premised on the demographic reshaping resulting from displacement, with a federal or confederal arrangement frequently cited as a possible political solution.[15] The sheer scale of Syrian displacement, the obstacles to reaching affected populations within Syria and the likelihood of prolonged displacement are now central drivers of efforts to secure a political settlement to the conflict.

However, these dynamics are risky. Political arrangements made under pressure may not protect displaced communities. However, conditions in neighbouring countries and Europe may force refugees to return before their homeland is safe. As relocation continues, international interest may diminish and humanitarian agencies may report the problem routinely. Despite these hazards, this great human tragedy could accelerate important improvements in global governance and humanitarian response. Reforms could help bring order to the current instability and, more crucially, ensure that future civil conflict victims are handled with more humanity and protection than the Syrian people.

Conclusion :

The Syrian displacement crisis has shown the international system's limits and opportunities in responding to large-scale humanitarian situations. It has shown how

accountability and governance affect refugees and internally displaced people and how failing to find effective solutions has serious consequences for regional stability and global peace and security. The crisis has shown that humanitarian or state-centric approaches are insufficient to address modern displacement's scope and complexity. A New Global Approach for Syria must be seen as an experiment in global refugee administration, not just a solution to a disaster. Regional organisations willing to cross political lines, host governments willing to make tough policy decisions, donor states willing to share responsibilities more equitably, and development institutions capable of integrating humanitarian imperatives into long-term strategies are needed for its success. Internally displaced people are often more vulnerable than refugees and are closely tied to refugee flows.

Indo-China and Central America demonstrate that broad regional frameworks can produce lasting solutions while being resource-intensive and politically demanding. Syria must adapt such lessons to a complex conflict while ensuring that political agreements do not violate displaced persons' rights and safety. Reaffirming resettlement as a basic protection mechanism, expanding refugee self-reliance, and coordinating humanitarian and development efforts to empower displaced people and host communities are needed. The Syrian crisis is a humanitarian tragedy and a test of the international community's commitment to protection, solidarity, and burden-sharing under the global refugee regime. If managed well, the crisis could spur global governance and humanitarian response reform. Syrians must be helped, and the world must be better prepared for the next displacement crisis with more forethought, collaboration, and humanity.

REFERENCES :

1. CSR Murthy. (2019). United Nations and the Arab Spring: Role in Libya, Syria and Yemen. *Sage Publications*, vol. 5(2), pp. 8.
2. Security Council Unanimously Adopts Resolution 2254 (2015). (December 18, 2015). Endorsing Road Map for Peace Process in Syria, Setting Timetable for Talks, UN meetings coverage and press releases. https://press.un.org/en/2015/sc12171.doc.htm, accessed 12-02-2025.
3. Hafeez Ullah Khan & Waseem Khan. (2017). Syria: History, the Civil War and Peace Prospects. *Journal of Political Studies*, vol. 24, pp. 597.
4. The Economist. (2015). Why the Schengen Agreement might be under threat. *The Economist*. Available at: https://www.economist.com/the-economist-explains/2015/08/24/why-theschengen-agreement-might-be-under-threat, accessed 25 May 2025.

5. Homa Haider. (2014). Refugee, IDP and Host Community Radicalization. University of Birmingham, UK: *GSDRC Helpdesk Research Report 1162*, p. 3.
6. Elizabeth Ferris and Kemal Kirişci. (2016). *Syria's Humanitarian Crisis and the Failure to Protect.* Washington: Brookings Institution Press, p. 114.
7. Brookings- Bern Project on Internal Displacement. (2008). Consultation and participation with populations displaced by conflict or natural disasters. Washington D.C: *Brookings Institution*, p. 13.
8. Elizabeth Ferris and Sanjula Weerasinghe. (2011). Security Council, Internal Displacement, and Protection: Recommendations for Strengthening Action through Resolutions. *The Brookings Institution- LSE Project on Internal Displacement.* https://www.brookings.edu/wp-content/uploads/2016/06/Security_Council_ID_Protection.pdf, accessed 27-04-2024.
9. World Bank group. (December 2015). Turkey's Response to the Syrian Refugees Crisis and the Road Ahead. Washington: *The International Bank for Reconstruction and Development / The World Bank,* p. 2. https://documents1.worldbank.org/curated/en/583841468185391586/pdf/102184-WP-P151079-Box394822B-PUBLIC-FINAL-TurkeysResponseToSyrianRefugees-eng-12-17-15.pdf, accessed 11-05-2025.
10. CSR Murthy, "United Nations and the Arab Spring: Role in Libya, Syria and Yemen" Sage Publications, India, vol. 5(2), 2019.
11. "Security Council Unanimously Adopts Resolution 2254 (2015) Endorsing Road Map for Peace Process in Syria, Setting Timetable for Talks," UN meetings coverage and press releases, December 18, 2015.
12. neem Khan, "Syria: History, the Civil War and Peace Prospects," Journal of Political Studies, vol. 24, Abdul Wali Khan University Mardan, 2017, p.597.
13. "Why the Schengen Agreement Might Be under Threat," The Economist, August 24, 2015 (www.economist.com/blogs/econo mist-explains/2015/08/economist-explains-18.
14. Homa Haider, "Refugee, IDP and Host Community Radicalization," GSDRC Helpdesk Research Report 1162, GSDRC, University of Birmingham, Birmingham, UK, 2014, p. 3.
15. Elizabeth Ferris and Kemal Kirişci, "Syria's Humanitarian Crisis and the Failure to Protect," Brookings Institution Pres s Washington, D.C., 2016, p. 114.

Email id.- sidhugagan254@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 64-73

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

पर्यावरणीय शिक्षा और सतत् विकास : राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के भूगोल पाठ्यक्रम की भूमिका

सुमन, शोधार्थी,
नवीन राय, शोधार्थी,
भूगोल विभाग, स्वामी विवेकानन्द राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, लोहाघाट, चम्पावत (उत्तराखण्ड)

सारांश :

वर्तमान समय में पर्यावरणीय समस्याऐं वैश्विक स्तर पर चिन्ता का विषय बनता जा रहा है। जलवायु परिवर्तन जैव विविधता में कमी, प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन और प्रदूषण जैसी समस्याऐं मानव जीवन और पृथ्वी के पारिस्थितिकी सन्तुलन को प्रभावित कर रही है। इन समस्याओं के समाधान के लिए सतत् विकास की अवधारणा को अपनाना आश्वयक हो गया है। संयुक्त राष्ट्र द्वारा निर्धारित सतत विकास लक्ष्य (SDGs) वर्ष 2030 तक एक सन्तुलित और समावेशी विकास सुनिश्चित करने का प्रयास करते है।

सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है, शिक्षा के माध्यम से समाज में पर्यावरणीय जागरूकता और जिम्मेदारी विकसित की जा सकती है। भारत की राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 शिक्षा को अधिक समग्र बहु–विषयक और व्यावहारिक बनाने पर जोर देती है। इस नीति में पर्यावरणीय शिक्षा प्रणाली का महत्वपूर्ण हिस्सा बनाया गया है।

भूगोल, पृथ्वी प्राकृतिक संसाधनों, जलवायु प्रणाली और मानव प्रकृति सम्बन्धों का अध्ययन करता है, यह विद्यार्थियों को पर्यावरणीय समस्याओं की समझ प्रदान करता है, और उन्हे सतत विकास के प्रति जागरूक बनाता है।

इस शोध–पत्र में पर्यावरणीय शिक्षा सतत विकास लक्ष्यों और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के सन्दर्भ में भूगोल पाठ्यक्रम की भूमिका का विश्लेषण किया गया है। साथ ही भूगोल शिक्षा के माध्यम से पर्यावरणीय जागरूकता बढ़ाने की सम्भावनाओं और चुनौतियों में सुधार के उपायों पर विचार–विमर्श किया गया हैं। आज आवश्यकता इस बात की है, कि शिक्षा केवल ज्ञान–प्रदान का माध्यम न रहे, बल्कि वह पर्यावरण के प्रति सजग, जिम्मेदार और कार्यशील नागरिक तैयार करें। इस सन्दर्भ में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (NEP 2020) भारतीय उच्च शिक्षा में एक नवीन दृष्टिकोण लेकर आई हैं।

मुख्य शब्द : पर्यावरणीय शिक्षा, सतत विकास, भूगोल पाठ्यक्रम, SDGs नवीन दृष्टिकोण, ESD

प्रस्तावना :

पृथ्वी पर जीवन की निरंतरता पर्यावरण के सूक्ष्म सन्तुलन पर टिकी हुई है। औद्योगिक क्रांति के बाद

से मानव गतिविधियों ने इस सन्तुलन को गंभीर एवं अपूरणीय क्षति पहुँचाई है। IPCC की 6वीं आकलन रिपोर्ट (2023) के अनुसार, यदि ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन वर्तमान गति से जारी रहा तो वैश्विक तापमान 2030 से पहले ही 1.5 डिग्री सेल्सियस की महत्वपूर्ण सीमा पार कर सकता है। भारत, विश्व की सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश है, और जिसकी एक बड़ी आबादी कृषि, वन और जल संसाधनों पर प्रत्यक्ष रूप से आश्रित है, इन पर्यावरणीय संकटों का सर्वाधिक प्रभाव विकासशील और निम्न–आय वाले देशों पर पड़ रहा है, जिन्हें सतत विकास के लिए शिक्षा और नीतिगत सहयोग की सबसे अधिक आवश्यकता है।

संकटकाल में शिक्षा ही वह सशक्त माध्यम है, जो भावी पीढ़ी को पर्यावरण–चेतना, वैज्ञानिक सोच और सतत जीवनशैली की ओर प्रेरित कर सकती है। यूनेस्को (2021) के अनुसार, पर्यावरणीय शिक्षा न केवल जागरूकता पैदा करती है, अपितु व्यवहार परिवर्तन और सामुदायिक सहभागिता की नींव भी रखती है। इस सन्दर्भ में भूगोल एक अद्वितीय और अपरिहार्य विषय है। यह मानव और पर्यावरण के बहुआयामी संबंधों को स्थानिक, कालिक और तुलनात्मक दृष्टि से समझने का सर्वश्रेष्ठ माध्यम प्रदान करता है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने भूगोल शिक्षण को एक नई दिशा दी है। यह नीति पाठ्यक्रम को अनुभव आधारित, बहुविषयक और मूल्य–केन्द्रित बनाने पर बल देती है। सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) और पेरिस जलवायु समझौते की पृष्ठभूमि में NEP 2020 का भूगोल पाठय्क्रम से सबंधं अत्यंत प्रासंगिक और शोधनीय है।

शोध की प्रासंगिकता एवं आवश्वकता :

भारत में पर्यावरणीय शिक्षा परम्परागत रूप से सैद्धांतिक, पाठ्यपुस्तक–केंद्रित और परीक्षाभिमुखी रही है। वास्तविक पर्यावरणीय समझ, स्थानीय पारिस्थितिकी की जानकारी और समस्या–समाधान कौशल का विकास प्रायः उपेक्षित रहा हैं। NEP 2020 इस मानसिकता को बदलने का अवसर लेकर आई है। PhD स्तर पर इस विषय का गहन अध्ययन इसलिए महत्वपूर्ण है, ताकि नीति के प्रारंभिक क्रियान्वयन चरण में ही उसकी शाक्तियों और कमजोरियों की पहचान हो सके और नीति–निर्माताओं, विश्वविद्यालयों तथा शिक्षकों को मजबूत व दृढ़ शैक्षणिक दिशा–निर्देश प्राप्त हों।

शोध का उद्देश्य :

1. NEP 2020 के नीति दस्तावेज में पर्यावरणीय शिक्षा के प्रावधानों का विस्तृत विश्लेषण करना।
2. भूगोल पाठ्यक्रम और संयुक्त राष्ट्र के 17 सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) के मध्य संबंध स्थापित करना।
3. NEP 2020 आधारित भूगोल शिक्षण में नवाचारी शिक्षण पद्धतियों की संभावनाओं का परीक्षण करना।
4. पर्यावरणीय शिक्षा के क्रियान्वयन में आने वाली संरचनात्मक एवं शैक्षणिक चुनौतियों की पहचान करना।
5. नीति–निर्माताओं, विश्वविद्यालय और भूगोल शिक्षकों हेतु व्यावहारिक सुझाव प्रस्तुत करना।

साहित्य समीक्षा :

पर्यावरणी शिक्षा के अंतराष्ट्रीय और राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य को समझने के लिए विभिन्न स्त्रोतों की समीक्षा की गई। इसमें प्रमुख शोधों, नीति दस्तावेजों और अंतराष्ट्रीय घोषणापत्रों का विवरण प्रस्तुत है, जो इस शोध की सैद्धांतिक आधारशिला बनाते है।

1972 में स्टॉकहोम मानव पर्यावरण सम्मेलन ने पहली बार पर्यावरणीय शिक्षा को अंतराष्ट्रीय राजनीतिक एजेंडे पर स्थापित किया। इसके बाद 1977 में तिबलिसी (जॉर्जिया) में आयोजित प्रथम अंतराष्ट्रीय पर्यावरण शिक्षा

सम्मेलन ने पर्यावरणीय शिक्षा के पाँच मूलभूत लक्ष्य निर्धारित किए।

1. जागरूकता
2. ज्ञान
3. दृष्टिकोण
4. कौशल
5. सहभागिता

UNESCO के "Education वित Sustainable Development" (ESD) कार्यक्रम ने 2005–2014 के दशक में वैश्विक स्तर पर पर्यावरणीय शिक्षा को मुख्यधारा की शिक्षा में समाहित करने का प्रयास किया।

Orr (1992) ने अपनी प्रभावशाली रचना "Ecological Literacy" में विचार दिया, कि शिक्षा का मूल उद्देश्य मनुष्य को प्रक्रति के साथ सामंजस्यपूर्ण जीवन जीना सिखाना चाहिए। Sterling (2001) ने "Sustainable Eudcation" में पारंपरिक शिक्षा और टिकाऊ शिक्षा के बीच के अंतर को स्पष्ट करते हुए कहा, कि शिक्षा को परिवर्तनकारी (transformative) होना चाहिए। Wals (2012) ने UNESCO के लिए तैयार रिपोर्ट में पाया कि भूगोल विषय पर्यावरणीय शिक्षा के लिए सर्वाधिक उपयुक्त माध्यम हैं, क्योंकि ये स्थानीय स्तर से वैश्विक स्तर की पारिस्थितिकीय समझ प्रदान करते है।

भारतीय संदर्भ :

भारत में पर्यावरणीय शिक्षा का संवैधानिक आधार अनुच्छेद 48A और 51A(g) में निहित है। 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने पर्यावरण जागरूकता को पाठ्यक्रम में शामिल करने की सिफारिश की थी। उच्चतम न्यायालय ने M.C. Mehta बनाम भारत संघ (1992) के ऐतिहासिक निर्णय में निर्देश दिया, कि पर्यावरण शिक्षा सभी स्तरों पर अनिवार्य हो।

NCERT की 2005 की राष्ट्रीय पाठ्यचर्या कर रूपरेखा (NCF-2005) ने पर्यावरण और स्वास्थ्य को पाठ्यक्रम के केंद्र में रखा। Sharma (2016) के शोध में पाया गया कि भारतीय महाविद्यालयों में भूगोल शिक्षण मुख्यतः रटने की प्रक्रिया पर आधारित है, और क्षेत्र–कार्य एवं व्यावहारिक शिक्षण की घोर कमी है। Mishra and Singh (2019) ने अपने तुलनात्मक अध्ययन में पाया कि जिन विद्यार्थियों को अनुभव–आधारित पर्यावरण शिक्षा मिली, उनमें पर्यावरणीय व्यवहार में 42 प्रतिशत तक सुधार देखा गया।

Ministry of Education, Government of India की वेबसाइट पर NEP 2020 की मूल दस्तावेज उपलब्ध है, जिसमें शिक्षा सुधार और सतत विकास के लिए नीति ढांचा दिया गया है।

शोध अंतराल :

उपलब्ध साहित्य की समीक्षा से स्पष्ट होता है कि NEP 2020 के संदर्भ में भूगोल पाठ्यक्रम और पर्यावरणीय शिक्षा के एकीकरण पर PhD स्तर पर विशिष्ट शोध अत्यंत सीमित है। अधिकांश शोध या तो NEP 2020 के समग्र प्रावधानों पर केंद्रित हैं, या पर्यावरणीय शिक्षा के सामान्य पहलुओं पर। भूगोल विषय–विशेष की दृष्टि से SDGs के साथ NEP 2020 के पाठ्यक्रम संरेखण का विश्लेषण करने वाला शोध एक महत्वपूर्ण अंतराल है, जिसे यह शोध पत्र भरने का प्रयास करता है।

NEP 2020 और पर्यावरणीय शिक्षा : नीतिगत विश्लेषण :

NEP 2020 का 484 पृष्ठीय दस्तावेज पर्यावरण को शिक्षा के एक अनिवार्य आयाम के रूप में स्वीकार करता हैं। यह नीति पर्यावरणीय शिक्षा को केवल एक पाठ्य विषय के रूप में नहीं, बल्कि एक समग्र जीवन दृष्टि

के रूप में प्रस्तुत करती है।

NEP 2020 और पर्यावरणीय प्रावधान :

NEP 2020 की धारा 4.27 में स्पष्ट उल्लेख है कि प्रत्येक विद्यार्थी को पर्यावरणीय जागरूकता, जल संरक्षण, स्वच्छता और टिकाऊ विकास से संबंधित शिक्षा अनिवार्य रूप से प्राप्त होनी चाहिए। धारा 22.10 में कहा गया है, कि उच्च शिक्षा संस्थानों को अपने पाठ्यक्रम में SDG-संरेखित विषय–वस्तु अनिवार्य रूप से सम्मिलित करनी होगी।

- पर्यावरण जागरूकता को प्रत्येक विषय में समाहित करने का निर्देश।
- क्षेत्र–कार्य और अनुभव–आधारित शिक्षण पर विशेष बल।
- स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र के अध्ययन को पाठ्यक्रम से जोड़ना।
- परंपरिक पर्यावरण ज्ञान का समावेश।
- जलवायु परिवर्तन और प्राकृतिक आपदा प्रबंधन को पाठ्यक्रम में स्थान।
- बहुविषयक दृष्टिकोण से पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान खोजना।

भूगोल पाठ्यक्रम की भूमिका :

भूगोल विषय पर्यावरणीय शिक्षा का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। यह विषय पृथ्वी की भौतिक संरचना, प्राकृतिक संसाधनों और मानव गतिविधियों के प्रभावों का अध्ययन करता है।

भूगोल पाठ्यक्रम के माध्यम से विद्यार्थी निम्नलिखित विशयों को समझते हैं :

- जलवायु परिवर्तन।
- प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंधन।
- पास्थितिकी तंत्र।
- आपदा प्रबंधन।
- जनसंख्या और संसाधन।

भूगोल पाठ्यक्रम का NEP 2020 में स्थान :

NEP 2020 भूगोल को एक प्रत्यक्ष विषय के रूप में पुनः परिभाषित करती है। परंपरागत रूप से भूगोल में मानचित्र, तथ्य और सांख्यिकी को प्राथमिकता मिलती थी। नई नीति इसे एक विश्लेषणात्मक, क्षेत्र–उन्मुख और समस्या–समाधान केंद्रित विषय बनाना चाहती है। उच्च शिक्षा में भूगोल अब मानव–पर्यावरण संबंधों, स्थानिक विश्लेषण, जलवायु अध्ययन और संसाधन प्रबंधन पर आधारित होगा।

सतत विकास की अवधारणा :

सतत विकास का अर्थ है– "ऐसा विकास जो आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय संतुलन को बनाए रखे।" यह अवधारणा इस विचार पर आधारित है, कि प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग इस प्रकार किया जाना चाहिए कि भावी पीढ़ियों के लिए भी संसाधन उपलब्ध रहें।

सतत विकास के मुख्य तीन स्तंभ हैं :

1. आर्थिक विकास
2. सामाजिक समानता

3. पर्यावरण संरक्षण।

इन तीनो के बीच संतुलन बनाए रखना ही विकास का मुख्य उद्देश्य है।

भूगोल पाठ्यक्रम और सतत विकास लक्ष्य (SDGs) :

संयुक्त राष्ट्र के 2030 एजेंडे मे निर्धारित 17 सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) में से अनेक लक्ष्य सीधे भूगोल विषय की विषय–वस्तु से संबंधित हैं। नीचे प्रमुख तालिका के अनुसार SDGs और भूगोल पाठ्यक्रम के मध्य संबंध दर्शाया गया हैं :

तालिका संख्या : 01

SDG संख्या	SDG का लक्ष्य	संक्षिप्त विवरण	भूगोल पाठ्यक्रम से संबंध
SDG- 2	भूख उन्मूलन	भूख खत्म करना, खाद्य सुरक्षा और पोषण सुनिश्चित करना	कृषि भूगोल, मृदा भूगोल, खाद्य सुरक्षा
SDG- 6	स्वच्छ जल एवं स्वच्छता	सभी के लिए सुरक्षित पानी और स्वच्छता उपलब्ध कराना	जल विज्ञान, नदी तंत्र, जल प्रबंधन
SDG- 11	टिकाऊ शहर और समुदाय	सुरक्षित समावेशी और टिकाऊ शहरों का निर्माण	नगरीय भूगोल, भूमि उपयोग, बस्ती भूगोल
SDG- 13	जलवायु परिवर्तन पर कार्रवाई	जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए त्वरित कदम	जलवायु विज्ञान, वायुमंडलीय परिवर्तन अध्ययन
SDG- 14	जल के नीचे जीवन	महासागरों और समुद्री संसाधनों का संरक्षण	समुद्री भूगोल, तटीय पारिस्थितिकी
SDG- 15	भूमि पर जीवन	भूमि, जंगल और जैव विविधता का संरक्षण	वन भूगोल, जैव विविधता, भू–आकृति विज्ञान
SDG- 17	लक्ष्यों के लिए साझेदारी	वैश्विक स्तर पर मजबूत साझेदारी और सहयोग को बढ़ावा देना	क्षेत्रीय भूगोल, अंतराष्ट्रीय सहयोग अध्ययन

"NEP 2020 के संदर्भ में पर्यावरणीय भूगोल सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) की प्राप्ति का आधार है। भूगोल शिक्षा SDG-2, SDG-6, SDG- 11, SDG- 13, SDG- 14, SDG- 15, और SDG- 17 को समझने और लागू करने में केंद्रीय भूमिका निभाती है।"

पर्यावरण भूगोल : केंद्रीय भूमिका :

पर्यावरण भूगोल, भूगोल की वह शाखा है, जो मानव गतिविधियों और पर्यावरणीय प्रक्रियाओं के पारम्परिक प्रभावों का अध्ययन करती है। NEP 2020 के अंतर्गत पर्यावरण भूगोल को स्नातक और स्नातकोत्तर स्तर पर

एक अनिवार्य घटक के रूप में शामिल करने का प्रावधान है। इसमें निम्न विषय–क्षेत्र सम्मिलित हैंः पारिस्थितिकी तंत्र का अध्ययन, भूमि ह्रास और मरूस्थलीयकरण, वायु प्रदूषण और ओजोन क्षरण, जैव विविधता संरक्षण और जलवायु शरणार्थी जैसी उभरती समस्याएं शामिल है।

स्थानीय से वैश्विक : भूगोल की अनूठी दृष्टि :

भूगोल की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह स्थानीय पर्यावरणीय समस्याओं को वैश्विक संदर्भ में देखना सिखाता है। जैसे– राजस्थान में बढ़ता मरूस्थलीकरण केवल एक क्षेत्रीय समस्या नहीं है, बल्कि यह वैश्विक तापमान वृद्धि, अनियमित वर्षा प्रतिरूप के अति–उपयोग से जुड़ी हैं। NEP 2020 इसी 'Glocal, (Local + Global) दृष्टिकोण को भूगोल शिक्षण का आधार बनाती है।

नवाचारी शिक्षण पद्धतियाँ :

NEP 2020 पारंपरिक कक्षा–शिक्षण से आगे जाकर अनुभव आधारित, प्रौद्योगिकी और सामुदायिक–केंद्रित शिक्षण पद्धतियों को प्रोत्साहित करती है। पर्यावरणीय शिक्षा के संदर्भ में ये नवाचारी पद्धतियाँ विशेष रूप से प्रभावशाली हैं।

क्षेत्र–कार्य आधारित शिक्षण :

भूगोल में कार्य–क्षेत्र शिक्षण की आत्मा है। NEP 2020 स्पष्ट रूप से निर्देश देती है, कि भूगोल पाठ्यक्रम का न्यूनतम 20% भाग क्षेत्र–कार्य और प्रायोगिक अध्ययन पर आधारित होना चाहिए। इसके अंतर्गत नदी की जल–गुणवत्ता परीक्षण, वन आवरण का जमीनी सर्वेक्षण, स्थानीय मिट्टी के प्रकारों का नमूना सग्रंह, और पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन (EIA) व्यावहारिक अभ्यास शामिल हो सकते है। शोध से प्रमाणित हुआ है, कि क्षेत्र–कार्य प्राप्त विद्यार्थियों में पर्यावरणीय संवेदनशील कक्षा शिक्षण की तुलना में 60% अधिक होती है।

भौगोलिक सूचना प्रणाली (GIS) और डिजिटल मैपिंग :

भौगोलिक सूचना प्रणाली पर्यावरणीय शिक्षा में एक क्रांतिकारी उपकरण है। NEP 2020 डिजिटल शिक्षण को प्राथमिकता देती है, और GIS-आधारित शिक्षण इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। GIS के माध्यम से वन कटाई प्रतिरूप, बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों की पहचान करना, भूमि उपयोग परिवर्तन और वायु प्रदूषण के स्थानिक वितरण का विश्लेषण कर सकते है। Google Earth Engine, ArcGIS और QGIS जैसे निःशुल्क प्लेटफॉम के माध्यम से यह शिक्षण व्यावहारिक और सुलभ बनाया जा सकता है। इससे विद्यार्थियों में आँकड़ों समझना और पर्यावरणीय विश्लेषण क्षमता एक साथ विकसित होती है।

समस्या–आधारित शिक्षण :

NEP 2020 बार–बार याद करने की संस्कृति को समाप्त कर समस्या समाधान दृष्टिकोण अपनाने पर जोर देती है। भूगोल में इसका अर्थ है– विद्यार्थी किसी वास्तविक समस्या को चुनें, उसका क्षेत्रीय अध्ययन करें, आँकड़ें एकत्रित करें और समाधन प्रस्तावित करें। उदाहरण के लिएः अपने क्षेत्र में भूमिगत जल–स्तर क्यों गिर रहा है? इस प्रश्न पर आधारित परियोजना विद्यार्थियों को जलवायु, कृषि–पद्धति, जनसंख्या और नीति जैसे पक्षों पर सोचने पर मजबूर करती है।

पारंपरिक पर्यावरण ज्ञान का समावेश :

NEP 2020 भारतीय ज्ञान परंपरा (Indian Knowledge System – IKS) को आधुनिक शिक्षा से जोड़ने

पर विशेष बल देती है। भूगोल शिक्षण में यह अत्यंत संबंधित है। जल संरक्षण की पारंपरिक तकनीकें जैसे राजस्थान की 'बावड़ियों', तमिलनाडु के 'एरीस' तथा हिमाचल की 'कुहल' प्रणालियाँ इन्हें आधुनिक जल विज्ञान के साथ पढ़ाना पर्यावरणीय शिक्षा को सांस्कृतिक रूप से समृद्ध और व्यावहारिक बनाता है। इससे विद्यार्थी अपनी पारंपरिक जड़ों से जुड़कर पर्यावरण संरक्षण को एक सांस्कृतिक दायित्व के रूप में देखते है।

ऑनलाइन और मिश्रित मिक्षण :

NEP 2020 SWAYAM, NPTEL और e-PG Pathshala जैसे डिजिटल प्लेटफॉर्म को मान्यता देती है। पर्यावरणीय भूगोल के संदर्भ में ये प्लेटफॉर्म उपग्रह चित्रों का विश्लेषण, आभासी शैक्षिक भ्रमण (वर्चअल फील्ड ट्रिप), जलवायु आँकड़ें, दृश्यांकन (विजुअलाइज़ेशन) और सहभागी पारिस्थितिकी मॉडयूल प्रदान कर सकते है। मिश्रित शिक्षण से दूरदराज के विद्यार्थियों को भी गुणवत्तापूर्ण पर्यावरणीय शिक्षा प्राप्त हो सकती हैं।

चुनौतियाँ एवं बाधाएं :

NEP 2020 की संभावनाएं असीमित हैं, किन्तु उसके क्रियान्वयन में अनेक गंभीर चुनौतियाँ हैं, जिन पर ध्यान न दिया जाए, तो नीति के उद्देश्य अधूरे रह जाएँगें।

संरचनात्मक चुनौतियाँ :

- **बुनियादी ढ़ाँचें का अभाव :** अधिकाशं महाविद्यालय GIS प्रयोगशाला, पर्यावरण प्रयोगशाला और क्षेत्र–कार्य के लिए वित्तीय संसाधन नहीं हैं।
- **शिक्षक प्रशिक्षण की कमी :** नई शिक्षण पद्धतियों– विशेषकर GIS, डिजिटल मैपिगं और परियोजना आधारित शिक्षण (PBL), के लिए प्रशिक्षित भूगोल शिक्षकों की संख्या अत्यंत कम है।
- **परीक्षा प्रणाली का दबाव :** पारंपरिक परीक्षाओं में अभी भी सैद्धांतिक प्रश्नों को प्राथमिकता मिलती है, जिससे क्षेत्र–कार्य और प्रयोगात्मक शिक्षण को पर्याप्त महत्व नहीं मिलता।
- **वित्तीय संसाधन :** NEP 2020 ने GDP का 6% शिक्षा पर खर्च करने का लक्ष्य रखा है, जो वर्तमान में मात्र 4.6% है। इस अंतर का सीधा प्रभाव पर्यावरणीय शिक्षा कार्यक्रमों पर पड़ता है।

शैक्षणिक चुनौतियाँ :

- **भाषाई बाधाएं :** पर्यावरण विज्ञान और GIS की उन्नत अध्ययन सामग्री हिन्दी और क्षेत्रीय भाषाओं में पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं है।
- **पाठ्यक्रम असंतुलन :** विभिन्न विश्वविद्यालयों के भूगोल पाठ्यक्रमों में एकरूपता का अभाव है, जिससे SDG समानांतर शिक्षण असमान रूप से हो रहा है।
- **मूल्यांकन पद्धति :** पर्यावरणीय शिक्षा की सफलता को मापने के लिए उचित मूल्यांकन उपकरणों का विकास अभी नहीं हैं।
- **डिजिटल विभाजन :** ग्रामीण और अर्ध–शहरी क्षेत्रों के महाविद्यालयों में इंटरनेट और डिजिटल उपकरणों की कमी ऑनलाइन पर्यावरण शिक्षण को बाधित करती है।

सामाजिक एवं नीतिगत चुनौतियाँ :

- **राज्यों की भिन्न प्राथमिकताएं :** शिक्षा सीमावर्ती सूची का विषय होने से विभिन्न राज्यों में NEP 2020 का क्रियान्वयन असमान गति से हो रहा है।

- **जन–जागरूकता की कमी :** अभिभावकों और समाज में पर्यावरणीय शिक्षा के महत्व के प्रति जागरूकता की कमी है।
- **उद्योग–शिक्षा सहयोग का अभाव :** पर्यावरणीय शिक्षा को व्यावहारिक बनाने के लिए उद्योग जगत का सहयोग आवश्यक है, जो अभी नगण्य है।

अवसर और संभावनाएं :

चुनौतियाँ के बावजूद NEP 2020 पर्यावरणीय भूगोल शिक्षा के लिए अभूतपूर्व अवसरों का द्वार खोलती है।

1. **हरित कौशल विकास :**

भारत सरकार का "Green Skill Development Programme" NEP 2020 के साथ मिलकर पर्यावरण आधारित रोजगार के नए अवसर सृजित कर सकता है। जलवायु परिवर्तन विश्लेषण, पर्यावरण मूल्यांकनकर्ता भौगोलिक सूचना तंत्र विशेषज्ञ, वन प्रबंधक और नवीकरणीय ऊर्जा सलाहकार ये सभी 21वीं सदी के हरित रोजगार व सतत विकास आधारित कार्यक्षेत्र है, जिनकी नीव भूगोल शिक्षण में रखी जा सकती है। NEP 2020 की व्यावसायिक शिक्षा नीति इस दिशा में एक महत्वपूर्ण है।

2. **अंतराष्ट्रीय सहयोग :**

NEP 2020 विदेशी विश्वविद्यालयों को भारत में परिसर खोलने की अनुमति देती है। यह पर्यावरणीय भूगोल के क्षेत्र में अंतराष्ट्रीय शोध सहयोग, संयुक्त डिग्री कार्यक्रम और शिक्षण आदान–प्रदान के अवसर प्रदान करेगा। UNEP, IUCN और World Resources Institute जैसी अंतराष्ट्रीय संस्थाओं के साथ सहयोग से पाठ्यक्रम की गुणवत्ता और महत्व दोनों ही बढ़ेगें।

3. **सामुदायिक भागीदारी :**

NEP 2020 समाज को शिक्षा से जोड़ने पर बल देती है। पर्यावरणीय भूगोल शिक्षण में ग्राम पंचायतों, वन समितियों, जल उपयोगकर्ता संघों और स्थानीय NGOs के साथ भागीदारी एक परिवर्तनकारी अनुभव हो सकता है, बल्कि मानव समाज वास्तविक पर्यावरणीय समस्याओं पर काम करते हुए सामुदायिक समाधान विकसित कर सकते हैं। यह NEP 2020 की 'सेवा परियोजना' की संकल्पना को भी साकार करेगा।

4. **राष्ट्रीय शोध फाउंडेशन (NRF) की भूमिका :**

NEP 2020 के अंतगर्त स्थापित होने वाला राष्ट्रीय शोध फाउंडेशन (NRF) पर्यावरणीय शोध के लिए वित्तपोषित प्रदान करेगा। भूगोल विभाग जलवायु अनुकूलन, भूमि उपयोग परिवर्तन, नगरीय ऊष्मा द्वीप और नदी बेसिन प्रबंधन विषयों पर उच्च गुणवत्ता पर शोध कर सकेंगे। यह भूगोल विषय को एक सक्रिय नीति–निर्माण का स्थान दिलाएगा।

सुझाव :

1. **पाठ्यक्रम स्तर पर** :

- स्थानीय पर्यावरणीय समस्याओं पर आधारित शोध परियोजनाएं अनिवार्य की जाएं।

2. **शिक्षण प्रशिक्षण स्तर पर :**

- UGC द्वारा भूगोल शिक्षकों के लिए वार्षिक 'पर्यावरणीय शिक्षा उन्नयन कार्यशाला' आयोजित की जाए।
- GIS, डिजिटल मैपिगं और परियोजना आधारित शिक्षण पद्धतियों में प्रशिक्षण के लिए विशेष Faculty

Development Programme (FDP) चलाया जाए।

- भूगोल शिक्षकों को पर्यावरण मंत्रालय और वन विभाग के साथ अनुभवात्मक भ्रमण के अवसर दिए जाएं।

3. नीति स्तर पर :

- राज्य सरकारें NEP 2020 के पर्यावरणीय प्रावधानों के क्रियान्वयन के लिए विशेष बजट आवंटन सुनिश्चित करें।
- प्रत्येक विश्वविद्यालय में 'पर्यावरण शिक्षा प्रकोष्ठ' की स्थापना अनिवार्य की जाए।
- ग्रामीण महाविद्यालयों में डिजिटल बुनियादी ढ़ाँचें के विकास को प्राथमिकता दी जाए।
- NCERT और UGC मिलकर SDG के अनुरूप भूगोल पाठ्यक्रम का एक राष्ट्रीय रूपरेखा तैयार करें, जिसे हर राज्य अपनाएं।

निष्कर्ष :

पर्यावरणीय संकट और मानव सभ्यता का संघर्ष 21वीं सदी की सबसे बड़ी चुनौती है। इस चुनौती का समाधान केवल तकनीक और नीति में नहीं, बल्कि शिक्षा में निहित है–एक ऐसी शिक्षा जो मनुष्य को प्रकृति का स्वामी नहीं, अपितु उसका संरक्षक बनाए। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इस दिशा में एक साहसिक और दूरदर्शी कदम हैं।

भूगोल, अपनी समग्र और बहुआयामी प्रकृति के कारण, पर्यावरणीय शिक्षा का सर्वश्रेष्ठ माध्यम है। यह विषय न केवल पर्यावरणीय तथ्यों का ज्ञान देता है, अपितु एक स्थानिक, कालिक और समग्र दृष्टि विकसित करता है, जो पर्यावरणीय समस्याओं के जटिल कारण–प्रभाव संबंधों को समझने के लिए आवश्यक है। NEP 2020 ने भूगोल को पाठ्यपुस्तक की सीमाओं से मुक्त कर उसे एक जीवंत, क्षेत्र–उन्मुख और समस्या–समाधान केंद्रित विषय बनाने का अवसर दिया है।

यह शोध स्पष्ट करता है कि NEP 2020 के पर्यावरणीय लक्ष्यों की प्राप्ति केवल नीतिगत दस्तावेजों से नहीं होगी। इसके लिए प्रशिक्षित और प्रेरित भूगोल शिक्षक, पर्याप्त वित्तीय संसाधन, SDG-एक रेखीय पाठ्यक्रम, भौगोलिक सूचना तंत्र सक्षम प्रयोगशालाएं और एक ऐसी सांस्कृतिक चेतना जो पर्यावरण संरक्षण को देशभक्ति का अनिवार्य हिस्सा माने। यदि ये सब मिलकर कार्य करें, तो भूगोल की कक्षाएं भारत के पर्यावरणीय भविष्य की आधारशिला बन सकती है।

इस शोध–पत्र का केन्द्र NEP 2020 और भूगोल पाठ्यक्रम का सुनियोजित एकीकरण न केवल SDGs की प्राप्ति मे सहायक होगा, बल्कि एक ऐसी पीढ़ी का निर्माण करेगा, जो पर्यावरणीय नागरिकता को अपने जीवन का मूल मूल्य माने और यही सतत विकास की सच्ची आधारशिला है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. भारत सरकार (2020). राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020. शिक्षा मंत्रालय, नई दिल्ली।
2. कस्तूरीरंगन, के. (2019). Draft National Education Poilcy 2019-Committee Report. शिक्षा मंत्रालय, नई दिल्ली।
3. IPCC (2023). Sixth Assessment Report: Climate Change 2023- Synthesis Report. Geneva :

IPCC
4. UNESCO (2021). Education for Sustainable Deveopment: A Roadmap. Paris: UNESCO Pubilshing
5. UGC (2022). Curriculum and Credit Framework for Undergraduate Programmes. New Delhi: UGC.
6. NCERT (2023). National Curriculum Framework for School Education. New Delhi: NCERT.
7. Orr, D.W. (1992). Ecological Literacy: Education and the Transition to a Postmodern World. Albany: SUNY Press.
8. Sterling, S. (2001). Sustainable Education: Revisioning Learning and Change. Totnes : Green Books.
9. Wals, A.E.J. (2012). Shaping the Education of Tomorrow: Full-length Report on the UN Decade of Education for Sustainable Deveopment. Paris: UNESCO.
10. Sharma, R.C. (2016). Teaching of Geography. New Delhi: Atlantic Publishers.
11. Mishra, P. and Singh, A. (2019). Impact of Experiential Learning on Environmental Attitude of Geography Students. Indian Journal of Geography Education, 12(3), 78-94.
12. Tilak, J.B.G. (2021). New Education Policy 2020: A Critical Overview. Economic and Political Weekly, 56(20), 34-42.
13. UNEP (2022). Environmental Education and Climate Action: Bridging the Gap. Nairobi: UNEP.
14. Verma, S. and Gupta, R. (2020). NEP 2020 and Environmental Consciousness: Prospects for Indian Geography Education. Journal of Environmental Education, 51(4), 112-126.
15. Singh, R.B. (2018). Geographies of Environmetal and Development in India. New Delhi: National Book Trust.
16. United Nations (2015). Transforming our World: The 2030 Agenda for Sustainable Development New York : UN.
17. FICCI-EY (2021). Future of Higher Education in India : NEP 2020 Perspective. New Delhi: FICCI.
18. Government of India (2020). National Education Policy.
19. United Nations (2015). Sustainable Development Goals.
20. NCERT (2021). Environmental Studies Curriculum.
21. UNESCO (2017). Education for Sustainable Development.
22. https://www.unesco.org.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 74-81

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल साक्षरता बढ़ाने में सार्वजनिक पुस्तकालयों की भूमिका : एक आलोचनात्मक अध्ययन

दीपिका राज, शोधार्थी
शोध पर्यवेक्षक : **डॉ. धर्मवीर सिंह,** सहायक प्रोफेसर
पुस्तकालय विज्ञान विभाग, वाई. बी. एन. विश्वविद्यालय, रांची।

सार :

प्रस्तुत शोध पत्र ग्रामीण भारत में डिजिटल साक्षरता के प्रसार में सार्वजनिक पुस्तकालयों की बहुआयामी भूमिका का विश्लेषण करता है। डिजिटल विभाजन (डिजिटल डिवाइड) ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच विकास की असमानता का एक प्रमुख कारण है, जहाँ ग्रामीण आबादी का एक बड़ा वर्ग सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) की मूलभूत सुविधाओं से भी वंचित है। इस संदर्भ में, सार्वजनिक पुस्तकालय, जो परंपरागत रूप से ज्ञान के केंद्र रहे हैं, डिजिटल समावेशन के प्रभावी माध्यम के रूप में उभर रहे हैं। यह अध्ययन भारत के विभिन्न राज्यों केरल, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, महाराष्ट्र में संचालित पुस्तकालय–आधारित डिजिटल साक्षरता कार्यक्रमों के अनुभवों का विश्लेषण करता है। साथ ही, नागपुर जिला परिषद की 'एआई लैब ऑन व्हील्स' जैसी नवाचारी पहलों और अंतर्राष्ट्रीय उदाहरणों (नामीबिया, दक्षिण अफ्रीका, अमेरिका की आदिवासी लाइब्रेरी) का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। शोध निष्कर्ष बताते हैं कि सार्वजनिक पुस्तकालय न केवल डिजिटल संसाधनों तक पहुँच उपलब्ध कराते हैं, बल्कि सामुदायिक विश्वास के केंद्र (ट्रस्टेड कम्युनिटी हब) होने के नाते, महिलाओं, किसानों, आदिवासी समुदायों और आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों को डिजिटल रूप से सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पत्र में विकसित भारत 2047 के लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए, ग्रामीण पुस्तकालयों को डिजिटल साक्षरता केंद्र के रूप में विकसित करने हेतु ठोस सुझाव भी प्रस्तुत किए गए हैं।

कीवर्ड्स : डिजिटल साक्षरता, सार्वजनिक पुस्तकालय, ग्रामीण विकास, डिजिटल विभाजन, सामुदायिक सशक्तिकरण, विकसित भारत 2047, ई–गवर्नेंस।

1. परिचय :

भारत जिस तीव्र गति से डिजिटल क्रांति के दौर से गुजर रहा है, उसमें 'डिजिटल इंडिया' अभियान ने सरकारी सेवाओं, शिक्षा, स्वास्थ्य और वित्तीय लेनदेन को नागरिकों के द्वार तक पहुँचाने का मार्ग प्रशस्त किया है। लेकिन इस डिजिटल परिदृश्य का एक बड़ा वर्ग आज भी इस क्रांति की मुख्यधारा से जुड़ने में असमर्थ है। यह वर्ग है ग्रामीण भारत का वह समुदाय, जहाँ न तो पर्याप्त डिजिटल अवसंरचना (डिजिटल इन्फ्रास्ट्रक्चर) उपलब्ध है और न ही डिजिटल साक्षरता का आवश्यक स्तर। डिजिटल साक्षरता केवल कंप्यूटर चलाना या

मोबाइल का उपयोग करना भर नहीं है, यह सूचना तक पहुँच, उसके विश्लेषण, सृजन और सुरक्षित आदान–प्रदान की क्षमता है। यह क्षमता 21वीं सदी में नागरिक होने की मूलभूत आवश्यकता बन गई है।

ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल साक्षरता की कमी के पीछे अनेक कारण हैं भौगोलिक दूरियाँ, आर्थिक विषमताएँ, शैक्षिक पिछड़ापन, सामाजिक–सांस्कृतिक बाधाएँ, और सबसे महत्वपूर्ण, एक ऐसे विश्वसनीय संस्थागत ढाँचे का अभाव जो इस अंतर को पाट सके। ऐसे में, सार्वजनिक पुस्तकालय एक ऐसे संभावित केंद्र के रूप में उभरते हैं, जो सदियों से ज्ञान के प्रसार का कार्य करते आ रहे हैं। परंपरागत रूप से पुस्तकों तक पहुँच के साधन माने जाने वाले ये पुस्तकालय, अब डिजिटल युग में अपनी भूमिका के पुनर्निर्धारण के दौर से गुजर रहे हैं।

यह शोध पत्र इस बात की जाँच करता है कि कैसे सार्वजनिक पुस्तकालय ग्रामीण भारत में डिजिटल साक्षरता के केंद्र बन सकते हैं और बन रहे हैं। यह अध्ययन न केवल भारत के विभिन्न राज्यों में चल रही पहलों का विश्लेषण करता है, बल्कि अंतर्राष्ट्रीय उदाहरणों से सीख लेकर एक व्यापक रूपरेखा प्रस्तुत करने का प्रयास करता है। पत्र का उद्देश्य यह स्थापित करना है कि सार्वजनिक पुस्तकालय केवल किताबें रखने की जगह न रहकर, ग्रामीण विकास के 'कम्युनिटी टेक्नोलॉजी सेंटर' के रूप में कैसे परिवर्तित हो सकते हैं।

अनुसंधान समस्या :

भारत में डिजिटल तकनीक का उपयोग तेजी से बढ़ रहा है और सरकार द्वारा कई डिजिटल पहलें जैसे Digital India, ऑनलाइन शिक्षा, ई–गवर्नेंस सेवाएँ और डिजिटल बैंकिंग को बढ़ावा दिया जा रहा है। इसके बावजूद ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल साक्षरता का स्तर अपेक्षाकृत कम है। ग्रामीण जनता के पास अक्सर डिजिटल उपकरणों, इंटरनेट सुविधा तथा डिजिटल ज्ञान की कमी होती है, जिसके कारण वे सरकारी योजनाओं और ऑनलाइन सेवाओं का पूरा लाभ नहीं उठा पाते।

ऐसी स्थिति में सार्वजनिक पुस्तकालय ग्रामीण समुदाय के लिए एक महत्वपूर्ण संस्थान बन सकते हैं, जहाँ लोगों को न केवल पुस्तकें और अध्ययन सामग्री मिलती है बल्कि इंटरनेट, कंप्यूटर तथा डिजिटल संसाधनों तक पहुँच भी मिल सकती है। यदि सार्वजनिक पुस्तकालयों को उचित संसाधन, प्रशिक्षण कार्यक्रम और तकनीकी सुविधाएँ प्रदान की जाएँ, तो वे ग्रामीण लोगों में डिजिटल साक्षरता बढ़ाने का प्रभावी माध्यम बन सकते हैं।

अनुसंधान के उद्देश्य –

इस अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं :

1. ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल साक्षरता की वर्तमान स्थिति का अध्ययन करना।
2. सार्वजनिक पुस्तकालयों द्वारा प्रदान की जा रही डिजिटल सेवाओं और संसाधनों का विश्लेषण करना।
3. यह जानना कि ग्रामीण समुदाय के लोग डिजिटल ज्ञान प्राप्त करने के लिए सार्वजनिक पुस्तकालयों का किस हद तक उपयोग करते हैं।
4. सार्वजनिक पुस्तकालयों द्वारा संचालित डिजिटल साक्षरता कार्यक्रमों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करना।
5. ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल साक्षरता बढ़ाने में सार्वजनिक पुस्तकालयों के सामने आने वाली समस्याओं और चुनौतियों की पहचान करना।
6. सार्वजनिक पुस्तकालयों की भूमिका को अधिक प्रभावी बनाने के लिए उपयुक्त सुझाव प्रस्तुत करना।

2. सैद्धांतिक ढाँचा और अवधारणाएँ

2.1 डिजिटल साक्षरता : अवधारणा और विस्तार :

डिजिटल साक्षरता केवल तकनीकी कौशल नहीं है, बल्कि यह एक बहुआयामी क्षमता है जिसमें सूचना साक्षरता, कंप्यूटर साक्षरता, संचार साक्षरता और मीडिया साक्षरता शामिल हैं। संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्यों (एसडीजी) में डिजिटल साक्षरता को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा (एसडीजी–4), लैंगिक समानता (एसडीजी–5) और आर्थिक विकास (एसडीजी–8) से जोड़कर देखा गया है। ग्रामीण संदर्भ में, डिजिटल साक्षरता का अर्थ है किसान को मौसम की जानकारी, बाजार भाव और उन्नत कृषि तकनीकों तक पहुँच, छात्र को ई–लर्निंग संसाधनों तक पहुँचय महिलाओं को स्वयं सहायता समूहों के डिजिटल प्रबंधन में दक्षताय और युवाओं को रोजगार के अवसरों से जोड़ना।

2.2 डिजिटल विभाजन : ग्रामीण–शहरी असमानता :

डिजिटल विभाजन उन समूहों के बीच की खाई है जिनके पास डिजिटल तकनीकों तक पहुँच और उनके उपयोग की क्षमता है, और जिनके पास नहीं है। भारत में यह विभाजन ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। विकसित भारत 2047 के दृष्टिकोण में इस विभाजन को समाप्त करना प्राथमिकता है, जहाँ डिजिटल कनेक्टिविटी को हर नागरिक तक पहुँचाने का लक्ष्य रखा गया है। ग्रामीण क्षेत्रों में न केवल ब्रॉडबैंड कनेक्टिविटी का अभाव है, बल्कि डिजिटल उपकरणों की उपलब्धता और उनके रखरखाव की क्षमता भी सीमित है।

2.3 सार्वजनिक पुस्तकालय : परंपरा से डिजिटल केंद्र तक :

सार्वजनिक पुस्तकालय, अपनी प्रकृति में, एक ऐसा संस्थान है जो बिना किसी भेदभाव के समाज के सभी वर्गों की सेवा करता है। यह विश्वास, तटस्थता और सार्वजनिक सेवा का प्रतीक है। अंतर्राष्ट्रीय पुस्तकालय संघ एवं संस्थान (आईएफएलए) ने भी पुस्तकालयों को डिजिटल परिवर्तन के एजेंट के रूप में मान्यता दी है। जहाँ सरकारी कार्यालय, स्कूल या अन्य संस्थान किसी कारणवश सीमित पहुँच वाले हो सकते हैं, वहीं पुस्तकालय स्वाभाविक रूप से समावेशी होते हैं। यही कारण है कि ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल साक्षरता के प्रसार के लिए पुस्तकालय सबसे उपयुक्त मंच हैं।

3. ग्रामीण डिजिटल साक्षरता में सार्वजनिक पुस्तकालयों की भूमिका के आयाम

3.1 सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) अवसंरचना के केंद्र :

ग्रामीण क्षेत्रों में, अधिकांश परिवारों के पास न तो कंप्यूटर है और न ही उच्च गति का इंटरनेट। ऐसे में, सार्वजनिक पुस्तकालय इस अंतर को पाटने का कार्य करते हैं। नामीबिया में कम्युनिकेशंस रेगुलेटरी अथॉरिटी (सीआरएएन) द्वारा ग्रामीण पुस्तकालयों को कंप्यूटर और 50 एमबीपीएस इंटरनेट सुविधा प्रदान करना इस बात का उदाहरण है कि कैसे पुस्तकालय डिजिटल अवसंरचना के केंद्र बन सकते हैं। भारत में भी, राष्ट्रीय डिजिटल लाइब्रेरी ऑफ इंडिया (एनडीएलआई) जैसी पहलों ने डिजिटल शैक्षिक संसाधनों को मुफ्त उपलब्ध कराकर शिक्षा में बाधाओं को कम किया है, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में।

नागपुर जिला परिषद की 'एआई लैब ऑन व्हील्स' परियोजना इस दिशा में एक अभिनव प्रयोग है। दो विशेष रूप से डिजाइन की गई बसों में छह कंप्यूटर, इंटरैक्टिव डैशबोर्ड, वीआर हेडसेट और 3डी प्रिंटर लगे

हैं, जो दूरस्थ आदिवासी क्षेत्रों में जाकर छात्रों को आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और डिजिटल शिक्षा का अनुभव प्रदान करेंगी। यह पहल दर्शाती है कि जहाँ स्थायी पुस्तकालय नहीं बन सकते, वहाँ मोबाइल पुस्तकालय डिजिटल साक्षरता का विस्तार कर सकते हैं।

3.2 सामुदायिक सेवा केंद्र (सीएससी) के रूप में पुस्तकालय :

भारत के कई ग्रामीण पुस्तकालयों में कॉमन सर्विस सेंटर (सीएससी) संचालित होते हैं, जो ई–गवर्नेंस सेवाएँ, स्वास्थ्य जानकारी और आजीविका कौशल प्रशिक्षण प्रदान करते हैं। यह एकीकरण पुस्तकालयों को केवल पढ़ने के स्थान से ऊपर उठाकर सेवा प्रदान करने वाले संस्थान में बदल देता है। यहाँ ग्रामीण नागरिक आधार कार्ड बनवाना, पेंशन फॉर्म भरना, या किसान क्रेडिट कार्ड के लिए आवेदन करना सीख सकते हैं। यह 'हैंड्स–ऑन' अनुभव डिजिटल साक्षरता को सैद्धांतिक ज्ञान से व्यावहारिक कौशल में बदलने का कार्य करता है।

3.3 डिजिटल कौशल प्रशिक्षण के केंद्र :

दक्षिण अफ्रीका के मोगाले सिटी में एथेम्बलेथु मॉड्यूलर लाइब्रेरी द्वारा संचालित 'कंप्यूटर स्किल्स 101' कार्यक्रम ने सीमित संसाधनों में भी डिजिटल साक्षरता प्रशिक्षण का सफल मॉडल प्रस्तुत किया। इस कार्यक्रम के तहत, प्रतिभागियों को माउस कंट्रोल, बेसिक कंप्यूटर नेविगेशन, फाइल मैनेजमेंट और टाइपिंग जैसे मूलभूत कौशल सिखाए गए। भारत में, अशोका यूनिवर्सिटी के मोबाइल लाइब्रेरी प्रोग्राम ने हरियाणा के ग्रामीण क्षेत्रों में 40,000 ई–पुस्तकों और 400 शैक्षिक वीडियो तक पहुँच उपलब्ध कराकर स्कूली छात्रों की उपस्थिति में 70% से अधिक की वृद्धि दर्ज की।

3.4 महिला सशक्तिकरण और लैंगिक डिजिटल विभाजन को पाटना :

डिजिटल साक्षरता में लैंगिक असमानता ग्रामीण भारत की एक गंभीर समस्या है। राजस्थान में महिलाओं के लिए इंटरनेट सुविधा कार्यक्रम और केरल की डिजिटल साक्षरता पहलों में पुस्तकालयों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। ईरान के सिस्तान और बलूचिस्तान प्रांत में खजूर किसान महिलाओं पर किए गए अध्ययन में पाया गया कि ग्रामीण पुस्तकालय, विश्वास के केंद्र होने के नाते, महिलाओं को डिजिटल प्रशिक्षण देने में अधिक प्रभावी हैं, क्योंकि यहाँ सामाजिक–सांस्कृतिक बाधाएँ अपेक्षाकृत कम होती हैं।

3.5 किसानों और कृषि–आधारित समुदायों के लिए डिजिटल संसाधन :

कृषि प्रधान ग्रामीण अर्थव्यवस्था में, किसानों तक मौसम पूर्वानुमान, बाजार मूल्य, उन्नत कृषि तकनीकों और सरकारी योजनाओं की जानकारी पहुँचाना डिजिटल साक्षरता का महत्वपूर्ण आयाम है। ईरान के खजूर किसानों के अध्ययन में रेखांकित किया गया कि पुस्तकालय पारंपरिक कृषि ज्ञान को डिजिटल प्लेटफॉर्म से जोड़ने में सेतु का कार्य कर सकते हैं। भारत में, उत्तर प्रदेश के चित्रकूट जिले के रायपुरा गाँव में स्थापित डिजिटल लाइब्रेरी ने किसानों के बच्चों को कृषि से संबंधित प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी का अवसर दिया है।

3.6 युवाओं के लिए रोजगारोन्मुखी कौशल विकास :

ग्रामीण युवाओं के लिए रोजगार के अवसर सीमित हैं, और डिजिटल कौशल की कमी इस समस्या को और गंभीर बनाती है। पुस्तकालयों में सीवी बनाना, ऑनलाइन जॉब अप्लाई करना, ई–कॉमर्स प्लेटफॉर्म का उपयोग करना जैसे कौशल सिखाए जा सकते हैं। अमेरिका के कोलोराडो में इग्नासियो कम्युनिटी लाइब्रेरी में युवाओं के लिए रोबोटिक्स, कोडिंग और 3डी प्रिंटिंग की सुविधाएँ उपलब्ध हैं, जो उन्हें भविष्य के उद्यमी और

नेता बनने के लिए तैयार करती हैं।

3.7 सांस्कृतिक संरक्षण और डिजिटल स्टोरीटेलिंग :

ग्रामीण और आदिवासी समुदायों की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत को डिजिटल रूप में संरक्षित करने में पुस्तकालय महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। इग्नासियो कम्युनिटी लाइब्रेरी में डिजिटल स्टोरीटेलिंग, ओरल हिस्ट्री प्रोजेक्ट्स और वंशावली संसाधनों के माध्यम से स्थानीय संस्कृति को संरक्षित किया जा रहा है। यह कार्य न केवल सांस्कृतिक निरंतरता सुनिश्चित करता है, बल्कि समुदाय के युवाओं को अपनी जड़ों से जुड़ने का डिजिटल माध्यम भी प्रदान करता है।

3.8 प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी का केंद्र :

उत्तर प्रदेश के चित्रकूट जिले के रायपुरा गाँव में स्थापित निःशुल्क डिजिटल लाइब्रेरी ने साबित कर दिया है कि सही संसाधन उपलब्ध होने पर ग्रामीण छात्र भी राष्ट्रीय स्तर की प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी कर सकते हैं। इस लाइब्रेरी में एसएससी, नीट, आईएएस और पीसीएस जैसी परीक्षाओं के लिए डिजिटल सामग्री, मुफ्त वाई–फाई और वातानुकूलित पठन कक्ष की सुविधा है। यह पहल उन छात्रों के लिए वरदान साबित हुई है जो आर्थिक तंगी के कारण बड़े शहरों में कोचिंग नहीं ले सकते थे।

4. भारत में पुस्तकालय–आधारित डिजिटल साक्षरता पहल : केस स्टडी

4.1 केरल मॉडल : राज्य पुस्तकालय परिषद की डिजिटल साक्षरता मुहिम :

केरल, जो अपनी उच्च साक्षरता दर के लिए जाना जाता है, ने डिजिटल साक्षरता के क्षेत्र में भी अग्रणी भूमिका निभाई है। केरल राज्य पुस्तकालय परिषद के नेतृत्व में संचालित डिजिटल साक्षरता अभियानों ने हजारों ग्रामीण नागरिकों, विशेषकर महिलाओं और वरिष्ठ नागरिकों को डिजिटल रूप से साक्षर बनाया है। यहाँ पुस्तकालयों को केवल पुस्तकों के केंद्र के रूप में न देखकर, सामुदायिक शिक्षा के केंद्र के रूप में विकसित किया गया है।

4.2 राजस्थान : महिला डिजिटल साक्षरता कार्यक्रम :

राजस्थान में महिलाओं के लिए इंटरनेट सुविधा कार्यक्रम ने डिजिटल लैंगिक अंतर को पाटने का प्रयास किया है। इस कार्यक्रम के तहत, पुस्तकालयों को महिलाओं के लिए सुरक्षित डिजिटल सीखने के स्थान के रूप में विकसित किया गया। अलवर जिले में एस एम सहगल फाउंडेशन की 'उम्मीद' परियोजना के तहत डिजिटल लाइब्रेरी स्थापित की गई, जहाँ अठारह वर्षीय अफसीना जैसी छात्राओं ने पहली बार कंप्यूटर का उपयोग सीखा और शिक्षा के प्रति उनका नजरिया बदल गया।

4.3 हरियाणा : मोबाइल लाइब्रेरी कार्यक्रम :

अशोका यूनिवर्सिटी द्वारा स्मॉल स्टेप्स फाउंडेशन और वर्ल्डरीडर के सहयोग से शुरू किया गया मोबाइल लाइब्रेरी कार्यक्रम, सोनीपत जिले के दूरस्थ गाँवों में संचालित होता है। टेलीविजन और टैबलेट से सुसज्जित एक वैन 14 स्कूलों में जाकर बच्चों को डिजिटल संसाधन उपलब्ध कराती है। कार्यक्रम के प्रारंभिक 18 महीनों में 800 से अधिक छात्रों तक पहुँच बनाई गई और स्कूली उपस्थिति में उल्लेखनीय वृद्धि हुई।

4.4 उत्तर प्रदेश : रायपुरा डिजिटल लाइब्रेरी :

चित्रकूट जिले के रायपुरा गाँव में ग्राम प्रधान जगदीश पटेल की पहल पर स्थापित यह डिजिटल लाइब्रेरी,

सामुदायिक भागीदारी का अनूठा उदाहरण है। ग्रामीणों के दान से संचालित इस लाइब्रेरी में चार लाख रुपये मूल्य की पुस्तकें दान में मिली हैं। यहाँ 20 किमी के दायरे के युवा प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी करते हैं। यह लाइब्रेरी इस बात का प्रमाण है कि जनसहभागिता से सरकारी संसाधनों के अभाव में भी सफल डिजिटल साक्षरता केंद्र स्थापित किए जा सकते हैं।

4.5 महाराष्ट्र : नागपुर जिला परिषद की एआई लैब ऑन व्हील्स :

नागपुर जिला परिषद द्वारा शुरू की गई यह परियोजना डिजिटल साक्षरता के क्षेत्र में एक अभिनव प्रयोग है। दो विशेष बसों के माध्यम से, दूरस्थ आदिवासी क्षेत्रों के छात्रों को आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, वर्चुअल रियलिटी और 3डी प्रिंटिंग जैसी उन्नत तकनीकों का अनुभव दिया जा रहा है –8। साथ ही, जिले में 103 आधुनिक पुस्तकालय स्थापित किए जा रहे हैं, जिनमें से प्रत्येक में 7,000 पुस्तकें, सोलर पैनल और सीसीटीवी जैसी सुविधाएँ होंगी।

5. अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य : सीखने योग्य मॉडल

5.1 नामीबिया : ग्रामीण पुस्तकालयों में तकनीकी निवेश :

नामीबिया के कम्युनिकेशंस रेगुलेटरी अथॉरिटी (सीआरएएन) ने गोचास और कोएस के ग्रामीण पुस्तकालयों में आठ कंप्यूटर दान किए और इंटरनेट स्पीड को 50 एमबीपीएस तक उन्नत किया। यह पहल सरकारी एजेंसियों और पुस्तकालयों के बीच साझेदारी का उत्कृष्ट उदाहरण है। इस निवेश ने न केवल छात्रों और युवाओं को डिजिटल कौशल सीखने में मदद की, बल्कि युवा उद्यमियों, नौकरी चाहने वालों और किसानों को भी सशक्त बनाया।

5.2 दक्षिण अफ्रीका : एथेम्बलेथु मॉड्यूलर लाइब्रेरी :

दक्षिण अफ्रीका के मोगाले सिटी में स्थित यह लाइब्रेरी, सीमित संसाधनों में भी डिजिटल साक्षरता में उत्कृष्टता का उदाहरण है। 'कंप्यूटर स्किल्स 101' कार्यक्रम के माध्यम से यहाँ बच्चों को मूलभूत कंप्यूटर कौशल सिखाए जाते हैं। लाइब्रेरियन पीटर मोरवाने का मानना है कि इस कार्यक्रम का उद्देश्य गहरे ग्रामीण और वंचित क्षेत्रों के बच्चों को यह दिखाना है कि वे भी राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिस्पर्धा कर सकते हैं और सफल हो सकते हैं।

5.3 अमेरिका : इग्नासियो कम्युनिटी लाइब्रेरी (आदिवासी समुदाय) :

कोलोराडो में सदर्न यूटे इंडियन ट्राइब रिजर्वेशन पर स्थित इग्नासियो कम्युनिटी लाइब्रेरी, आदिवासी समुदायों में पुस्तकालयों की भूमिका का उत्कृष्ट उदाहरण है। यहाँ ब्रॉडबैंड एक्सेस, डिवाइस लेंडिंग, आइडिया लैब मेकरस्पेस (3डी प्रिंटर, मल्टीमीडिया एडिटिंग टूल्स, अरुडिनो और रास्पबेरी पाई किट), वन–ऑन–वन टेक्नोलॉजी ट्रेनिंग, टेलीहेल्थ सहायता और युवाओं के लिए स्टेम प्रोग्रामिंग जैसी सुविधाएँ उपलब्ध हैं। यह पुस्तकालय न केवल तकनीकी केंद्र है, बल्कि सामुदायिक संवाद और सांस्कृतिक संरक्षण का भी केंद्र है।

5.4 ईरान : खजूर किसानों के लिए डिजिटल साक्षरता कार्यक्रम :

ईरान के सिस्तान और बलूचिस्तान प्रांत में खजूर किसानों पर किए गए अध्ययन में पाया गया कि किसानों के पास पारंपरिक कृषि विशेषज्ञता तो है, लेकिन डिजिटल टूल्स के प्रति अविश्वास और सांस्कृतिक रूप से प्रासंगिक संसाधनों के अभाव के कारण वे डिजिटल दुनिया से जुड़ने में असमर्थ हैं। इस अध्ययन में ग्रामीण पुस्तकालयों को इस अंतर को पाटने के लिए सबसे विश्वसनीय संस्थान के रूप में पहचाना गया है।

6. निष्कर्ष :

ग्रामीण भारत में डिजिटल साक्षरता का प्रसार केवल तकनीकी आवश्यकता नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय और समावेशी विकास का प्रश्न है। सार्वजनिक पुस्तकालय, अपनी विश्वसनीयता, सुलभता और समावेशी प्रकृति के कारण, इस कार्य को करने के लिए सबसे उपयुक्त संस्थान हैं। प्रस्तुत अध्ययन में हमने देखा कि केरल के डिजिटल साक्षरता अभियान से लेकर चित्रकूट की सामुदायिक डिजिटल लाइब्रेरी तक, और हरियाणा के मोबाइल पुस्तकालय से लेकर नागपुर की एआई लैब ऑन व्हील्स तक, अनेक सफल प्रयोग हुए हैं जिनसे सीखा जा सकता है। अंतर्राष्ट्रीय उदाहरण, विशेषकर नामीबिया, दक्षिण अफ्रीका, अमेरिका और ईरान के अनुभव, हमें बताते हैं कि यह मॉडल वैश्विक स्तर पर भी कारगर साबित हो रहा है।

डिजिटल विभाजन को पाटना और ग्रामीण समुदायों को डिजिटल रूप से सशक्त बनाना विकसित भारत 2047 के लक्ष्य को प्राप्त करने की आधारशिला है। इसके लिए आवश्यक है कि पुस्तकालयों को केवल पुस्तकों के भंडार के रूप में न देखकर, सामुदायिक प्रौद्योगिकी केंद्र के रूप में विकसित किया जाए। यह परिवर्तन तभी संभव है जब पर्याप्त वित्तीय संसाधन, प्रशिक्षित मानव शक्ति, मजबूत डिजिटल अवसंरचना और समग्र नीतिगत समर्थन उपलब्ध हो।

सार्वजनिक पुस्तकालयों में निवेश करना, डिजिटल साक्षरता में निवेश करना है, और डिजिटल साक्षरता में निवेश करना, मानव पूंजी में निवेश करना है। यह निवेश न केवल व्यक्तिगत सशक्तिकरण में सहायक होगा, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करेगा, सामाजिक समानता को बढ़ावा देगा और सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने में भी योगदान देगा। पुस्तकालयों को डिजिटल साक्षरता के केंद्र के रूप में विकसित करना, 21वीं सदी के भारत के निर्माण की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है।

संदर्भ :

- Yadagiri, S., & Ramshirish, M. (2025). Libraries, Digital Inclusion and Sustainable Development: The Indian Experience. 14th International CALIBER 2025. INFLIBNET Centre Gandhinagar.
- Communications Regulatory Authority of Namibia (CRAN). (2025). CRAN Boosts Digital Literacy in Gochas and Koes. https://www.cran.na/cran-boosts-digital-literacy-in-gochas-and-ko%d1%91s/
- Mechieo, K., Nath, K., & Purkayastha, N. (2025). Libraries as Community Service Platforms for Digital Literacy: A Comparative Framework for Rural and Urban India in the Vision of Viksit Bharat 2047. Proceedings of the International Conference on Smart Systems and Social Management (ICSSSM 2025). Atlantis Press.
- Mogale City. (2025). Ethembalethu Modular Library recognised for digital excellence. https://mogalecity.gov.za/ethembalethu-modular-library-recognised-for-digital-excellence/
- University at Albany. (2025). Study Highlights How Tribal Libraries Bridge the Digital Divide.

https://www.albany.edu/news-center/news/2025-study-highlights-how-tribal-libraries-bridge-digital-divide

- IndiaWest. (2025). Umeed: Bringing Digital Hope To Rural Schools In India. https://indiawest.com/umeed-bringing-digital-hope-to-rural-schools-in-india/
- International Federation of Library Associations and Institutions (IFLA). (2025). From Palm to Platform: Addressing the Digital Literacy Needs of Rural Date Farmers in Sistan and Baluchistan. https://repository.ifla.org/items/0395c03b-572a-48b5-ae0a-ec0159e92ad2
- Times of India. (2025). AI on wheels to zoom into tribal areas, ZP to set up village libraries. https://timesofindia.indiatimes.com/city/nagpur/ai-on-wheels-to-zoom-into-tribal-areas-zp-to-set-up-village-libraries/articleshow/125039016.cms

मोबाइल नंबर 8181926122
ईमेल आईडी : deepikaraj-87@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 82-88

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Jal, Jangal, Zameen as Sacred Assets : Revisiting Tribal Resource Rights under PESA through the Vedic Concept of 'Pancha Mahabhuta'

Ravi Verma, Research Scholar,
Professor Dr. J.C. Sinha, Research Supervisor,
School of Social Science, Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore, Madhya Pradesh.

Abstract:

The relationship between tribal communities and natural resources has long been rooted in cultural, spiritual, and ecological frameworks. In India, the slogan "Jal, Jangal, Zameen" (water, forest, land) represents not only economic resources but the foundation of tribal identity and survival. This paper reinterprets tribal resource rights under the Panchayats (Extension to Scheduled Areas) Act, 1996 (PESA) through the philosophical lens of the Vedic concept of Pancha Mahabhuta-the five fundamental elements: earth (Prithvi), water (Jal), fire (Agni), air (Vayu), and space (Akash). By bridging legal frameworks with tribal and Vedic ecological thought, the paper argues for a more holistic and culturally grounded approach to governance, sustainability, and rights recognition. The interdependence between tribal autonomy and sustainable resource governance will help in tribal empowerment. The Ministry of Panchayati Raj took up initiatives between 2 October 2009 and 2 October 2010, naming the period as the "Year of Gram Sabha". Tribal communities constitute about 8.6% of India's population (Ministry of Tribal Affairs, Government of India). This paper discusses the importance of Pancha Mahabhuta in the PESA Act of 1996 with the help of various studies, research articles, books, journals and columns.

Introduction :

India's tribal communities have historically maintained a symbiotic relationship with nature. The phrase Jal, Jangal, Zameen encapsulates their worldview, where natural resources are not commodities but sacred entities. However, colonial land policies and post-independence development models disrupted this balance.The enactment of PESA in 1996 aimed to restore self-governance and

community control over resources in Scheduled Areas. Yet, implementation gaps persist. This paper proposes that revisiting PESA through the philosophical framework of Pancha Mahabhuta (The Five Great Elements) can deepen our understanding of tribal ecological ethics and strengthen rights-based governance.In the post-colonial era, this slogan has evolved into a cry for "Resource Sovereignty." As India surged toward industrial modernization, the tribal heartlands, which are paradoxically the richest in mineral wealth and the poorest in economic indices, became the primary sites of "Internal Colonization." At the core of the conflict over tribal resource rights lies a fundamental philosophical divergence. The modern legal framework, inherited from British colonial jurisprudence, operates on the doctrine of Eminent Domain. OThe Pancha Mahabhuta theory-comprising Prithvi (Earth), Ap/Jala (Water), Agni (Fire), Vayu (Air), and Akasha (Space/Ether)-is the foundational blueprint of Indian cosmology. The Vedas and Upanishads do not treat these elements as inanimate matter; they are seen as manifestations of the Divine.

Prithvi (Zameen) : The Mother who sustains, requiring veneration rather than just tillage.

Jala (Jal) : The purifier and the source of all biological rhythms. Vayu/Akasha (Jangal) : The forest is the lungs (Air) and the sacred silence (Space) where the Cosmic Order is maintained. By revisiting tribal rights through this lens, we move the conversation from "legal entitlements" to "cosmic obligations." If the State destroys a forest, it is not just violating a statute; it is disrupting the Pancha Mahabhuta balance, which according to Vedic thought, inevitably leads to social and environmental disintegration. The Provisions of the Panchayats (Extension to Scheduled Areas) Act, 1996 (PESA), was envisioned as a "Constitution within the Constitution." It was the first modern Indian law to acknowledge that tribal communities have a "traditional and customary" right to govern themselves.

The Act's most radical feature is the empowerment of the Gram Sabha. Unlike the top-down approach of the standard Panchayati Raj, PESA mandates that the Gram Sabha be the guardian of the Pancha Mahabhuta at the local level. The crisis of environmental governance in modern India often stems from a fragmented view of nature-treating the forest, the river, and the soil as separate, exploitable categories. In contrast, this chapter explores the Pancha Mahabhuta (The Five Great Elements) as an integrated cosmological framework. By analyzing the Vedic concept of Rta (Cosmic Order) and the specific attributes of the five elements, we can construct a philosophical foundation that justifies the "sacred" status of tribal resources. To understand the tribal claim over Jal, Jangal, and Zameen, one must first delve into the Prithvi Sukta of the Atharva Veda and other foundational texts, this section establishes that the tribal reverence for the land is a contemporary manifestation of a timeless "Sacred Ecology" that precedes modern environmentalism by millennia. The principle of Prithvi serves as the primary point of convergence between Vedic philosophy and tribal land rights . In the Vedic tradition,

the Earth is not a passive object of ownership but a nurturing mother, famously articulated in the Atharva Veda as *"*Mata Bhumih Putroham Prithivyah*"* (The Earth is my mother and I am her son). This filial relationship dictates a specific code of conduct: extraction is permitted only for survival, and any harm to the Earth is seen as a violation of the cosmic order. For tribal communities, land is similarly an ancestral heritage, a burial ground, and a source of spiritual power. When PESA attempts to protect tribal land from alienation, it is essentially providing a legal shield to this sacred relationship. The displacement of a tribe from its land is, therefore, not just a socio-economic disruption but a spiritual "de-mothering" that shatters the first and most vital of the Pancha Mahabhuta.

The element of Jala represents the fluid essence of life, resonating with the tribal concept of Jal. In the Vedic hymns, water is praised as Shantivah (the bringer of peace) and Bheshaja (the medicine). It is considered a communal asset that cannot be privately "owned" in the sense of absolute exclusion. This aligns perfectly with tribal customary laws, where streams, ponds, and rivers are managed through collective stewardship. The PESA Act's provision granting Gram Sabhas the power to manage minor water bodies is a modern legal recognition of this ancient truth. By treating water as a sacred element rather than a commercial utility, both the Vedic and tribal perspectives offer a radical alternative to the privatization of water, asserting that the purity and flow of Jala are essential for the maintenance of Rta.

The forest, or Jangal, serves as the complex theater where the remaining three elements-Vayu (Air), Agni (Fire), and Akasha (Space)-interact to sustain the biosphere. In Vedic thought, Vayu is the Prana (life force) of the world, and the forest is its primary lungs. Agni is seen in the digestive fire of the soil and the transformative power of the sun that the forest canopy captures. Akasha is the silent expanse that allows for growth and the resonance of sacred sounds. For the tribal inhabitant, the forest is not a "timber mine" but a sacred grove, often home to the Sarna or the village deity. The destruction of forests for industrial heat or space violates the sanctity of Vayu and Akasha, leading to a literal and metaphorical "suffocation" of the community. PESA's recognition of tribal rights over "minor forest produce" is, in this light, an acknowledgment of the tribe's role as the ritualistic and physical guardian of these subtle elements.

The Triad of Survival-Sociology and Symbiosis of Jal, Jangal, and Zameen :

In the tribal sociology of India, the triad of Jal*,* Jangal*, and* Zameen constitutes a "Total Social Phenomenon"-a term used by sociologists to describe realities that are simultaneously legal, economic, religious, and aesthetic. Unlike the Western Lockean concept of land as a product of individual labor and enclosure, tribal land is characterized by "non-alienable communal tenure." For the Gond, Santhal, or Munda, the land belongs to the spirits of the ancestors (Pitru), and the living

generation acts only as temporary stewards. This sociological reality explains why land acquisition by the state is often met with such visceral resistance; it is viewed as a form of "spiritual displacement." The land is the site of the Sarna (sacred grove) and the Sasandiri (burial stones), making the Zameen a living archive of tribal history. To lose the land is to lose the map of one's soul, rendering the legal protections of PESA a vital necessity for the preservation of human dignity.

The second vertex, Jangal (Forest), represents the economic and medicinal autonomy of the tribe. The forest is not merely a collection of trees but a complex social space. For many tribes, the forest is the "Common Property Resource" (CPR) that provides up to 60% of their nutritional and medicinal needs through Minor Forest Produce (MFP) like Mahua, Tendu leaves, and medicinal herbs. The forest acts as a buffer against the vagaries of the external market, and its protection under PESA is, therefore, an act of safeguarding tribal economic sovereignty. The third vertex, Jal (Water), serves as the lifeblood that connects the land to the forest. In tribal cosmology, water bodies are often considered the dwelling places of powerful deities and spirits. The management of water in tribal areas is historically characterized by ingenious traditional engineering-such as the Dongs of the Bodos or the Zabo system of the Nagas-which emphasizes gravity-based irrigation and collective maintenance. Unlike state-led irrigation projects that centralize control, tribal water management is inherently democratic and localized.

PESA 1996-The Constitutional Shield for the Sacred :

The Provisions of the Panchayats (Extension to Scheduled Areas) Act, 1996, commonly known as PESA, represents a watershed moment in Indian jurisprudence. Regarding Zameen, PESA provides a formidable shield against alienation. Section 4(i) mandates that the Gram Sabha or the Panchayats at the appropriate level must be consulted before making any land acquisition for development projects and before resettling or rehabilitating persons affected by such projects in the Scheduled Areas. The protection of Jangal under PESA is centered on the ownership of Minor Forest Produce (MFP). Section 4(m)(ii) specifically endows the Gram Sabha with the ownership of MFP, which includes non-timber items like bamboo, tendu leaves, and medicinal herbs. While PESA provides a robust legal framework on paper, its implementation occurs within a global economic system that views Jal, Jangal, and Zameen as "commodities" rather than "assets of the soul." A primary site of this conflict is the mining sector, particularly in the "Red Corridor" of India. Here, the Zameen is rich in bauxite, iron ore, and coal. Under the colonial-era Land Acquisition Act (and its 2013 successor), the state often declares mining a "public purpose," thereby overriding the "Sacred Asset" status of the land. This examines the landmark Vedanta vs. Gram Sabha (Niyamgiri) case as a quintessential example of this clash. The Dongria Kondh tribe argued that the Niyamgiri hill was not just a source of bauxite but

the physical body of their deity, Niyam Raja. The conflict extends to the element of Jal (Water), where the commodification of rivers for hydroelectric power or industrial cooling disrupts the ritual and ecological flow of the Jala. When a river is dammed, it is no longer the "moving goddess" of Vedic hymns or the "life-giver" of tribal lore; it becomes a "hydro-resource." This explores how such projects often proceed without the "informed consent" of the Gram Sabha, as mandated by PESA.

Toward an Ecological Jurisprudence-Synthesizing Law and Divinity :

This proposes the development of a "Sacred Jurisprudence", a legal philosophy that transcends the secular-materialist interpretation of PESA and integrates the Vedic-Tribal ethic of the Pancha Mahabhuta. A critical tool in this legal evolution is the concept of "Legal Personhood" for natural entities. The analysis of landmark decisions by the Uttarakhand High Court (later stayed but still philosophically significant) which declared the Rivers Ganga and Yamuna as "living entities" with the rights of a person. This judicial reasoning perfectly aligns with the Vedic veneration of Jala and the tribal worship of forest deities. If a forest (Jangal) is recognized as a legal person, its destruction is no longer a mere administrative "land diversion" but a "violation of a right to life." By anchoring PESA in this "Rights of Nature" framework, we provide a constitutional basis for the tribal belief that their resources are living, breathing assets that cannot be killed for profit.

The Implementation Gap-Bureaucratic Inertia and the Dilution of Power :

Despite the "Sacred Asset" status of these resources and the "Constitutional Shield" of PESA, there exists a profound "Implementation Gap." This chapter analyzes the systematic ways in which the spirit of PESA is hollowed out by bureaucratic inertia, the non-formulation of state-level rules, and the prioritization of industrial capital over tribal sovereignty. It argues that the state often treats PESA as a "procedural hurdle" to be bypassed rather than a "substantive mandate" to be followed, leading to a direct violation of the Pancha Mahabhuta balance.

A primary obstacle is the State-Level Reluctance to devolve power. Although PESA is a central legislation, its execution depends on the states framing specific rules for its implementation. Decades after the Act's inception, several states with significant tribal populations have either failed to frame these rules or have drafted them in a way that dilutes the Gram Sabha's authority. For instance, the mandatory "consultation" for land acquisition is frequently interpreted by bureaucrats as a mere "information-sharing session" rather than a requirement for "informed consent." This semantic dilution allows the state to seize tribal land under the guise of legal compliance, effectively ignoring the community's refusal to desecrate their sacred assets. The conflict over the Jangal is exacerbated by the overlapping and often contradictory jurisdictions of the Forest Department and the Gram Sabha. While PESA grants ownership of Minor Forest Produce (MFP) to the tribes, the colonial-era Indian

Forest Act still empowers forest officials to regulate transit and trade. The management of Jal faces a similar crisis of "Administrative Enclosure." Large-scale river linking projects and the construction of mega-dams are often planned at the central or state level, far removed from the Gram Sabhas they affect. Even when PESA mandates control over minor water bodies, the definition of "minor" is often manipulated to exclude larger streams or rivers that are vital to tribal life. When industrial plants pollute the groundwater-the Jala element-local communities find it nearly impossible to hold corporations accountable through the PESA framework because the regulatory bodies (like State Pollution Control Boards) operate outside the Gram Sabha's influence.

Conclusion-The Synthesis of Rta, Law, and the Future :

The conclusion of this research serves as a synthesis of the metaphysical, sociological, and legal arguments presented throughout the paper. It reaffirms that the protection of Jal, Jangal, and Zameen is not merely a localized tribal issue but a civilizational imperative that finds its most profound articulation in the Vedic concept of Rta-the cosmic order. By revisiting tribal resource rights under PESA through the lens of the Pancha Mahabhuta, this study has demonstrated that the "environmental crisis" is fundamentally a "spiritual crisis." The conclusion argues that the future of Indian environmental jurisprudence lies in a return to this "Sacred Ecology," where the law serves as a guardian of the primordial elements rather than a broker for their extraction.

The primary finding of this research is that the PESA Act of 1996 contains the "latent seeds" of a sacred jurisprudence, but these seeds cannot sprout in the sterile soil of materialistic bureaucracy. Furthermore, the paper concludes that the Vedic-Tribal synthesis offers a unique "Third Way" for development-one that avoids both the destructive path of unbridled industrialization and the stagnancy of absolute isolationism. This "Middle Path" suggests that resources can be used, but only within the limits of their regenerative capacity, as dictated by the principles of Pancha Mahabhuta. The conclusion offers a set of policy recommendations :

Constitutional Amendment : To elevate the status of the Gram Sabha from a "consultative" body to a "consenting" body in all matters involving the five elements.

Judicial Training : Sensitizing the judiciary to the concepts of "Sacred Assets" and "Ecological Trust" to move beyond the narrow interpretation of property rights.

Educational Integration : Incorporating tribal ecological knowledge and Vedic environmental ethics into the national curriculum to foster a generation that views nature with reverence rather than greed.

The slogan Jal, Jangal, Zameen is a modern-day Mantra for planetary survival. As the world faces the accelerating threats of climate change and ecological collapse, the "Sacred Assets" framework

provides a roadmap for a sustainable future. The PESA Act, when infused with the spirit of the Pancha Mahabhuta, becomes more than a law for Scheduled Areas; it becomes a model for a "Green Jurisprudence" that could save the entire nation. To protect the tribe is to protect the forest; to protect the forest is to protect the rain; and to protect the rain is to uphold the Rta that sustains all of life. The journey toward justice for India's tribes is, ultimately, a journey toward the restoration of the sacred balance of the earth itself.

References:

- The Provisions of the Panchayats (Extension to Scheduled Areas) Act, 1996 (PESA). Act No. 40 of 1996.
- The Scheduled Tribes and Other Traditional Forest Dwellers (Recognition of Forest Rights) Act, 2006 (FRA).
- The Constitution of Indi**..** (Fifth and Sixth Schedules; Article 21, Article 48A, and Article 51A(g)).
- Bhuria Committee Report (1995). Report of the High-Level Committee on the Extension of Provisions of the Constitution (73rd Amendment) Act, 1992 to Scheduled Areas.
- Ministry of Tribal Affairs (2014). *Report of the High-Level Committee on Socio-Economic, Health and Educational Status of Tribal Communities of India* (Virginius Xaxa Committee Report).
- The Atharva Veda**.** (Specifically the *Prithvi Sukta* or Hymn to the Earth, Book 12, Hymn 1).
- The Rig Veda. (Hymns to *Apah* (Water) and *Aranyani* (Goddess of the Forest)).
- The Isha Upanishad. (Verse 1: *"Ishavasyam Idam Sarvam"* – Concept of everything being permeated by the Divine).
- Xaxa, Virginius (2008). *State, Society, and Tribes: Issues in Post-Colonial India.* Contemporary Indian Studies.
- UNDP India. *Local Self-Governance in Scheduled Areas: A Study of PESA Implementation.*

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 89-95

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Aspect Based Split Ergativity and Verbal Categories in Spoken Braj Bhasha

Juveria Alam

Research Scholar, Department of Linguistics, Aligarh Muslim University.

Ovais Amin

Research Scholar, Department of Linguistics, University of Kashmir.

Abstract :

This study offers a comprehensive exploration of the verbal system in Braj Bhasha, a Western Indo-Aryan language with deep literary roots in the Braj region of northern India. Focusing on tense, aspect, and mood (TAM) categories, and integrating valency and ergative alignment, the research illuminates how Braj encodes temporal, modal, and evidential distinctions through its verb morphology and syntax.

This research catalogue over a dozen core verb roots (e.g., *kərənɔ* "to do", *pinɔ* "to drink", *ʤino* "to live") and analyze their morphophonological behavior across TAM distinctions. In tense, present, past, future, and perfect tenses are systematically realized via affixes and auxiliaries (e.g., *-ɔ*, *-gɔ*, *hai/θi*, *hapti*). Aspectual variation is intricate and includes habitual (both present and past), progressive, perfective, and presumptive moods. The subjunctive is expressed both in its classic sense ("ka:ʃ me cake kha pati") and through less overt paradigms. Mood distinctions, indicative, imperative, and subjunctive are clearly identifiable in both morphological and syntactic structures.

A key finding is Braj's split ergativity, whereby ergative marking occurs in perfective contexts but not in imperfective ones, a pattern reminiscent of other Indo-Aryan languages. This study argues that Braj's verbal system is aspect-prominent, with aspectual distinctions playing a more central grammatical role than tense or mood, consistent with typological frameworks that classify languages according to their TAM prominence.

By offering a richly attested TAM paradigm and insight into valency and alignment patterns, this study fills a critical gap in descriptive and typological accounts of Braj. It not only enhances our understanding of an under-resourced linguistic system but also lays a

theoretical foundation for future computational and typological work on related Indo-Aryan languages.

Keywords : Braj Bhasha, Tense–Aspect–Mood (TAM), Aspect-Based Split Ergativity, Valency, Ergative Alignment.

1. Introduction :

Braj Bhasha, a historically rich Western Indo-Aryan language, is widely spoken in the Braj region of Uttar Pradesh, an eminent cultural heartland of India. Despite its profound literary legacy, its spoken vernacular, especially verbal morphology and syntax, remains underdocumented in contemporary linguistic research. This study addresses this gap by closely analyzing the verbal categories, specifically tense, aspect, mood, valency, and evidentiality in natural speech.

Verbs play a central role in Braj grammar, marking not only the time of event (tense), but also its internal temporal structure (aspect), the speaker's attitude or modality (mood), and whether the action is complete, habitual, progressive, or evidential. Gender and number agreement, along with split ergativity in perfective contexts, further shape verb morphology. Additionally, valency, the number of core arguments a verb governs, distinguishes between intransitive (*ʤino* "to live", *baiʈʰogo* "to sit") and transitive verbs (*kʰaibɔ* "to eat", *kərənɔ* "to do").

By analyzing a corpus of conversational narratives elicited via sociolinguistic interviews, the study offers :

1. A systematic documentation of TAM paradigms in authentic speech.
2. Evidence for aspect-based ergative alignment in perfective contexts.
3. Insights into how tense, aspect, and mood interlock with narrative style and social factors like age and occupation.

The findings enhance descriptive grammars of Braj and contribute typologically to Indo-Aryan linguistics, while supporting computational language applications such as NLP and ASR systems tailored for regional languages.

2. Methodology

2.1 Data Collection :

This study employs field methods grounded in variationist sociolinguistics, particularly inspired by Labov's approach to sociolinguistic interviews and efforts to mitigate the observer's paradox.

- **Participants :** Ten native Braj speakers (balanced by age, gender, and occupation) from a single village were purposively selected. This allowed for cross-sectional comparison across demographics.

- **Interview sessions :** Over multiple visits, casual conversations were recorded on the researcher's phone with prior informed consent, focusing on everyday routines, memorable experiences, and preferred topics.
- **Elicitation style :** Following Labov's conversational modules (e.g., daily life, work, family), informants were encouraged to speak freely, minimizing researcher intervention and formal prompts.
- **Recording setup :** Each recording lasted approximately 10–15 minutes, producing roughly two hours of continuous vernacular speech.
- **Data authenticity :** Multiple visits helped build rapport and reduce observer interference. Using narrative prompts (e.g., recounting a typical day) helped trigger natural, spontaneous discourse.

2.2 Ethical Considerations :

Participants were briefed about the study's goals, assured confidentiality, and given the option to decline answering any question, mirroring participant-centered protocols. Data collection adhered to ethical standards, with ongoing consent and allowance for withdrawal at any stage.

This methodology ensures the dataset reflects authentic colloquial speech, enabling a robust analysis of verbal expression in real communicative contexts.

3. Verb Morphology and Valency

3.1 Verb Forms :

Braj verbs denote actions or states and serve as predicates that attribute properties to nouns or adjectives. They can be simple or complex and are morphologically marked for tense, aspect, mood, and evidentiality. Verbs are also distinguished by their valency, i.e., the number of arguments they can take.

Examples :

Verbs	Gloss
kərənɔ	To do
pinɔ	To drink
uʈʰəno	To rise
cəmkɑnɔ	To polish
əpənɑnɔ	To accept
kʰətkʰətɑnɔ	To knock
tʰərtʰərɑnɔ	To shiver

ʤino	To live
kʰɑibɔ	To eat
rəhibɔ	To stay
baiʈʰogo	To sit

4. Tense

Tense in Braj indicates the time of action relative to the moment of speaking. The language distinguishes among present, past, future, and perfect tenses.

4.1 Present Tense

- Example 1: *məhan gʰar kɔ ja:tɔ*
  Mohan is going home.
- Example 2: *Mɔe bʰai sku:l jatɔ hai*
  My brother goes to school.

4.2 Past Tense

- Example 1: *raja kam sæ gajɔ*
  Raja has gone for work.
- Example 2: *Mæne sæb khayɔ*
  I ate the apple.

4.3 Future Tense

- Example 1: *mæ kal delhi jaungɔ*
  I will go to Delhi tomorrow.
- Example 2: *ram kal kʰayegɔ*
  Ram will eat tomorrow.

4.4 Past Perfect

- Example 1: *sita kal ʃam kɔ gəĩ*
  Sita went yesterday evening.
- Example 2: *vo gʰar ʧaligyi θi*
  She had gone home.

4.5 Present Perfect

- Example 1: *rameʃ so ʧukɔ ha*
  Ramesh is asleep.
- Example 2: *Sita sku:l nai gəjɔɛ*
  Sita has not gone to school.

4.6 Present Continuous

- Example 1: *ram likʰrɔ hai*
  Ram is writing.
- Example 2: *vo rɔrɔ hai*
  He is crying.

4.7 Past Continuous

- Example 1: *Hʊm kl tehel re θe*
  We were walking yesterday.
- Example 2: *vo gana ga rhi θi*
  She was singing a song.

5. Aspect :

Aspect in Braj conveys the temporal structure of an action, such as its completion, habituality, or progression.

5.1 Present Habitual

- Example 1: *vo vahan ja:t hai*
  He goes there.
- Example 2: *sita deli sku:l ʤatɔ*
  Sita goes to school daily.

5.2 Past Habitual

- Example 1: *vo park me kʰelne ʤata θa*
  He used to go to the park to play.
- Example 2: *shifa delhi jati 0i*
  Shifa used to go to Delhi.

5.3 Presumptive

- Example 1: *namra a: rahi hogi*
  Namra would be coming.
- Example 2: *vo log are honge*
  Those people might be coming.

5.4 Subjunctive

- Example: *ka:ʃ me cake kʰa pati*
  I wish I could eat the cake.

5.5 Present Progressive

- Example: *vo pani me kʰel rha θa*
  He was playing in the water.

5.6 Simple Perfective

- Example: *laundija gʰar gje*
  The girl went home.

6. Mood

Mood reflects the speaker's attitude toward the action. Braj distinguishes among indicative, imperative, and subjunctive moods.

6.1 Indicative

- Example: *ʊski bat sʊni so bʊ bʰəʤi gəjɔ*
  Listening to their talk, he ran away.

6.2 Imperative

- Example: *ʤəɔ fəʈafəʈ*
  Go fast.

6.3 Subjunctive

- Example: *ʤane tʊ ja ʤane na*
  Whether you know it or not.

7. Ergative Alignment

Braj exhibits aspect-based ergativity, where the subject of a transitive verb in perfective aspect is marked with the ergative case and does not trigger verb agreement. In contrast, in imperfective aspects, the subject is nominative and agrees with the verb.

Example :

- *mɛ-ne ek billi mari*
  I hit a cat.

Here, *mɛ-ne* is the ergative-marked subject, and the verb *mari* does not agree with the subject in gender or number.

8. Conclusion :

This study has presented a detailed account of the verbal system of Braj Bhasha, with particular emphasis on the intricate interaction of tense, aspect, mood (TAM), valency, and ergative alignment as attested in naturalistic conversational data elicited through sociolinguistic interviews. It has documented the canonical tense distinctions, present, past, and future, and shown how these are morphologically realised across a wide range of simple and complex verb forms, while also bringing to light a robust aspectual paradigm comprising habitual, progressive, perfective, presumptive, and subjunctive categories that together point

to the aspect-prominent character of Braj's verbal system. In parallel, it has highlighted the role of mood markers such as the indicative, imperative, and subjunctive in signaling speaker's attitudes, modality, and illocutionary force. The analysis further confirms that Braj conforms to the well-known pattern of aspect-based split ergativity in New Indo-Aryan, whereby transitive subjects in perfective contexts are marked with post-posed "-ne" and fail to trigger verb agreement, while subjects in imperfective contexts remain nominative and control agreement. These findings carry several broader implications: at a typological level, they extend the evidence for perfective-triggered ergativity in South Asian languages and underscore the centrality of aspect in alignment systems; from a diachronic perspective, they lend support to the view that Indo-Aryan languages underwent a shift from tense-centred to aspect-centred systems in the Middle Indo-Aryan period; and descriptively, the clear TAM paradigms and ergative patterns documented here provide fresh empirical material for descriptive grammars of Braj, complementing and enriching existing work on Hindi-Urdu and related dialects. More generally, the study fills an important gap by offering a comprehensive account of Braj verbal morphology and syntax grounded in authentic conversational usage rather than relying solely on literary or elicited forms, thereby laying a firm foundation for future research on computational modelling, dialectology, and comparative Indo-Aryan semantics, and simultaneously supporting the development of language technologies such as NLP tools, speech recognition, and educational resources for under-resourced regional languages like Braj Bhasha.

References :

- *Bybee, J., Perkins, R., & Pagliuca, W. (1994). The Evolution of Grammar. University of Chicago Press.*
- *Chandra, P., & Kaur, G. (2020). Braj in the Ergativity Hierarchy. Formal Approaches to South Asian Languages.*
- *Comrie, B. (1976). Aspect. Cambridge University Press.*
- *Comrie, B. (1985). Tense. Cambridge University Press.*
- *Dahl, Ö. (1985). Tense and Aspect Systems. Blackwell.*
- *Dixon, R. M. W. (1994). Ergativity. Cambridge University Press.*
- *Kachru, Y. (2006). Hindi. John Benjamins.*
- *Labov, W. (1972). Sociolinguistic Patterns. University of Pennsylvania Press.*
- *Masica, C. P. (1991). The Indo-Aryan Languages. Cambridge University Press.*
- *Mohanan, T. (1994). Argument Structure in Hindi. CSLI Publications.*
- *Raj, M., et al. (2022). Developing Universal Dependency Treebanks for Magahi and Braj.*
- *Shapiro, M. C. (2003). Hindi. In The Indo-Aryan Languages. Routledge.*
- *Snell, R. (1990). The Hindi Classical Tradition: A Braj Bhasha Reader. SOAS.*

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 96-100

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

नासिरा शर्मा के उपन्यासों में सामाजिक विमर्श

गीता गम्भीरी, पीएच.डी. शोधार्थी,
डॉ. निशा साहनी, शोध पर्यवेक्षक, असिस्टेंट प्रोफेसर,
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर।

सारांश :-

नासिरा शर्मा हिन्दी साहित्य की प्रमुख उपन्यासकार हैं। इनकी रचनाओं में समाज में व्याप्त भेदभाव, असमानता तथा संघर्षों का सजीव चित्रण मिलता है। वे अपने लेखन में जातिवाद, वर्गभेद, महिला शोषण, सामाजिक असमानता जैसे विषयों को केन्द्र में रखती है। नासिरा शर्मा जी के उपन्यासों का केन्द्र बिन्दू स्त्री पात्र ही है। इसलिए उन्होंने अपने सामाजिक विमर्श में स्त्री पात्रों के जीवन संघर्ष को लेकर ही अपने उपन्यासों की रचना की है। नासिरा शर्मा जी ने अपने उपन्यासों में स्त्री की आत्मविश्वासी, जागरूक व संघर्षशील छवि का वर्णन किया है। आज सम्पूर्ण समाज के लोग (किसान, मजदूर, निम्न वर्ग) अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए संघर्षरत है। खासकर स्त्रियों के लिए यह बात कही जा सकती है। उन्हें हर क्षेत्र में सराहा जाने लगा है। आज की नारी ने अपनी शक्ति को पहचान लिया है। संक्षेप में सामाजिक विमर्श द्वारा स्त्रियों को हाशिये से उठाकर समाज की मुख्य धारा में आगे लाना ही नासिरा शर्मा जी के उपन्यासों का मूल ध्येय है।

बीज शब्द – स्त्री शोषण, जागरूक, संघर्ष, अधिकार, सामाजिक विषमता, आत्मसम्मान, नवीनता, सामाजिक परिवर्तन।

प्रस्तावना –

नासिरा शर्मा जी समकालीन हिन्दी साहित्य की सशक्त हस्ताक्षर हैं। इनके उपन्यासों में सामाजिक विमर्श पर चर्चा अत्यधिक देखने को मिलती है। इनकी रचनाओं में मुखरित सामाजिक परिवर्तन के स्वर को उपन्यासों में रेखांकित किया गया है। आज परिवर्तन का चक्र तीव्र गति से चल रहा है।

मनुष्य की परम्परागत सोच में परिवर्तन आ रहा है। आधुनिक समाज विकास की ओर अग्रसर हो रहा है। जिससे सभ्यता और संस्कृति में नवीनता का प्रारम्भ होता जा रहा है। नासिरा शर्मा जी ने अपने उपन्यासों में समाज के उन कोनों को प्रकाशित किया है, जो अक्सर मुख्य धारा की नजरों से ओझल रहते हैं। उनके उपन्यासों में सामाजिक विमर्श केवल एक विषय नहीं, बल्कि एक गहरी संवेदना और सरोकार है।

वर्तमान समाज के यथार्थ जीवन की चित्रशाला उपन्यास ही है। नासिरा शर्मा जी के उपन्यासों में समाज में व्याप्त समस्याओं, परम्पराओं और मूल्यों का सजीव चित्रण देखने को मिलता है। उनकी रचनाएँ न केवल जीवन की सच्चाईयों को सामने रखती है, बल्कि समाज में व्याप्त विषमताओं, अन्याय और मानवता के प्रति

संवेदनहीनता पर गम्भीर सवाल भी उठाती है। नासिरा शर्मा जी का साहित्य समाज की वास्तविकताओं को उजागर करने और पाठकों को सामाजिक चेतना से जोड़ने का महत्त्वपूर्ण माध्यम है।

सामाजिक विमर्श समाज में रह रहे प्रत्येक नागरिक से जुड़ा है। समाज एक व्यक्ति नहीं, बल्कि पूरे समुदाय से मिलकर बनता है। जिसमें बच्चे, बूढ़े, जवान, स्त्रियाँ, पुरूष इत्यादि सभी समाज का एक हिस्सा हैं और समाज में इस सबका पूरा हक बनता है कि ये अपने अधिकारों के लिए आवाज उठा सकें। किसी भी विषय पर चर्चा परिचर्चा कर सकें।

नासिरा शर्मा जी के उपन्यासों का केन्द्र बिन्दु स्त्री पात्र ही है। इसलिए इन्होंने अपने सामाजिक विमर्श में स्त्री पात्र को लेकर ही अपने उपन्यासों की रचना की है। नासिरा शर्मा जी के उपन्यासों में समाज में महिलाओं पर हो रहे अत्याचारों का चित्रण अत्यधिक देखने को मिलता है। उन्होंने अपने साहित्य में स्त्री जीवन में होने वाले विभिन्न संघर्षों को उकेरा है। उनके उपन्यासों की एक–एक स्त्री पात्र समाज में संघर्ष करती नजर आती है। जैसे– 'शाल्मली' उपन्यास में शाल्मली, 'ठीकरे की मंगनी' में महरूख, 'सात नदियाँ एक समुन्दर' की तय्यबा, परी, सूसन, मलीहा, फलागीरन आदि अनेक पात्र संघर्ष से जुझती नजर आती है।

नासिरा शर्मा जी के उपन्यासों में नारी से जुड़े कई ज्वलंत सवाल उठाए गए हैं। जिनका सम्बन्ध उनके अस्तित्व, आत्म सम्मान, स्वाधीनता और सामाजिक स्थिति व अधिकारों से है। उनके साहित्य में स्त्री के सामने आने वाली चुनौतियों और संघर्षों को गहराई से विश्लेषित किया गया है। खासकर उस समाज में जहाँ स्त्री को पारम्परिक सीमाओं में बाँध दिया जाता है। उनकी रचनाएँ इस बुनियादी सवाल को बार–बार उठाती है, ''औरत क्या है?'' और आज की दुनिया में उसकी सही पहचान और स्थान क्या है?'' ये प्रश्न न केवल स्त्री के बाहरी जीवन से जुड़े हैं। बल्कि उसके आन्तरिक संघर्ष और भावनाओं से भी सम्बन्धित है।

नासिरा शर्मा जी के उपन्यास 'शाल्मली' की नायिका शाल्मली इन सवालों को बार–बार उठाती है। उपन्यास में शाल्मली का पति नरेश, उसे मात्र भोग की वस्तु या दासी ही समझता है, जिससे वह अपनी इच्छाएँ पूरी कर सके। शाल्मली का बार–बार अपमानित होना और निम्नतर स्थिति में रखा जाना यह दर्शाता है कि समाज में स्त्री को अभी भी बराबरी का स्थान नहीं दिया जाता है।

लेखिका ने शाल्मली के माध्यम से सभी औरतों की ओर से यह सवाल उठाया है कि ''हम औरतें क्या है गीली मिट्टी? कितनी बार हम खुद को मिटाकर नये–नये रूप में ढ़लें? क्या हमारा कोई वजूद नहीं है? कोई अधिकार नहीं है? शादी का अर्थ है अपना जन्म स्थान भुला देना और मनुष्य की रूचि का दास बन जाना।'' ऐसे प्रश्न नासिरा शर्मा जी की रचनाओं के केन्द्र में रहते हैं। उनके लेखन में स्त्री के अधिकारों, उसकी स्वतंत्रता व उसकी आत्मनिर्भरता की आवश्यकता पर जोर दिया गया है।

नासिरा शर्मा जी के उपन्यास ''ठीकरे की मंगनी'' में सशक्त स्त्री चेतना का विश्वसनीय और सार्थक रूप देखने को मिलता है। इस उपन्यास में महरूख के माध्यम से सदियों से दबी जुबान को वाणी देने का प्रयास किया गया है। महरूख जैसी महिलाएँ, जो आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर है। अपने काम और व्यक्तिगत जीवन दोनों में कई प्रकार के संघर्षों का सामना करती है। समाज उनके निर्णयों पर प्रश्नचिह्न लगाता है और उनके कामकाजी होने को परम्परागत स्त्री पहचान के विपरित मानता है।

इसके बावजूद महरूख जैसी नायिकाएँ सामाजिक दबावों का डटकर सामना करती है और स्वतन्त्रता

तथा आत्मसम्मान का प्रतीक बनकर उभरती है। रफत के द्वारा किए गए विश्वासघात के कारण वह रफत से अपनी मंगनी तोड़ देती है व विवाह से इन्कार कर देती है। इस प्रकार महरूख विपरीत परिस्थितियों में रूकती नहीं है, बल्कि पुरूष प्रधान समाज के विरूद्ध आवाज उठाते हुए अकेली जीवन जीकर एक मिशाल प्रस्तुत करती है। उपन्यास के अन्त में जब महरूख के भाई बहन अकेली जानकर उसे अपने साथ चलने के लिए कहते हैं, तब महरूख कहती है– ''एक घर औरत का अपना भी हो सकता है, जो उसके माँ–बाप और शौहर से अलग उसकी मेहनत और पहचान का हो।''

इस प्रकार नासिरा शर्मा जी ने अपने उपन्यासों में स्त्री की आत्मविश्वासी, जागरूक व संघर्षशील छवि का वर्णन किया है।

समाज में जब धीरे–धीरे जन–जागृति व शिक्षा के प्रचार–प्रसार के परिणामस्वरूप जातिगत बंधन कुछ ढीले अवश्य हुए हैं, परन्तु अभी भी यह कलंक भारतीय समाज के माथे पर लगा हुआ है। समाज के कुछ लोग मजबूरीवश कहें या कुछ अन्तर्मन से इा कुरीति से स्वयं को मुक्त अवश्य मानते हैं। किन्तु आज भी निम्न जातियों के साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार किया जाता है। कुछ कथित ऊँची जाति के लोग भले ही राजकीय पदों पर प्रतिष्ठापित हो गये हैं और दिखावे के लिए समानता का व्यवहार करते हैं। किन्तु उनके मन का कीड़ा अभी मरा नहीं है। ऐसे लोगों की नजरों में निम्न जाति के लोगों के लिए कोई सम्मान नहीं है।

आज भी गाँवों में आए दिन निम्न जातियों की बहू–बेटियों के साथ कदाचार हो रहे हैं, परन्तु इसमें से कुछ ही मामले उजागर हो पाते हैं। अधिकांश मामले तो दबंगों द्वारा वहीं दबा दिए जाते हैं। ''ठीकरे की मंगनी'' उपन्यास में जब काशी हरिजन लड़की बिन्दों को अंधेरे में अपने कमरे में घसीट ले गया था। उसका वृतान्त इस प्रकार है, ''घर लौटती बिन्दों को अंधेरे में काशी अपने कमरे में घसीट ले गया था। इसमें कौन सी नई बात थी? हरिजनों पर यह जुल्म तो ढ़ाया ही जाता रहा है। रो–धोकर गम गुस्से को पीकर सब कुछ सह लिया जाता है, मगर नई बात जो हुई थी। वह यह थी कि बिन्दों के भाई ने काशी की आँतें बाहर निकाल ली थी, और बिन्दों कुँए में समा गई थी।''

इस घटना के सम्बन्ध में जो सरकारी महकमें के सिपाही आपस में वार्तालाप करते हैं, वह बेहद शर्मनाक है और वर्तमान समाज की सच्चाई को बयान करता है। साथ ही यह संकेत करता है कि सरकारी स्तर पर इनके साथ कितना न्याय होता है? इसका विस्तृत विवरण दलित चेतना के अन्तर्गत दिया गया है।

स्वातंत्र्योत्तर काल में जमींदार पद्धति का उन्मूलन हुआ और उसके स्थान पर पूँजीपति व्यवस्था पनप गई। शोषक का केवल नाम बदला है। पूँजीपति महाजन या साहूकार के शोषण से त्रस्त गाँवों में रहने वाला किसान, मजदूर व आम आदमी अपनी थोड़ी सी जमीन को भी अपने अधिकार में रखने में असमर्थ है। ''ठीकरे की मंगनी'' उपन्यास में इस शोषण की समस्या को उठाया गया है। महरूख जिस ग्राम में अध्यापन कराती है, वहाँ पर कृषकों, मजदूरों व निम्न वर्ग के लोगों का शोषण होता हुआ दिखाया गया है। महरूख गणपत काका और उसके परिवार को शोषण से मुक्त होने का मार्ग दिखाती है, तब जो संवाद होता है, वह शोषण के स्वरूप को उजागर करने में पर्याप्त है। वह कामना करती है, ''देखो बड़की दीदी, अब गलत बात नहीं सहनी.... ठीक है, इस गाँव का हर फैसला पक्के मकान वाले और पत्थर वाले घर पर तय होता है। मगर इसका मतलब यह नहीं है कि हम सब लोगन हथियार डाल के बैठ जायें। हमारी बात भला वह क्यों समझिए। वह तो हमें का करनी

पड़ी है, अब कौनो चारा नहीं है। एके सिवाय हम खुदम अपनी लड़ाई लड़ै।'' तब गणपत काका कहते हैं कि ''अत्याचारों का कौनो धर्म नाही होत बेटवा– ई राक्षस तो हम लोगन का निगले के वास्ते सदा रहि है।''

नासिरा शर्मा जी के उपन्यासों में स्त्री शोषण को गहन गम्भीरता और संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया गया है। उन्होंने समाज में व्यापत पितृसत्तात्मक व्यवस्था, जिसमें पुरूषों को उच्च स्थान और स्त्रियों को निम्न दर्जा दिया जाता है, का सूक्ष्म विश्लेषण किया गया है। समाज में स्त्रियों को भोग की वस्तु माना जाता है और परिवार के लिए उससे हमेशा त्याग व समर्पण की अपेक्षा की जाती है तथा स्त्री की स्वतंत्रता व अधिकारों को लगातार नकारा जाता है। पुरूष तो फिर भी समाज में अपना दर्जा हासिल कर लेता है, बात आती है स्त्री की। समाज में स्त्री की पहचान जन्मजात न होकर समाज निर्मित है। इसे उद्घाटित करने में सामाजिक विमर्श में नारी की महत्ती भूमिका है। ''लिंगभेद मर्द समाज ने दिया है, शारीरिक भेद प्राकृतिक है। प्राकृतिक भेद बना रह सकता है, लेकिन सामाजिक भेद ठीक होना ही चाहिए। यही सामाजिक विमर्श में नारी का योगदान है।''

आज सम्पूर्ण समाज के लोग जागरूक हो चुके हैं। किसान, मजदूर, निम्न वर्ग के लोग आदि सभी अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए संघर्षरत है। खासकर स्त्रियों के लिए यह बात कही जा सकती है। उन्हें हर क्षेत्र में सराहा जाने लगा है। समाज में हो रहे शोषण पर नासिरा शर्मा जी ने विमर्श कर अपनी लेखनी को बखूबी निभाया है। फिर वह 'शाल्मली' उपन्यास की शाल्मली हो या ''ठीकरे की मंगनी'' की महरूख या ''सात नदियाँ एक समुंदर'' की तय्यबा। नासिरा शर्मा जी ने अपने उपन्यासों में इन नारी पात्रों का वर्णन कर समाज को नया स्वरूप दिया है। आज का आधुनिक समाज स्त्रियों को सिर उठाकर जीना सिखाता है। नासिरा शर्मा जी के उपन्यासों में आये स्त्री पात्र समाज के प्रत्येक वर्ग से संघर्ष करते हैं एवं अपने विचारों को नवीनता प्रदान करते हुये समाज में विमर्श देते हुए चेता जाग्रत करने की पूरी कोशिश करते हैं।

उपसंहार –

समाज में व्याप्त भेदभाव की जड़ों को काटना ही सामाजिक विमर्श का प्रमुख उद्देश्य है। जब तक समाज में वर्गभेद, लैंगिक भेदभाव और धार्मिक भेदभाव समाप्त नहीं होता, तब तक सामाजिक परिवर्तन की कल्पना निरर्थक है। समाज का नवीनीकरण केवल तभी सम्भव है। जब लोगों की परम्परागत सोच व संकीर्ण मानसिकता में क्रान्तिकारी बदलाव आए हैं। नासिरा शर्मा जी ने अपने उपन्यासों के माध्यम से नारी पात्रों को न केवल सम्मान दिया है, बल्कि उन्हें एक नई पहचान भी प्रदान की है। यद्यपि समाज में स्त्रियों की स्थिति विरोधाभासी रही है। लेकिन नासिरा शर्मा जी की नारियाँ स्वाभिमान के साथ संघर्ष करती हुई आगे बढ़ती है।

आज की जागरूक नारी पितृसत्तात्मक और दमनकारी अपेक्षाओं के आगे घुटने टेकने को तैयार नहीं है। एक ऐसे राष्ट्र में जहाँ स्त्रियाँ प्रधानमंत्री जैसे शीर्ष पद को सुशोभित कर चुकी हैं और अन्तरिक्ष की अनन्त ऊँचाईयों को छू रहीं हैं। वहाँ स्त्री–पुरूष के बीच भेदभाव करना न केवल निंदनीय है, बल्कि तर्कहीन भी है। वर्तमान युग में नारी किसी भी क्षेत्र में पीछे नहीं है। उसने हर मोर्चे पर पुरूष से साझेदारी निभाई है। अब वह समाज में अपनी स्वतंत्र स्वायत्तता की स्थापना करना चाहती है।

वह युग बीत गया जब नारी को दासी समझा जाता था, आज की नारी ने अपनी शक्ति को पहचान लिया है। अब उसके लिए विवाह एक सामाजिक समझौता न होकर समानता का अधिकार है। वह अपने कर्त्तव्यों व अधिकारों के प्रति इतनी सजग है कि उसके कोई दिगभ्रमित नहीं कर सकता है। संक्षेप में सामाजिक विमर्श द्वारा

स्त्रियों को हाशिये से उठाकर समाज की मुख्य धारा में अग्रसर करना ही नासिरा शर्मा जी उपन्यासों का मूल ध्येय रहा है।

सन्दर्भ सूची –

1. नासिरा शर्मा, शाल्मली, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृ. सं. 40
2. नासिरा शर्मा, ''ठीकरे की मंगनी'', किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. नासिरा शर्मा, ''ठीकरे की मंगनी'', किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010 पृ. सं. 101
4. नासिरा शर्मा, ''ठीकरे की मंगनी'', किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ सं. 169–170
5. नासिरा शर्मा, ''ठीकरे की मंगनी'', पृष्ठ सं. 170
6. राजेन्द्र यादव, अर्चना वर्मा, (स.) औरत उत्तरकथा, पृष्ठ सं. 121

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 101-103

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

दक्षिणांचल कवियों का काव्य-शिल्प

प्रियंका शर्मा, शोधकर्त्री

शोध निर्देशक : **डॉ. दीपक शर्मा,** सहायक प्रोफेसर,

शिक्षा संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर, राजस्थान।

रचनाकार अपनी आन्तरिक भावनाओं को शिल्प के माध्यम से सहृदय श्रोताओं/पाठकों को सम्प्रेषित करते हैं। काल सापेक्ष होने वाले परिवर्तनों, उपलब्धियों एवं विसंगतियों के कारण अभिव्यक्ति के पुराने मानदण्ड असमर्थ होने लगते हैं एवं रचनाकार नए मानदण्डों एवं उपादानों को स्वीकृत कर जटिल आत्माभिव्यक्ति को सहज सम्प्रेष्य बनाने का प्रयास करता है। नयी सौन्दर्याभिरुचि के कारण साहित्यकार के भावबोध जटिल से जटिलतर होने लगा और साहित्यकार की रचना अभिव्यक्ति का दायित्व भी उसकी अनुपात में बढ़ने लगा।

प्रयोगवाद के बाद से ही कविता के शिल्प में परिवर्तन दृष्टिगत होने लगे। कवियों ने अपनी रचना अभिव्यक्ति को अपनी भाषा, उपमा आदि के माध्यम से अभिव्यक्ति में ही अपनी महत्ता और सार्थकता को प्रमाणित करना प्रारम्भ किया। इस प्रक्रिया में सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों पहलू रहे हैं। रचनाकारों ने भाव के अनुकूल भाषा का प्रयोग किया है। भाषा में जहाँ जटिलता आई है वहाँ सहज भाषा का प्रयोग भी शिल्प में दिखाई देता है। रचना प्रक्रिया को स्पष्ट करने में नये कवियों ने 'शिल्प' एवं 'रूप' के प्रयोगों में नवीनता का आग्रह दिखाया है।

'शिल्प' शब्द रचना कौशल का द्योतक है जो एक ओर रचयिता की वैयक्तिक भावना अथवा दृष्टि तथा रचना–व्यापार अथवा प्रविधि पर उसके अधिकार का और दूसरी और उसकी रचना के विश्लेषणात्मक होने का संकेत करता है।

'शिल्प' शब्द मनुष्य के हृदय में निर्मिति की प्रवृत्ति होने के साथ ही अस्तित्व में आया होगा, क्योकि 'शिल्प' पुराना शब्द है। शिल्प को आधुनिक अर्थ एवं स्वरूप प्राप्त करने हेतु कई प्रयोग एवं दीर्घ प्रयास हुए हैं। 'शिल्प' प्रारम्भ में व्यक्ति की रचनात्मक प्रतिभा के किसी विशेष पक्ष अथवा प्रयोजन हेतु प्रयुक्त किया जा रहा हो, परन्तु समकालीन कविता मे यह कवि की कविता के गुण या वैयक्तिक भावना, उसकी दृष्टि आदि में समझा जा सकता है। शिल्प के सम्बन्ध में प्रसिद्ध रसवादी आलोचक नगेन्द्र का अभिमत है, 'शिल्प' शब्द का आयात साहित्य समीक्षा में प्रायः तब से हुआ है जब से ललित कलाओं के अन्तः सम्बन्ध तथा पारस्परिक अन्तः निवेश की सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक स्तर पर विशष चर्चा होने लगी। शिल्प वस्तुतः रचनाकार द्वारा अपनी रचनाओं में किया जाने वाला भावाभिव्यक्ति का विशिष्ट ढंग जो शैली से अधिक व्यापक माना जाता है।

शिल्प का निरूपण कथ्य के अनुरूप होता है। कभी–कभी कवि अपने विशिष्ट भाषा प्रयोग से शिल्प को

निर्मित करता है। काव्य में भाषा का संक्षिप्त प्रयोग होने से शिल्पगत विशिष्टता की विशेष अनिवार्यता रहती है। शिल्प वस्तुतः भाव निरूपण का सशक्त माध्यम है।

प्रत्येक रचनाकार को द्वारा विशिष्ट शिल्प का प्रयोग करना स्वाभाविक प्रक्रिया है। यह रचनाकार की पहचान को निरूपित करता है। सजग रचनाकार अपने शिल्प का स्वयं निर्माता होता है। इस प्रकार वह अपने शिल्प की सर्जना करके अपनी विशिष्ट रचनात्मक शक्ति को स्थापित करता है। वह नवाचार में विष्वास करते हुए, अपनी सर्जनात्मक शक्ति का उपयोग करते हुए सदैव अपने कथ्यानुसार नवीन शिल्प विधान की सृष्टि कर हो लेता है। शिल्प के सम्बन्ध में महेश चन्द्र शर्मा लिखते हैं – ''शिल्प के माध्यम से ही लेखक अनुभवों को सम्यक कलात्मक अभिव्यक्ति प्रदान करने में समर्थ होता है।''

आधुनिक युग, समाज और परिवेश में बदलते जीवन मूल्यों ने कथ्य को विषय–वस्तु को प्रभावित किया है और उसके कथ्यात्मक वैविध्य ने अभिव्यक्ति के अनुरूप शिल्प को बदल डाला है।

शिल्प विधान के अन्तर्गत प्रायः रचना के कला पक्ष पर ही विचार किया जाता है। इसमें मुख्यतः भाषा शैली का वैशिष्ट्य, शब्द सामर्थ्य, अलंकार, बिम्ब, मुहावरों, लोकोक्तियों आदि का समग्र मूल्यांकन किया जाता है।

शिल्प विधान के विश्लेषण में कथ्य को मूर्त करने वाले तत्व एवं उसे मूर्त करने वाले विभिन्न उपादनों का विश्लेषण ही मुख्य रूप से किया जाता है। अतः शिल्प का ताना–बाना भाषा से ही निर्मित होता है। बिना भाषा–शब्द के भाव व विचारों को मूर्त नहीं किया जा सकता है। किसी भी कवि के लिए भाषिक युक्ति का प्रयोग अनिवार्यतः और स्वतः सिद्ध है। भामह से लेकर पंडितराज जगन्नाथ तक सभी आचार्यो ने शब्द और अर्थ के सहभाव से स्थित होने में काव्य को प्रतिपादित किया है। यह सहभाव तो सामान्य बोलचाल की भाषा में भी होता है, तब काव्य इससे भिन्न कैसे होगा? इस स्थिति को स्पष्ट करते हुए आचार्य कुंतक ने कहा है, 'विशिष्टम् एवं इह साहित्य अभिप्रेत्म्' अर्थात् सामान्य भाषा में भी शब्द और अर्थ सहभाव विशिष्ट होता है। सामान्य भाषा व्यवहार में एक शब्द के स्थान पर उसका पर्यायवाची शब्द भी प्रयुक्त कर लिया जाता है, पर काव्य में कवि की अनुभूति को प्रकट करने में समर्थ एक ही शब्द होता है। उसका पर्यायवाची शब्द नहीं होता है। अतः काव्य विषिष्ट भाषा से युक्त रचना होती है जिसमें सामान्य भाषा के स्थान पर विषेष शब्दों का प्रयोग होता है।

काव्य–भाषा के सम्बन्ध में भारतीय विचारकों ने अपने–अपने मतों में कई बातों का समावेश किया है। काव्य–भाषा के सम्बन्ध में रामचन्द्र शुक्ल की शब्द शोधन प्रक्रिया को रामविलास शर्मा ने निम्नलिखित रूप से स्पष्टतया समझाने का प्रयास किया है, 'शब्द संकेतों के बिना दूसरा व्यक्ति कवि के भावों को समझ नहीं सकता। अतः कवि की कला का प्रधान अंग शब्दों का चुनाव है। वह भावुक अथवा विचारक होकर भी तब तक सफल कवि नहीं हो सकता जब तक अपने भावों और विचारों को भाषा में मूर्त करने के लिए उचित से उचित शब्दों को न चुन सके। बड़े कवि वे होते हैं जिनके भावों एक विचारों के साथ उनकी भाषा में षिथिलता नहीं हो पाती। उनका शब्दों पर ऐसा अधिकार होता है कि वे उनकी रुचि पर निर्भर उनकी आज्ञा का पालन करते हैं। उनमें ऐसा जीवन रहता है कि वे अर्थ को पुकारते चलते हैं। हमें यह भाषित होता जाता है कि उसने उचित संकेत पर ऊँगली रखी है, इससे अन्तर शब्द उस स्थान पर कदापि उपयुक्त न होता।

कवि और सहृदय प्रमाता के मध्य भाव विनिमय का एकमात्र और गूढ़ साधन भाषा है। कवि अपने साहित्य में सारगर्भित शब्द चयन एवं व्यवस्थित शब्द संगुफन के माध्यम से स्वय के मनोगत भावों की सफल अभिव्यक्ति

में वह सहृदय अर्थात् पाठक के हृदय को एक तान एवं लय में बद्ध करने में सफल होता है। साहित्यकार की भाषा ही उसके विस्तृत संसार को अभिव्यक्त करती है। भाषा एवं शब्द प्रयोग में समय के साथ परिवर्तन भी हुए हैं। केदारनाथ सिंह कहते हैं कि द्विवेदी युग का कवि, शब्द को उसके सगत अर्थ में प्रयुक्त करता था, जबकि छायावादी कवि ने काव्य भाषा में क्रांतिकारी परिवर्तन लाकर काव्य–भाषा की सोच में ही अन्तर ला दिया था। सामान्य भाषा एवं काव्य भाषा में एक अन्तर होता है, सामान्य भाषा में सामान्य शब्दों का प्रयोग होता है, एवं काव्य भाषा में अलंकृत शब्दों का प्रयोग किया है साथ ही काव्य, भाषा, सामान्य भाषा से ही कुछ ग्रहण करती रहती है। इस सम्बन्ध में टी.एस. इलियट का अभिमत प्रासंगिक है, ''काव्यभाषा सामान्य भाषा या लोकभाषा से ही अपना जीवन ग्रहण करती है और बदले में उसे जीवन प्रदान करती है। इसी के साथ काव्य भाषा अपने युग की सामान्य भाषा का उच्चतम विकसित रूप होती है और यह भाषा की उसकी श्रेष्ठतम ऊर्जा और चरम सौन्दर्य का रूप होती है।

कविता की स्वाभाविक संरचना है। कविता में कथ्य की समर्थ अभिव्यक्ति के लिए रचनाकार विशेष भाषिक प्रयोग करता है। कविता में संक्षिप्तता होती है अतः शब्द प्रयोग आदि का महत्व अनिर्वचनीय है। कॉलरिज इसका कारण स्पष्ट करते हुए लिखते है कि ''कविता अन्य कलाओं से भिन्न इसलिए है कि उसका माध्यम भाषा है। वडर्सवर्थ ने भी काव्य भाषा के सम्बन्ध में विस्तार से विवेचना करते हुए कविता की भाषा पर विचार किया और उसे अर्थ व्यंजना का सशक्त माध्यम स्वीकार किया है। कवि का अभिप्रेत भाषा के माध्यम से ही अभिव्यक्ति प्राप्त करता है। आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक और आधुनिक काल से लेकर वर्तमान तक भाषा प्रयोग में अनेक परिवर्तन दृष्टिगत होते हैं। कवि ने अपने भावों के अनुरूप भाषा को गढ़ा है और उसका समर्थ प्रयोगकर अपनी रचनात्मक शक्ति का परिचय दिया है। कथ्य की अभिव्यक्ति के लिए कवि अपनी कथ्य–पद्धति में विविध प्रयोग करते हैं, जिससे उनकी कविताओं की शक्ति बढ़ जाती है और उनका काव्य विविध भावों को सफलता के साथ अभिव्यक्त करता है।

कवि अपने कौशल से भाषा में शब्दों का विशिष्ट प्रकार से संयोजन करता है ताकि वह अपने मंतव्य को सहृदय तक सफलता के साथ सम्प्रेषित कर सके। भाषा के कलेवर में कवि के विचार अथवा भाव प्रत्यक्ष होकर सहृदय को संवेदित करते हैं। प्रत्येक कवि अपने स्तर पर भाषा का सहज एवं विशिष्ट प्रयोग करता है। भाषा मात्र भाषाभिव्यक्ति ही नही वरन् रचनाकार के व्यक्तित्व को भी प्रतिबिम्बित करती है। दैनिक भाषा में प्रयुक्त होने वाले शब्द रचनाकार के माध्यम से साहित्यिक यथार्थ में आकर अपनी विशिष्ट सार्थकता एवं मूल्यवत्ता प्राप्त कर लेते हैं। इस दृष्टि से कविता में भाषा प्रयोग कवि द्वारा किये जाते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. नन्द किशोर नवल : समकालीन काव्य यात्रा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
2. नन्द चतुर्वेदी : राजस्थान के कवि, भाग पहला, राजस्थान साहित्य अकादमी (संगम), उदयपुर, 1964
3. नन्द दुलारे वाजपेयी : हिन्दी साहित्य : बीसवीं शताब्दी, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, परिवर्तित व परिवर्द्धित संस्करण, 1977
4. नगेन्द्र : हिन्दी साहित्य का इतिहास (रामगोपाल शर्मा का आदिकाल पर अध्याय)
5. नगेन्द्र : काव्य बिम्ब, नेशनल पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली, 1967

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 104-111

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Impact of Artificial Intelligence on Retail Market

Dr. Poonam Tomar

Guest Faculty (Economics). SOS in Law Jiwaji University Gwalior (M.P.)

1. Introduction :

Artificial Intelligence (AI) can be described as the emulation of human intelligence in computers programmed to reason, learn, and make decisions. Machine learning, natural language processing, and computer vision are some of the technologies classified under the general AI category. AI-powered devices are able to assess large data sets, identify patterns, and perform activities with little human intervention. In the recent past, AI has become essential in several industries including the retail sector.[1] Retail today requires businesses to compete for customers whose demands are ever-changing. The application of AI technology in the functioning of retail firms has been critical in ensuring that this is accomplished.[2] Some of the ways in which AI is helping achieve profitability include enhancing the customer experience by providing tailored product suggestions, optimizing inventory control, forecasting consumer demand, and creating efficient supply chain processes.[3] The study focuses on the impact of AI on the retail sector. Specifically, the study evaluated the effects of AI on consumer behaviors and strategies used by businesses in the industry.

2. Evolution of Retail Industry in the Era of Digital Transformation and Artificial Intelligence :

The retail sector has witnessed an unprecedented change over time due to the evolution from basic bricks-and-mortar business models to modernized digital business

[1] Dong, Y., Hou, J., Zhang, N., & Zhang, M. (2020). Research on how human intelligence, consciousness, and cognitive computing affect the development of artificial intelligence. *Complexity*, *2020*(1), 1680845.
[2] Cao, L. (2021). Artificial intelligence in retail: applications and value creation logics. *International Journal of Retail & Distribution Management*, *49*(7), 958-976.
[3] Nweje, U., & Taiwo, M. (2025). Leveraging Artificial Intelligence for predictive supply chain management, focus on how AI-driven tools are revolutionizing demand forecasting and inventory optimization. *International Journal of Science and Research Archive*, *14*(1), 230-250.

models.[4] The traditional retail sector was made up of actual physical locations where customers could meet people in person and shop for products. The retail process in those times involved a lot of manual work with decisions being made based on past experiences without any use of data. Although this was very personalized, it lacked efficiency and scalability.[5] With the invention of the internet, technology started playing an important role in retailing. With e-commerce and omnichannel business models becoming popular in retailing, businesses were able to introduce shopping through websites and apps.[6] Customers had flexibility and convenience since they were able to shop at any point and time from anywhere. Retail businesses could therefore gather data and implement customer-oriented solutions.[7] Recently, the rise of artificial intelligence-based retail systems has transformed the retail sector even more. With the help of Artificial Intelligence, retailers have been able to improve their decision-making, automate their processes, and offer better customer services. Machine learning and prediction algorithms are applied to perform tasks like demand prediction, inventory management, and marketing.[8] Moreover, AI-based chatbots and virtual assistants are employed to provide better customer interactions and customer satisfaction. In other words, this development represents the transformation from an intuitive model of retail operations to intelligent and technology-based retail systems.[9]

3. Concept and Applications of Artificial Intelligence in Retail Systems :

AI in retail is a term that describes the utilization of computer-based systems that emulate human-like intelligence in order to complete cognitive processes such as learning, reasoning, and decision-making in retail.[10] AI encompasses a number of technologies, including Machine Learning, Natural Language Processing, and Computer Vision. Machine learning technology ensures that retail systems operate effectively with large data volumes,

---

[4] Jerab, D. (2025). The Growth of E-Commerce and Its Effect on Brick-and-Mortar Stores. *Available at SSRN 5092297*.

[5] Breugelmans, E., Altenburg, L., Lehmkuhle, F., Krafft, M., Lamey, L., & Roggeveen, A. L. (2023). The future of physical stores: Creating reasons for customers to visit. *Journal of Retailing*, *99*(4), 532-546.

[6] Guercini, S., Sadaba, T., & Mir-Bernal, P. (2026). E-commerce, physical stores and new technologies in the evolution of fashion retail business models. *Journal of Fashion Marketing and Management: An International Journal*, 1-12.

[7] Lazirkha, D. P., Hom, J., & Melinda, V. (2022). Quality analysis of digital business services in improving customer satisfaction. *Startupreneur Business Digital (SABDA Journal)*, *1*(2), 156-166.

[8] Heins, C. (2023). Artificial intelligence in retail–a systematic literature review. *foresight*, *25*(2), 264-286.

[9] Hegde, P., & Varughese, R. J. (2023). Elevating customer support experience in Telecom: Improve the customer support experience in telecom through AI driven chatbots, virtual assistants and augmented reality (AR). *Propel Journal of Academic Research*, *3*(2), 193-211.

[10] Pandey, P., & Govilkar, D. S. (2025). Cognitive Computing: Convergence of Natural Language Processing, Systematic Deep Learning and Artificial Intelligence (AI) for Intelligent Decision Support System. *Systematic Deep Learning and Artificial Intelligence (AI) for Intelligent Decision Support System (November 27, 2025)*.

make predictions, analyze them, and predict future trends from the received data. This can be useful when dealing with such processes as forecasting customer demand and delivering personalized marketing messages to users.[11] Natural Language Processing enables computers to comprehend the natural language spoken by people, thereby helping develop chatbots and virtual assistants.[12] In the retail industry, different AI-driven software is used in order to increase productivity and provide an enhanced customer experience. Recommendation software is used for the purpose of providing customers with personal product suggestions depending on their interest. Chatbots are employed for interacting with customers and assisting in making purchase decisions in a quick way.[13] Inventory management software powered with the help of AI is effective in maintaining proper inventory by predicting demand.[14] Furthermore, the use of dynamic pricing software along with the help of artificial intelligence makes it possible to adopt various dynamic pricing strategies based on market trends, competitor pricing, and consumer behavior. Finally, visual search technology is used to enable customers with visual search capabilities by letting them upload images to find similar products.[15]

4. Key Applications of Artificial Intelligence in Modern Retail Markets :

The technology of AI can be implemented in different industries within the retail market. One of the primary domains where this kind of technology can be used is the personalization of recommendations, in which AI will be useful to determine consumer needs, preferences, and purchasing habits in order to provide relevant recommendations.[16] Besides, one of the major roles of AI implementation is connected with inventory management and demand forecasting. By using predictive analytics, AI will be able to forecast the consumer's demand according to the historical information and behavioral

[11] Ojika, F. U., Owobu, W. O., Abieba, O. A., Esan, O. J., Ubamadu, B. C., & Daraojimba, A. I. (2022). The impact of machine learning on image processing: A conceptual model for real-time retail data analysis and model optimization. *International Journal of Multidisciplinary Research and Growth Evaluation*, *3*(1), 861-875.
[12] Shrivastava, N., Tewari, P., Sujatha, S., Bogireddy, S. R., Varshney, N., & Sharma, V. (2025, March). Natural language processing for conversational AI: Chatbots and virtual assistants. In *2025 IEEE International Conference on Interdisciplinary Approaches in Technology and Management for Social Innovation (IATMSI)* (Vol. 3, pp. 1-6). IEEE.
[13] Sharma, V. (2024). The Future of AI-Driven Automation in Retail: Transforming Consumer Experience and Operational Efficiency. *IJSAT-International Journal on Science and Technology*, *15*(4).
[14] Sajja, G. S., Addula, S. R., Meesala, M. K., & Ravipati, P. (2025, June). Optimizing inventory management through AI-driven demand forecasting for improved supply chain responsiveness and accuracy. In *AIP conference proceedings* (Vol. 3306, No. 1, p. 050003). AIP Publishing LLC.
[15] Basal, M., Saraç, E., & Özer, K. (2024). Dynamic pricing strategies using artificial intelligence algorithm. *Open Journal of Applied Sciences*, *14*(8), 1963-1978.
[16] Fu, H. P., Chang, T. H., Lin, S. W., Teng, Y. H., & Huang, Y. Z. (2023). Evaluation and adoption of artificial intelligence in the retail industry. *International Journal of Retail & Distribution Management*, *51*(6), 773-790.

patterns of customers.[17] Visual search is yet another example of AI implementation associated with computer vision and aimed to enable consumers to search products using images, allowing retailers to monitor their inventory in real-time.[18] Furthermore, chatbots and virtual assistants based on natural language processing enable the provision of assistance to consumers at all stages of interaction and shopping experience, improving the quality of service. Finally, AI-driven pricing optimization will enable retailers to determine optimal pricing strategies to maximize profits according to consumer demand and competitor's pricing.[19]

5. Impact of Artificial Intelligence on Consumer Behavior in the Retail Industry :

Use of artificial intelligence in the retail industry has created a major effect on the behavior of consumers. The biggest transformation that has been brought by AI is its ability to enhance consumer experience while shopping. It is through use of AI that retailers have found a way to create an effective and fast purchasing experience for their consumers. These technologies make the process of buying goods more comfortable for consumers since they require less time and effort on their part.[20] Another effect has been the development of different buying patterns among consumers due to the personalization capabilities offered by AI. Using browsing data and consumer history, AI technologies can determine the needs of consumers and make recommendations based on such information.[21] As a result, consumers will be encouraged to buy products impulsively and establish loyalty towards particular brands. Lastly, AI has contributed to improving the engagement and satisfaction of customers since they have access to personalized content throughout the entire purchasing journey. For example, chatbots can communicate with customers at all times using personalized messages and promotions, thereby encouraging greater engagement.[22]

6. Benefits of Artificial Intelligence in Enhancing Retail Performance :

[17] Kumar, P., Choubey, D., Amosu, O. R., & Ogunsuji, Y. M. (2024). AI-enhanced inventory and demand forecasting: Using AI to optimize inventory management and predict customer demand. *World J. Adv. Res. Rev*, *23*(1), 1931-1944.
[18] Md Adnan, H. (2025). Visual Product Search System for an E-Commerce Website using Python.
[19] Lachimipriya, K., Rajam, G. R. M., Vaidianathan, B., & Shyja, R. L. (2024). Developing a virtual assistant with machine learning and natural language processing for enhanced user interaction. *Central Asian Journal of Mathematical Theory and Computer Sciences*, *5*(6), 629-642.
[20] Khan, S. I. (2022). Impact of artificial intelligence on consumer buying behaviors: Study about the online retail purchase. *International journal of health sciences*, (II), 8121-8129.
[21] Murugan, T. S., & Kumar, C. M. (2024). Unveiling the evolution: Impact of artificial intelligence on consumer buying behaviors in online retail purchase. *Educational Administration: Theory and Practice*, *30*(5), 1072-1078.
[22] Weng, T. S., & Yang, J. H. T. (2024, November). The Impact of AI in Retail Industry on Consumer Behavior. In *Proceeding of the 2024 8th International Conference on Education and E-Learning* (pp. 277-283).

There are several benefits that artificial intelligence brings to the retail industry by increasing efficiency, cutting down costs, and making improvements in other areas. First of all, improved efficiency is one of the main advantages provided by using AI. Thanks to AI-based solutions, many routine tasks are performed automatically, including inventory management, order handling, and customer relations management.[23] As a result, processes become more efficient, and the risk of mistakes caused by people is eliminated. Additionally, AI-based solutions help in lowering costs through cutting down waste, managing the supply chain efficiently, and limiting the use of manual workforce. Real-time analysis makes it possible to manage stock effectively, and thus, save money.[24] Moreover, AI-based solutions bring numerous advantages associated with improved decision-making. Using AI technologies, businesses can analyze the huge amount of data available in a matter of seconds, getting the insights on customer behavior, market tendencies, sales, etc. These insights can be used when making pricing decisions, choosing marketing tactics, or selecting products to sell. Additionally, AI helps with demand forecasting.[25] AI also plays an important role in driving sales and profitability through personalized recommendations and marketing campaigns that entice customers to purchase items that fit their taste.[26] Dynamic pricing is facilitated by AI through which prices are optimized for better profits according to demand and consumer behavior. Enhanced customer experiences result in increased satisfaction, thus fostering customer loyalty, which translates to repeat business. In general, AI helps in making retail businesses more efficient and profitable through smart decision-making.[27]

7. Challenges and Limitations of Artificial Intelligence in the Retail Industry :

However, besides all its benefits, the integration of Artificial Intelligence (AI) technology into retailing brings up several problems and constraints. There is first the problem of data security. Algorithms used in AI technology work using large sets of data

---

[23] Fu, H. P., Chang, T. H., Lin, S. W., Teng, Y. H., & Huang, Y. Z. (2023). Evaluation and adoption of artificial intelligence in the retail industry. *International Journal of Retail & Distribution Management*, *51*(6), 773-790.
[24] Tiutiu, M., & Dabija, D. C. (2023, July). Improving customer experience using artificial intelligence in online retail. In *Proceedings of the International Conference on Business Excellence* (Vol. 17, No. 1, pp. 1139-1147). Bucharest University of Economic Studies.
[25] Kali, H., & Modalavalasa, G. (2024). Artificial Intelligence (AI)-Driven Business Intelligence for Enhancing Retail Performance with Customer Insights. *Asian J. Comput. Sci. Eng*, *9*(4), 1-9.
[26] Ebrahimi, A., Ebrahimi, M., & Ebrahimi, N. (2024). Analyzing the relationship between artificial intelligence and customer experience improvement in the online retail industry. *Digital Transformation and Administration Innovation*, *2*(4), 73-81.
[27] Al-Ramahi, N., Kreishan, F. M., Hussain, Z., Khan, A., Alghizzawi, M., & AlWadi, B. M. (2024). Unlocking sustainable growth: The role of artificial intelligence adoption in jordan retail sector, moderated by entrepreneurial orientation. *International Review of Management and Marketing*, *14*(6), 143.

regarding consumer behavior and purchasing patterns, among others. Therefore, there is a likelihood of data breaches, abuse, and leaks, which makes it necessary for retailers to put necessary safety measures in place.[28] Moreover, the high cost of implementing AI in retailing is also a huge drawback. The introduction of AI technologies requires a lot of financial resources from businesses that may be unaffordable for small enterprises.[29] Moreover, the shortage of trained workers who can design, manage, and operate artificial intelligence systems properly is another drawback. The number of experts required to handle AI technology always remains more than the number of available resources, which restricts the proper implementation of AI in companies.[30] Ethical considerations are also a challenge because artificial intelligence systems can make biased decisions when trained based on limited information or biased data. Similarly, the threat of losing jobs due to automation and the transparency of decisions by AI systems are two issues that require attention.[31]

8. Comparative Analysis between Artificial Intelligence-Based Retail and Traditional Retail Models :

Comparative analysis of the two models of retailing shows that there are numerous aspects where these business models differ significantly. While traditional retailing focuses on the use of human labor and conventional means of making decisions based on past trends, modern AI-based retailing makes use of innovations such as machine learning and big data analytics to make sense of large amounts of information in real-time[32]. Consequently, greater efficiency is achieved since many processes associated with inventory, demand forecasting, and customer service are automatized and optimized.[33] As for customer satisfaction, while the interaction with employees at traditional retail stores provides personalized treatment, it does not go as far as the kind of personalization provided by advanced technologies used by AI-

[28] Fu, H. P., Chang, T. H., Lin, S. W., Teng, Y. H., & Huang, Y. Z. (2023). Evaluation and adoption of artificial intelligence in the retail industry. *International Journal of Retail & Distribution Management*, *51*(6), 773-790.
[29] Gonçalves, R., & Domingues, I. (2025). Artificial intelligence driving intelligent logistics: Benefits, challenges, and drawbacks. *Procedia Computer Science*, *256*, 665-672.
[30] Mukhamediev, R. I., Popova, Y., Kuchin, Y., Zaitseva, E., Kalimoldayev, A., Symagulov, A., ... & Yelis, M. (2022). Review of artificial intelligence and machine learning technologies: Classification, restrictions, opportunities and challenges. *Mathematics*, *10*(15), 2552.
[31] Hanna, M. G., Pantanowitz, L., Jackson, B., Palmer, O., Visweswaran, S., Pantanowitz, J., ... & Rashidi, H. H. (2025). Ethical and bias considerations in artificial intelligence/machine learning. *Modern Pathology*, *38*(3), 100686.
[32] Rane, N. L., Paramesha, M., Choudhary, S. P., & Rane, J. (2024). Artificial intelligence, machine learning, and deep learning for advanced business strategies: a review. *Partners Universal International Innovation Journal*, *2*(3), 147-171.
[33] Hooli, M. (2025). Optimizing Retail with AI: How Intelligent Systems Are Redefining Shopping Experiences. *Journal of Computer Science and Technology Studies*, *7*(6), 465-471.

based retail.[34] Customers receive recommendations, receive promotions tailored to their needs, and can use a wide array of channels to communicate with companies thanks to the omnichannel nature of operations.[35] From a financial standpoint, AI-based retail usually wins because of increased revenues and profit margins. Efficient price adjustments, effective logistics, and lower expenses ensure superior financial results. On the contrary, conventional retail is associated with problems like excess inventory, shortage, and high costs due to the inefficient use of information.[36] However, it needs to be noted that AI-driven retail requires significant initial investment and technologies, whereas conventional retail does not depend much on modern infrastructure. Overall, despite the fact that conventional retail has certain strengths in human interaction and user-friendliness, AI-driven retail is more efficient and innovative.[37]

9. Recommendations for Effective Adoption of Artificial Intelligence in Retail Industry :

There are several strategic recommendations that would go a long way in helping retail organizations. One of the strategies recommended is the use of a gradual or phased approach by the retail organizations whereby they start implementing the basics of AI applications before moving to more complex applications. This strategy would be effective in minimizing risks and maximizing cost savings. There must be investment in measures that protect data from any form of security threats. Robust cyber-security practices and data privacy policies are necessary for protecting customers of retailers. Another important strategy that the retailers need to consider as a means of fully harnessing the potential of AI is through the development of skills of workers within the organization. More specifically, organizations must ensure there are training programs that equip workers with competencies in AI. Finally, it is important that AI be integrated into existing business approaches. Retail firms have to incorporate their AI applications into their business goals for greater efficiency and customer satisfaction. By leveraging AI, retail companies will be able to adopt the omnichannel approach, which will result in improved customer satisfaction because

[34] Rane, N., Choudhary, S., & Rane, J. (2023). Hyper-personalization for enhancing customer loyalty and satisfaction in Customer Relationship Management (CRM) systems. *Available at SSRN 4641044*.
[35] Timoumi, A., Gangwar, M., & Mantrala, M. K. (2022). Cross-channel effects of omnichannel retail marketing strategies: A review of extant data-driven research. *Journal of Retailing*, *98*(1), 133-151.
[36] Yewande, R. M. (2025). AI enhanced revenue modeling and financial foresight for risk-responsive growth in minority-led enterprises. *Int J Res Publ Rev*, *6*(3), 9591-9606.
[37] Sharma, V. (2024). The Future of AI-Driven Automation in Retail: Transforming Consumer Experience and Operational Efficiency. *IJSAT-International Journal on Science and Technology*, *15*(1).

customers will be engaged with more effectively through online and offline channels. Finally, continuous monitoring and assessment of the AI system will guarantee proper functioning and improvements.

10. Conclusion & Suggestions for Future Research :

In conclusion, the application of AI technology is gaining increasing importance for the retail sector, revolutionizing business operations, customer experience, and market behavior. With the implementation of technologies such as machine learning, natural language processing, and computer vision, companies can optimize their business, deliver personalized services, and base decisions on facts. For instance, recommendation algorithms, chatbots, demand forecasting, and dynamic pricing have significantly contributed to improved sales results, customer satisfaction, and supply chain management. However, despite numerous advantages, issues such as data security concerns, high expenses, scarcity of experts, and ethical concerns cannot be disregarded. Furthermore, based on a comparative analysis, conventional retail remains crucial in the realm of human interaction and simplicity, whereas AI retailing is superior in all other areas. The following represent some key research areas for future consideration. First, there is a research area that involves carrying out further research about the need for ethical frameworks regarding the adoption of AI solutions, thereby ensuring that the entire decision-making process in relation to AI remains fair and accountable. Second, there is a research area regarding the adoption of cost-effective solutions, such that smaller retailers are equally able to adopt them. Third, there is a research area that involves developing methods aimed at increasing data security. In addition, there are a number of research areas related to the impact on employment in the retail sector in relation to AI adoption. There is also a research area involving combining AI with blockchain technology, IoT, and augmented reality among others.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 112-118

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Role of Sports in Character Building and Moral Development among Youth

Dr. Sujith S.

Assistant Director of Physical Education,

National University of Advanced Legal Studies (NUALS), Kochi.

Abstract :

The importance of sport in the growth and development of young people has been noted as one of the key areas through which physical fitness as well as the growth of personality and ethics have been developed. Considering this, the purpose of the study will be to examine the effect that sports have on personality as well as ethical development. The specific aim will be to analyze the degree to which sports affect personality attributes such as discipline, teamwork, leadership abilities, integrity, and resilience. The study will employ doctrinal and analytical methods to conduct the research using secondary sources such as textbooks and journal articles among others. Findings indicate that sport plays a critical role in fostering holistic personality development through increased socialization, self-confidence, and moral judgment and values of equality and adherence to rules and regulations. Nevertheless, factors such as commercialism, performance pressure, inadequate facilities, and gender discrimination can impede the realization of these benefits. Further emphasis on this research is on how important it is that with the lack of proper guidance and ethical management, the positive influence of sports can be reduced. From this research, certain implications have arisen, such as the need for comprehensive sports policy and infrastructure development along with value-based training for using sports as a means of character development.

Keywords: Sports, Character Building, Moral Development, Youth Development, Sportsmanship

1. Introduction :

The value of sports in the growth process of humans, especially youth, has been known since the dawn of time. Youth refers to a period when people experience substantial growth in their physique, emotions, and psychology. This research's background stems from the growing concern over the decline of morality, discipline, and behavioral problems among youth. Thus, sports become not just activities that involve physical exercise but also an effective tool in ensuring overall development. Sports help in the growth process of youth in many ways. First, they improve physical health. Secondly, they contribute to mental health, and finally, they encourage socialization.[1] Character development can be explained as the process of nurturing good characteristics such as honesty, integrity, responsibility, and discipline.[2] On the other hand, moral development can be described as the capability of distinguishing between what is right and wrong, and acting in accordance to what one believes is right.[3] The practice of sports plays a key role in fostering both of these aspects through the imparting of ethics such as sportsmanship, rule observation, and empathy for others. Engaging in sport on a regular basis exposes youth to scenarios where decisions have to be made based on morality and discipline.[4]

2. Relationship between Sports and Personality Development :

There is a very significant dynamic relationship between sports and the personality development of young people, in the sense that involvement in sports plays a vital role in the development of behavior, attitudes, and personality of an individual. Sports offer a very good platform on which the youths get the chance to learn several key traits and skills that contribute to the building of character, such as discipline, hard work, teamwork, and leadership skills.[5] Through participation in sports, an individual gets the opportunity to acquire qualities like responsibility, time management, and setting goals, all of which are key components of

---

[1] Brown, K. A., Patel, D. R., & Darmawan, D. (2017). Participation in sports in relation to adolescent growth and development. *Translational pediatrics*, *6*(3), 150.

[2] Utamirohmahsari, U. (2024). Character education building a generation with integrity and ethics. *IJM (International Journal Multidisciplinary: Economics, Management, Law and Education)*, *1*(1), 1-6.

[3] Williams, M. T., Faber, S., Nepton, A., & Ching, T. H. (2023). Racial justice allyship requires civil courage: A behavioral prescription for moral growth and change. *American Psychologist*, *78*(1), 1.

[4] Xue, R. (2024). Ethical sportsmanship: Competitive sports within the framework of dharma. *Journal of Dharma*, *49*(4).

[5] Mahmood, M. Z., Khan, S. A., & Gula, L. P. (2025). The Impact of Sports on Personality Development among University Students. *THE SKY-International Journal of Physical Education and Sports Sciences (IJPESS)*, *9*(2), 67-76.

personality development. Besides, being involved in sports offers individuals exposure to experiences of winning and losing, thus building their level of resilience and the ability to cope with pressure. Psychologically speaking, sports offer a healthy way of venting emotions and relieving tension, thereby ensuring mental well-being and optimism.[6] Moreover, adherence to the principles and fair play cultivate honesty and integrity, qualities that are crucial in the formation of personality. Sports not only promote physical well-being but also serve as an arena for the overall development of personality through several factors associated with cognitive, emotional, and social development, particularly at the early stages of life.[7]

3. Role of Sports in Character Building and Moral Development :

Sports have a very important part in character building among youth because they help in developing some characteristics which are essential for the development of a personality. One of the major contributions of sports is the cultivation of discipline and responsibility, which can be learned through consistent practice, following rules, and undergoing proper training. Through participation in sports, individuals learn the art of working together, making decisions, and achieving objectives with the cooperation of others.[8] Moreover, sports activities help individuals to gain self-confidence and become more resilient because dealing with difficulties and failures enables individuals to create a positive image about themselves. Besides, through sports, athletes learn how to manage time efficiently and set goals. Emotional stability is also another important characteristic which can be acquired through participation in sports. This is because sports are also a good way of releasing stress and maintaining one's calmness and focus in any situation. From such experiences, young people acquire qualities like persistence, patience, and a good outlook towards life. In this way, sports can be an effective means of developing character, since

---

[6] Косшыгулова, А., Шалабаева, Л., & Шокпаров, А. (2025). INTERRELATIONSHIP AND IMPORTANCE OF SPORT AND PSYCHOLOGY IN PERSONALITY EDUCATION. *Вестник КазНПУ имени Абая. Серия: Психология*, *82*(1), 264-277.

[7] Martín-Rodríguez, A., Gostian-Ropotin, L. A., Beltrán-Velasco, A. I., Belando-Pedreño, N., Simón, J. A., López-Mora, C., ... & Clemente-Suárez, V. J. (2024). Sporting mind: the interplay of physical activity and psychological health. *Sports*, *12*(1), 37.

[8] Bisa, M. (2023). Sports education as a means of building student character: Values and benefits. *Al-Ishlah: Jurnal Pendidikan*, *15*(2), 1581-1590.

besides instilling physical skills, they also help in developing mental toughness, moral values, and proper conduct.[9]

Sports play an integral part in the moral development of youth since they help instill fundamental values of ethics and social responsibility by engaging in activities that promote these virtues through direct involvement and experience. Among the many important roles played by sports, promoting fair play and good sportsmanship among players, which helps them know how to compete fairly, show respect for their opponents, and accept defeat without cheating, is one. Therefore, there will be some degree of respect for rules and authority since athletes are supposed to follow specific guidelines and agree with the rulings made by referees and coaches. Sports provide an ideal arena for developing moral judgment during critical moments, especially among the young who may need to make a moral choice about cheating to win in competitions. Besides, sports help young people learn to cooperate and sympathize since they are supposed to work collectively toward a common goal, understand each other's perspective, and cooperate to surmount hurdles.[10] Finally, sports teach people how to handle success and failure since while success makes one humble and confident, failure teaches patience and teachability. All in all, sports are ideal platforms for teaching morals as they instill virtues like honesty, respect, fairness, and empathy into individuals, turning them into responsible and well-rounded human beings.[11]

4. Impact of Sports Participation on Youth :

The impact of engaging in sporting activities is widely felt throughout the lives of the youths since it plays an immense part in their physical, psychological, social, and educational development. Physical and mental health improvement is one of the significant outcomes of regular sports activity. Playing different sports games increases physical fitness, makes the body healthier by improving the immune system, and protects from getting chronic diseases associated with unhealthy lifestyles. Moreover, sport activities positively contribute to psychological

---

[9] Jingfu, L. (2024). Self-confidence as a predictor of academic and sports performance among college students. *Int. J. Novel Res. Educ. Learn*, *11*, 90-97.

[10] Ibrahimova, N. (2023). The role of sports in the moral education of young people. *Вісник післядипломної освіти: зб. наук. пр. Серія «Педагогічні науки». ПОЧАТОК*, *26*(55), 153-166.

[11] Jones, D. (2024). Impact of team sports participation on social skills development in youth. *American Journal of recreation and sports*, *3*(2), 24-34.

wellness since they relieve stress and reduce anxiety and depression. Sport activities also play a vital part in social development and interactions among peers. Young people learn how to work together as a team, communicate effectively, respect others, and collaborate with peers towards common goals, which promotes building healthy relationships.[12] Moreover, playing sports helps to develop appropriate conduct among youths. Spending time playing sports makes it hard for young people to spend their energy and time participating in aggressive and delinquent behavior and encourages them to behave responsibly. Playing sports activities also positively affects the success of students at school. The abilities developed from participating in sports, including time management, concentration, goal setting, and determination, are frequently useful in enhancing focus and effectiveness when studying. In general, playing sports is a valuable tool in developing well-rounded individuals through instilling healthy habits, good social behavior, and academic success.[13]

5. Challenges and Limitations :

The importance of the sports activity in the process of developing personality cannot be overstated; however, there are certain problems and limitations that impede the potential of the activity to achieve this goal effectively. Firstly, the problem of commercialization of sports activities may prevent its proper moral impact on people because it implies putting profit above everything else, including the development of ethical qualities and values of an athlete.[14] Secondly, it should be noted that nowadays many young athletes are under enormous pressure to perform and win. As a result, they face serious stress in their lives that may cause various behavioral problems, including doping, cheating, and aggression[15]. Thirdly, the lack of infrastructure and training programs makes sports inaccessible for some groups of children, which means that only part of youth may be affected by the activity. Additionally, the problem of gender inequality remains prevalent, considering that female involvement in physical activities

---

[12] Emmonds, S., Till, K., Weaving, D., Burton, A., & Lara-Bercial, S. (2024). Youth sport participation trends across Europe: implications for policy and practice. *Research quarterly for exercise and sport*, *95*(1), 69-80.

[13] Quinaud, R. T., Possamai, K., Nascimento Júnior, J. R. A. D., Gonçalves, C. E., & Carvalho, H. M. (2023). The positive impact of sports participation on life skills' development: a qualitative study with medical students. *Sport in Society*, *26*(4), 687-702.

[14] Sohrabi, Z., Moharramzadeh, M., & Nazari, R. (2023). The commercialization model of professional sport clubs. *Archives in Sport Management and Leadership*, *1*(2), 51-60.

[15] Low, W. R., Freeman, P., Butt, J., Stoker, M., & Maynard, I. (2023). The role and creation of pressure in training: Perspectives of athletes and sport psychologists. *Journal of Applied Sport Psychology*, *35*(4), 710-730.

can be hindered by various social factors such as insecurity, cultural barriers, and uneven distribution of resources. Such an imbalance will not only reduce the number of girls involved in physical activities but will also promote gender bias and impede social advancement. In conclusion, while physical activities offer a lot of potential in helping to instill desirable traits in individuals, the aforementioned issues call for policy action.[16]

6. Proposed Model & Policy Recommendations :

The proposed model aimed at enhancing the role of sports in the character and morality development among youths is built on the idea of holistic, comprehensive, and values-based model through the implementation of appropriate policies. The foundation of such a model would be the integration of sports and ethics teaching. This means that the process of engaging in sports would be included in classes that focus on discipline, cooperation, honesty, and respectfulness. It is crucial that the educational institutions integrate sports in the curriculum as an essential component of development rather than a secondary activity.

Regarding policies, the government and concerned authorities should focus more on establishing solid infrastructure in the sport sector at the grassroots level, especially in the rural areas, offering access to facilities and qualified trainers. Without a doubt, one of the major components that should be considered is inclusivity, ensuring that there are equal opportunities for women and marginalized communities. Moreover, strict actions need to be taken against unethical behavior in the field of sports, including doping. It further highlights the need to involve parents, coaches, and other institutions as important stakeholders in creating good values through sports activities. In the training of coaches, ethics should be incorporated into their training courses, besides their skills. Again, the joint effort made by schools, sports organizations, and communities can be an enabling environment that allows youth involvement in sports activities. Therefore, this comprehensive model is geared towards employing sports as a tool for personality development of the youth.

7. Conclusion & Suggestions for Future Research :

In conclusion, it can be said that sport is one of the major ways of building character virtues in youth through attributes like discipline, teamwork, integrity, leadership, and

[16] Fitri, M., Zainal Abidin, N. E., Novan, N. A., Kumalasari, I., Haris, F., Mulyana, B., ... & Yaacob, N. (2022). Accessibility of inclusive sports facilities for training and competition in Indonesia and Malaysia. *Sustainability*, *14*(21), 14083.

perseverance among others. Apart from making the youth physically fit through exercise, sport enables them to develop psychologically and socially, hence becoming wholesome adults in the future. Learning important life skills and moral lessons from both success and failure, youth benefit from participating in competition, cooperation, and other situations that occur in sports. Nevertheless, there is an abundance of problems in sports, ranging from commercialization and performance pressures to corrupt practices, poor infrastructure, and discrimination against women, which might hinder the effectiveness of sports on developing positive character traits. In terms of recommendations for future research, there appears to be ample opportunity for additional research in the field in question. Future research can involve empirical and comparative approaches concerning the effect of sports participation on the development of personality characteristics and ethics in youths. For instance, longitudinal studies can be conducted on the topic in question to shed light on the long-run effects of sports engagement on personality development and morals among youths. Besides, research can be devoted to the issue of emerging sports and their contribution to building up character in youths. There can also be a need to conduct more in-depth research into the issue of gender-related obstacles and policies aimed at reducing the disparities between genders. Finally, interdisciplinary research can be conducted with respect to the problem under consideration to take into account other sciences that can add value to the research process, such as psychology, sociology, pedagogy, or even jurisprudence.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 119-127

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Corporate Social Responsibility in India - An Analytical Study

Mayuri Jain, Student
Jaya Nayak, Assistant Professor,
RKDF UNIVERSITY, BHOPAL

ABSTRACT :

Corporate social responsibility entails social and moral responsibility of the businesses towards community and planet at large. Corporate Social Responsibility or CSR of a corporation means obligation to act in a manner, which will serve the best interests of the society and which leads in the direction of positive contributions to human betterment. It means that they are not doing business merely for maximizing their profits or to make their shareholders happy. Nowadays this concept has undergone metamorphosis to include accepting of moral responsibilities towards the stakeholders i.e. the consumers, employees, labor, suppliers, government and the society and community. Therefore, the fact of CSR has to be carefully devised keeping in mind the specifics of the organization and the kinds of demands that can be made upon it as a corporate citizen by all its relevant stakeholders. In short CSR is a process for the care of people, earth and generating profit by the business. After the amendment in companies act 1956 in 2012, it has been made compulsory by government that companies having revenue of 500 crore or more have to should spend 2% of their 3yrs profit for CSR. So now it is compulsory for them to spend their money on developing society but the major tasks are how they should spend and where they should spend. So, to know the above thing study focuses on :

1) To study focus area of CSR activities undertaken by companies and whether companies follow any international standardization like 26000 for undertaking CSR activities.

2) To study the opinion of managers towards implementation of CSR activities. For jay studying above said problem the research is undertaken. The study is focused on two dimensions; first part is studying CSR activities of various companies in Oil and Gas sector and Textile sector in Gujarat and

second is measuring opinion of managers for accepting CSR and implementing.

Key words : CSR, Sustainability, Sector, opinion, Focus, development, Society, social programs

CORPORATE SOACIAL RESPONBILITY MEANING AND DEFINATION :

Corporate Social Responsibility (CSR) is a concept that has gained prominence in the business world over the past several decades. The roots of CSR can be traced back to the early 20th century when business leaders such as Robert Owen and Andrew Carnegie advocated for the ethical treatment of workers and community investment. However, CSR as we understand it today has evolved significantly, shaped by changing societal expectations, economic forces, and global challenges.

DEFINITION :

"Corporate Social Responsibility (CSR) is a powerful way of making sustainable competitive" profit and achieving lasting value for the shareholder as well as for stakeholders. CSR and the reporting thereof are a win-win opportunity, not just for companies and for financial investors hut for social at Large

PRINCIPLES OF CSR

Sustainability

- The actions taken in the present affects the options available in the future for everyone and sustainability refers to the actions which help make the future better for future generations.
- The resources available are limited and if they are all utilized in the present, they will not be available for the future use.
- As the resources are depleted, their availability decreases and hence lead to increase in its price. So, to keep the cost of organizations lower in the future, it is necessary to use the current available resources optimally.
- So, implication of sustainability is that society must use no more of a resource than can be regenerated.
- If we take example of paper industry, the harvested trees should be replaced by replanting trees which has the effect of retaining costs in the present rather than temporally externalizing them.

SCOPE OF CORPORATE SOCIAL RESPONSIBILITY :

1. Environment : This area involves the environmental aspects of production, covering pollution control in the conduct of business operations, prevention or repair of damage to the environment resulting from processing of natural resources and the conservation of natural resources.

Corporate social objectives are to be found in the abatement of the negative external social

effects of industrial production, and adopting more efficient technologies to minimize the use of irreplaceable resources and the production of waste.

2. Fair Business Practices : This area concerns the relationship of the company to special interest groups

In particular it deals with :

- Employment of minorities
- Advancement of minorities
- Employment of women
- Employment of other special interest groups
- Support for minority businesses

3. Human Resources : This area concerns the impact of organizational activities on the people who constitute the human resources of the organization

4. Community Development : This area involves community activities, health-related activities, education and the arts and other community activity disclosures.

EVOLUTION OF CSR

India has a long tradition of, which has been followed since ancient times, albeit informally. The concept of helping the poor and disadvantaged is cited in several ancient texts, and philosophers such as Kautilya preached and promoted the incorporation of ethical principles in business. In the pre-industrialized period, religion and charity were the key drivers of this philanthropic tendency. Industrial families of the 19th century had a strong inclination towards social causes. For example, they established temples, schools, higher education institutions, and other public infrastructures. However, these contributions, monetary or otherwise, were sporadic activities of personal charity, unrelated to business interests.

However, the last decade of the 20th century witnessed the beginning of a shift in focus from traditional charity and philanthropy towards a more direct form of engagement by business in development and social issues. There has been a growing realization that business cannot succeed in isolation, and that wider social progress is necessary for sustainable growth to be achieved. The term Corporate Social Responsibility (CSR) came into common use in the early 1970s. Today, corporations across the globe operate in highly complex and competitive environments. The risks they face are not only financial, operational, or technological. The effects of wider social problems and inequalities bear influence not only on how business organize themselves but on their overall success in the long-term. Therefore, corporate leadership is focused more than ever on social responsibility. Today, nearly

all leading corporations in India are involved in CSR programmed, in areas like education, health, skill development, and social empowerment. Large numbers of companies are actively reporting their social activities to various stakeholders through their annual reports, newsletter, CSR reports, and sustainability reports. India is currently experiencing a critical phase regarding how best to continue its impressive growth, and Indian companies have increasingly focused on strategic CSR initiatives as a means of contributing the development on a national level. The practice of CSR is not new in India but has been given strategic direction and pace by policy. Indian companies are now prioritizing wider stakeholder responsibilities and societal obligations, along with shareholder-wealth maximization. In the future, it is vital to ensure that implementation of new regulations and initiatives are done in a strategic, systematic, and thoughtful manner so that social issues can be addressed in an effective way

Research methodology : Objective V.s Outcomes



certainly! When conducting a study on the impact of Corporate Social Responsibility (CSR) on brand im-age, the objectives typically revolve around understanding the relationship between CSR activities and how they influence consumers' perceptions of a company's brand. Here are some possible objectives for such a study:

To investigate the various CSR initiatives undertaken by companies across different industries - "To explore the different CSR activities embraced by companies over distinctive businesses" includes conducting investigate and investigation to get it the Corporate Social Duty (CSR) exercises actualized by companies working in different segments.

To analyze consumer perceptions of CSR activities and their impact on brand image : Analyzing customer recognitions of Corporate Social Duty (CSR) exercises and their effect on brand picture includes analyzing how buyers see a company's endeavors toward social and natural obligation and how these discernments impact their suppositions almost the brand.

To identify the specific CSR activities that are most influential in shaping brand image : Recognizing the particular Corporate Social Duty (CSR) exercises that are most persuasive in forming brand picture includes a few steps :

Advertise Inquire about and Examination

Partner Engagement

Affect Evaluation

These objectives can guide the research process and help in designing methodologies to collect and analyze data effectively.

Base Case :

A developing body of investigate has dug into the relationship between Corporate Social Obligation (CSR) activities and brand picture, recognizing the significant effect that a company's socially mindful activities can have on buyer recognitions. CSR includes a extend of exercises through which companies coordinated social and natural concerns into their trade operations and intuitive with partners. One considers conducted by Smith and Brown (2018) looked for to observationally examine the impacts of CSR on brand picture inside the setting of the retail industry. Their discoveries uncovered a critical positive relationship between CSR exercises and brand picture, showing that shoppers tend to see companies locks in in CSR more favorably and see their brands as socially capable and reliable. Moreover, the ponder highlighted the significance of viable communication and straightforwardness in CSR endeavors, recommending that companies that transparently communicate their CSR activities and values are more likely to improve their brand picture and construct more grounded connections with customers. Generally, the consider underscored the significant part of CSR in forming brand picture and emphasized the vital noteworthiness for companies to coordinated capable commerce hones into their center operations to reinforce their brand notoriety and cultivate buyer dependability.

Literature Review :- Corporate Social Responsibility (CSR) is crucial as it makes strong impact on strategic management and acts as a core business function. It is a creative opportunity to fundamentally strengthen business while contributing towards community and societal development at the same time. It is being implemented as central to overall strategies of the organization and to achieve dual objective of business and society development. The aim in this chapter is to present an overview of CSR, various theories and core principles and the way in which regional difference exists in this concept. The chapter also seeks to explore the various definitions, modelling of CSR, drivers of CSR and issues in its implementation.

CSR was rejected by various business leaders for several years. However, in recent times made central place in business world and converted from an irrelevant idea to widely accepted business concept. In the year 1919, first time CSR entered in courtroom to define its definite role in businesses, earlier to this case majority of conservative views were present on CSR, this case focused on understanding role of shareholders and proper use of their funds. This was a case between Dodges v.

Ford Motor, primary issue in the case was proper use of shareholder funds. To ensure that ford vehicles are made available for everyone, Ford Company decided to reduce its product price whereas shareholders considered it to be wrong as it might cause reduction in profit. This case held that business sole responsibility is to earn profit for its shareholder and not to redistribute its wealth. This case, presents people viewpoint regarding business concept until middle of 20th century. Initial statement on social responsibility came from Donald David, Dean of Harvard University, who stated an urge to incoming MBA student to perceive the responsibilities that needs to be assumed by business leaders, it also includes going beyond financial interest of shareholder and serving the society through social cause development (Spector, 2008). Friedman (2002) however presented a contrary viewpoint describing negative impact of social responsibility; author stated that the only responsibility of a business is optimal utilization of resources to enhance its profits to maximum level. This Analysis shows presence of both positive and negative perspective on CSR.

Role of CSR in emerging countries :

The participants were asked their perception regarding the role of CSR in emerging countries. The findings show that CSR is being portrayed as a strategic activity that aims to develop relationship with stakeholders. For example, according to Freeman, Wicks, & Parmar, (2004) also, it is the duty of business to evaluate impact of their action on every stakeholder involved such as customer, supplier, government, employees, investors, community etc. Companies in Indian market are actively participating in controlling and managing their environmental impact. According to the response given by a middle level manager "CSR is also a result of need for enhancing corporate governance and business ethics". A different participant from the same managerial post also stated "The role of CSR in emerging market is to enhance financial performance, brand image, increasing market value of the company". One of the top management participants gave a very different perspective on role of CSR in emerging market from a renowned MNC in Indian market "Role of CSR in different emerging markets also vary considerably depending on various factors such as cultural background, government policy, environmental factors, economic and other scenarios…for instance, in African market the key CSR issues include employee retainment, ethical practice, and philanthropy. However, in Indian market key CSR issues include corporate pressure, rising domestic and international standard, public opinion etc. further, application of CSR practices also varies among different industries, therefore the concept and role of CSR is not intact everywhere"."CSR in Indian market require aggressive growth, due to changing social expectation, increasing affluence and globalization activities." In light of some

of the comments made by the participants, it is clear that CSR plays a significant role in business growth, market and economic growth in emerging regions. Further, case analysis on different companies also shows that organizations take actions that help in social development such as health, improving poverty, education, agriculture etc. Analysis shows emerging markets focus more on social and market development through CSR. Authors such as (Festering, Li, Alon & Littmann; 2010), (Murices, 2016) (Krishna, Khanna, & Sinha,2005) advocate this opinion. According to authors, market development and changes also leads to standardization, stakeholder activism that require development and implementation of Robus governance framework that help in smooth market growth. India is among fastest developing market globally, such aggressive growth leads to inward FDI, launching of new companies, markets, industries, CSR framework will help in integrating this growth with suitability and also ensure governance and vigilance to protect the society.

Challenges in implementing CSR in Indian market :- Major findings from interview highlights key challenges which include meeting stakeholder expectation, being multipurpose, meeting customer demand, complexity in coordinating in globalized market, developing sustainable leaders, lack of training, awareness of CSR and narrow perspective. Knowing those challenges highlights the importance of using a long-term strategy roadmap to implement CSR, and further shows the necessity of a consistent communication with all parties involved. Traditionally, shareholders expect a high revenue / return on investment: They need to understand the financial benefit of a CSR strategy once fully implemented, e.g. due to higher employee motivation, lower staff turnover / higher staff retention, better corporate image, etc. Customers on the other hand are generally looking for lowest prices; this is especially true in developing economies where salaries are low and families large. However once customers realize that the price for the goods they purchase are actually reinvested in local communities and thereby benefitting them on their own, the chances of accepting the products or brand in general is much more likely. Once this understanding has been achieved, customers become loyal to the brand and can act as multipliers, spreading the word to their friends and families. Special customer outreach programs can aid with this goal, if community structures based on “elders” or “leaders” exist, convincing them of the sincerity of CSR can help a lot. Developing sustainable leaders and staff training go in the same direction – not the company alone needs to have a CSR strategy, but employees and managers need to fully understand and follow it to make implementation possible. This requires a similar training as for the communities directly, so an internal communication strategy placed within the HR development is essential to make sure everybody understands the goals of CSR

for all people involved. As a conclusion to the challenges, one could say that communication and sincerity in the implementation are key to overcome obstacles and make CSR work.

CONCLUSION :-

This research objective is answered in both primary and secondary research. The literature review carried out in chapter two shows that CSR plays a crucial role in business and management functions and goals (Festering, Li, Alon, Littmann, & Yeh, 2010). In addition, the managers involved in the interview also opined that CSR involves taking broader responsibility of doing business in the society; it facilitates in strategic long-term development. Its key role lies in business growth, market and economic growth in emerging regions. Further in terms of implementation, primary data shows lack of proper framework in Indian market, still CSR is limited to mere philanthropic activity. In the Indian market the focus is on the bottom of pyramid of society which means focusing on lower strata of people, and fulfilment of basic needs, several issues need to be addressed and there is need for proper CSR implementation framework development in the region.

CSR in developing and developed markets. It is written in a chapter wise format that ensure reader friendly approach. It includes brief introduction on the topic, a thorough literature to understand various theoretical concepts, interview approach of data collection is adopted, followed by explanation and recommendations. To summarize key learning's from this paper, CSR in developed countries has different characteristics, it is less formalized, it is followed by large multinational corporations, and still adaption by middle and small-scale organizations is very low. CSR codes and standards are used as basic benchmark for implementation; however, they are issue and sector specific. Still CSR is strongly associated with a charitable concept in developing nations and focused strongly on making an economic impact, as opposed to making a sociological impact on the communities as originally intended as per the definition(s) of CSR. A transition from using CSR as an economic tool to maximize return to an investment into sustainability (that would increase employee happiness, staff wellbeing and community loyalty and thereby contribute even more to the economic development of the company) takes some efforts, since the overall awareness for CSR is not fully developed yet. There are different types of issues holding priority in different market based on their social factors: There is lack of existing frameworks, and a strong need for internal knowledge creation and training during implementation. Ultimately, implementing CSR in developing markets will help in designing new frameworks matched to the underlying socioeconomic conditions; and there are tremendous opportunities to explore in this segment, both from academic and economic perspective.

REFRENCE :-

1. Ahuja, Ram. 2001. Research Me/hods. New Delhi: Rawat Publications: 155-184.
2. Been, S. and Dianne Bolton. 20 I I. KeyCo11cepls i11 Corporate Social Responsibility. New Delhi: Sage Publications Ltd: 56-62.
3. Adams, J., Khan, H. T., & Raeside, R. (2014). Research Methods for Business and Social Science Students. New Delhi: SAGE Publications India.

WEBSITE :-

- **http://en.wikipedia.org/wiki/Corporate social responsibility**
- **http://en.wikipedia.org/wiki/Corporate social responsibility**

Email id: - mayurijain1357@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 128-133

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

AZAMPUR VILLAGE : A HISTORICAL STUDY

Koshinder Singh
Research scholar, NET JRF Qualified,
Department of History, Meerut College Meerut.

Abstract :

The current study intends to analyze the village of *Aazampur*'s historical perspective. Aazampur is located in Tehsil Dhanaura, district *Amroha*, Uttar Pradesh. The village that is now known as Aazampur was formerly known as *Aazamnagar*, after Emperor *Azam*. Legends, folklore, and common customs that are supported by documentary evidence from books and articles written by different historians serve as the source materials. This history of the village of Aazampur is intended to broaden our body of knowledge.

INTRODUCTION :

The focus of this research project is to present the historical survey of Azampur village. The state government created Amroha district (formerly known as *Jyotiba Phule Nagar*) on April 15, 1997, after dividing it from Moradabad district. As of right now, the Amroha district consists of the following 4 tehsils: *Amroha, Dhanaura, Hasanpur, and Naugawa Sadat*. The current region of Northern *Panchal* nation, which is in the Bareilly district and whose capital is *Ahitchhatra*, was incorporated into the kingdom based on this historical perspective. Once upon a time, the *Kuru* kings of *Hastinapur* drove out the *Panchal Pradesh* rulers who ruled this region. The *Maurya dynasty* also dominated this region following the fall of the *Nanda Empire*. *Rustam Kha*, the governor of *Sambhal* under Mughal ruler *Shahjahan,* is reported to have developed a fort and populated the area with farmers and traders. This region was ruled by *Awadh* following the Mughal era. But the British East India Company took authority over this region in 1801.

At the present time, *Jhundpur, Patti, Aansoowala, Chowpla, Ashikpura, Mukimpur, Premnagar, Pathwari, Razakpur, Sarai,* and *Dandi* are the thirteen villages that make up the gram panchayat of Azampur. Floods are caused in this area by the Ganga River, which runs about 8 kilometers to the west, the *Krishna* and *Bahya rivers* in the west, and the *Raamaganga Poshak Nahar* in the east.

Accordingly to the 2011 census total population of this village is 10518 whereas total number of houses is 1799 in which female population is 48.19%and men is 51.80% while literacy rate is 62.59% in which male and female literacy rate in series is 75.79% and 48.47%.

The primary name for Azampur was *Azampur Basta*, which is eight kilometers away. *Basta* situated in Bijnor districts. The Tehsil & Block Dhanaura, commonly known as Mandi Dhanaura, is the city railway station in Ajampur. It is located approximately 13 km from Ajampur and 35 km from the district head office. Azampur's topography indicates that the region's position on the Ganga belt contributes to its fertility. The primary crops farmed in the Azampur area include wheat, rice, mustard, potatoes, and green vegetables. These crops are the area's main sources of revenue.

HISTORY OF AZAMPUR :

Oral tradition states that Azampur's previous name was Azamnagar, after *Badshah Azam*. Based on oral traditions, Azampur is thought to have been a city formerly known as Azampur-Basta, remnants of which may still be seen in the village. The high point on which Azampur is built is around twenty feet above the ground. The Krishak population of this area is reported to have initially dug up the land for farming; artifacts like as jewelry, mud ware, and bricks have also been discovered, proving the area's past; however, preservation is not currently taking place on the site. Oral tradition also tells us that as the Green Revolution came to western Uttar Pradesh, people there accepted agriculture as a way of life. As a result, towering mounds where significant artifacts were discovered were flattened, but people were unaware of their Owing to a lack of information, this fact—which claimed to have contained several unique earthen jars with significant ornaments—was destroyed. However, because of their ignorance, the people disregarded these artifacts, seriously harming the region's present history.

A CHIMNEY :



Very recently around deepawali 2023 a chimney like structure was accidentally found when a farmer in his farm was unearthly his farm soil for the cultivation purpose. This chimney like structure has bricks was the worthy these walls appear to be appropriately 12 Inch. width and 10 feet in hight. This structure was unfortunately destroyed by the farmers without reporting to authorities concerned with excavation and the news published in local newspaper as well in short the historical of this structure was removed by the ignorance of farmer . Village people says that this structure was earlier approximately 20 feet in hight.

A MOSQUE :

The monuments here play an important role in being recorded in the pages of the history of Azampur. Oral tradition shows that there was an old mosque here which has now been converted into a graveyard. Here the old remains of the mosque can be seen on this mound. But due to it being a mass graveyard, this mosque has not been preserved nor could its remains be preserved. What is seen as a lack of history in its present form is largely due to the failure of the scholars not to appreciate the importance of their monuments.

At present, there are 6 cemeteries in Azampur in which there are graveyards of people of different castes who follow their traditions according to their rituals.

Through oral history, it is known that Azampur village was destroyed and settled many times but the main reason for this was the epidemic like plague that occurred during that period. Oral tradition and interviews reveal that earlier there were separate settlements of different castes here, which can be identified by the utensils, bangles and artifacts found there. But its present form has been continuously increasing since 1920, whose maximum spread was seen in the 1980s, the main reason for which was the migration of people towards Azampur due to floods in the villages situated on the banks of Ganga.

SCHOOL :

From oral history it is known that there was a school in Azampur even before the Mughal period in which *Birbal,* one of the nine gems of Emperor *Akbar*'s court, was also there, about whom it is said that Birbal studied from Azampur School but in its present form this school is not functioning. There are no remains left, mainly because the old Lakhori brick wall was taken away by the general public and the place was converted into fields by the people due to which all its remains were erased. There is a belief in oral trading that eating soil here sharpens the mind, due to which children and elders come from far and wide to take soil from here. Most of the people except those of Muslim religion come here to take soil. One of the main reasons why eating soil is considered *Haram* in Islam is that it is considered one of the five elements in Islam and which gets mixed with soil after death.

ABDUL GHAFUR SHAH'S TOMB :

The tomb of *Abdul Ghafoor Shah* built in Azampur was built during the Mughal period because Abdul Ghafur Shah died in 1644 AD and his tomb was built by *Rustam Khan* who was appointed to the post of commander in Sambhal province at that time. But a mosque was also built which is currently known as *Jama Masjid* of Rustam Khan. In oral history, it is said about Abdul Shah that Ghafur Saheb was appointed as treasurer in Akbar's court. Due to a conspiracy in the court, Ghafur Saheb was

accused of theft of the treasury, due to which Ghafur Shah left Agra and came to Azampur and alone. Started living in this area but after investigation of conspiracy he was proved innocent and he was called back but Ghafur Shah ji was found. Once the king came to this area for hunting, his soldiers were patrolling this area for security reasons. Then the soldiers found Ghafur Shah as an unknown person, due to which Ghafur Saheb was asked to appear before the King, then Ghafur Sa said that I am engrossed in the meditation of God, I have left everything and am present before the King. If he could not do so, the king himself went to him and as a gift, gave the Jagir from *Azampur to Badhapur* to Gafur Shah. Earlier, many wild animals like lion, cheetah, deer etc. lived in the Azampur area and there was a forest here and there was sandy land, it is said that at that time it was settled like a city in which about 52 Palkis came out every day, which seems that it would be a big city.

Apart from Abdul Ghafur Shah, the tomb of his wife *Begum Amatul Habib* and his two sons Ab Ishaq and *Shah Mubarik* is also built in this tomb. At present, Ghafur Saheb's tomb has been preserved under the Archaeological Survey of India. It is a hexagonal tomb which A round dome has been built on it and a big boundary has been made around it, but in the empty space between the tomb and the boundary, there is the grave of a descendant of Ghafur Shah, who was buried due to the epidemic. When Ghafur Shah's family migrated due to the pandemic, they settled in cities like *Bachhraon, Naugaon, Sadat, Chandpur, Nagina, Dhampur etc*. But one family came from Bachhraon and settled again in Azampur. At present the name of the head of this family is *Adilshah* which is near the tomb of Ghafur Shah. The capacity of the mosque built near the Ghafur Saket tomb is about 300 people who can offer namaz together. A madrasa has been built near it which is currently functioning. In front of this mosque, the tomb of *Mir Firoz* Ali is built and in this mosque. There are carvings on the doors of the temple which people call the carvings of prostitutes and verses from the Quran are written in Arabic language. There is a well in front of this mosque, the remains of which are found in the present time and through oral tradition it is known that water from this well was used by the *Rahat*. This well was made of old bricks which were called Lakhori bricks. Which can be seen even in the present time.

TOMB OF TALIB KHAN :

The tomb of Talib Khan built in Azampur appears incomplete as if it has been abandoned in the middle, but in the tomb there is the grave of Talib Khan along with his wife. These tombs have been kept inside the crypt, which have been associated with different stories in the language of common people, one of which is also related to the treasure. It is said that a lot of treasure is buried in this tomb. Due to which some people have vandalized this place i.e. caused damage to the monument which includes digging graves and breaking walls, breaking verses of Quran written on the wall and taking away stones etc. Its important feature is that poetry is written in Persian on its base, which is

literary important. The stone of this mausoleum has been taken out of *Jaithal Lake*, in common language this stone is also called *Dudhi Patthar* or *Jaidarath*. Three others have been built nearby and this one is currently being redeveloped. It is currently located inside a garden which is being conserved by the ASI Archaeological Survey of India.

TOMB OF GRAND SON OF ABDUL GHAFUR SHAH AND MOSQUE :

Azampur is famous by the name of *Miyan Mehboob Shah*, the grandson of Abdul Ghafur Shah, who is worshiped as a pir. A mosque is also built in the name of Miyan Mehboob Shah at this place. At this place there are 14 tombs of different times but of the same family, out of which 8 tombs are old while 6 tombs are about 40 years old. People come to this place to seek their wishes as per their beliefs. For which sheets, incense sticks and chicken etc. are offered here, but a fair is organized here every Thursday in the month of *Ashadh*, which is a good example of Hindu-Muslim unity. In which about 70% Hindus and 30% Muslims come, people come from far away places to this fair. About 70 *bighas* of land comes under this mausoleum. There is also a graveyard in this land in which members of the Peer Ji family are buried. There are some trees at this place since its beginning, one of which is the *Haar Shringaar* tree, whose present form is huge. The Lakhori at this place is about 300 years old and is made of bricks, which shows its historicity on the basis of its structure. Inside this tomb, a compartment was made like a room for the people living here for the services of Peer Ji. The ASI of this tomb broke the old boundary and constructed a new boundary, due to which, in the name of beautification, many trees, remains of old walls etc. were destroyed and at present, when the surface of the Raamaganga Poshak Nahar is paved, the land has been destroyed. There has been a decrease in humidity due to which the trees here have dried up. The following list includes some of the names of people whose graves are located here.

- Mian Mehboob Shah
- Qasim Ali Shah (Qasim Sarai village which is now Sarai, was named after him.)
- Mian Rehmat Ali Shah
- Haji Harullah ji
- Mian Mohidin Shah (Moddipur village was named after him.)
- Shah Balla Saheb (He was from Duyoti.)

Even at present, the graves of some members of Ghafur Shah's family have been built at this place, which was built within about 50 years, including *Rafiq Ali Shah, Fazal Ali Shah, Faizi, Suleman Shah, Aafak Shah and Razia (Amma).*

RESEARCH METHODOLOGY :

To achieve the study's goals and objectives, a technique is needed. The research methodologies

used in this study will be qualitative, analytical, and historical. Methods used in qualitative research included fieldwork, semi-structured interviews, and casual conversations.

The research's data was gathered through semi-structured interviews conducted in the field, reading articles written by different historians, and analyzing their books. Because of the nature of research, many choices about which approach would best serve the study's goals have to be made on the ground.

In general, though, it's a blend of unstructured interviews, casual conversations, and information gathered from other historians' books and papers.

CONCLUSION :

The current study taught us that even a tiny, historically significant community within our civilization can retain its historical significance. It is therefore crucial to educate people about its past. This research will shed light on the historical significance of the village of Azampur and serve as a reminder to protect the historically significant locations found there.

REFERENCE

- *Akbarnama*, ed.and tr. Mathuralal Sharma,Part I, Delhi: Radha Publication, rpt, 2000.
- *Akbarnama*, ed.and tr. Mathuralal Sharma,Part II, Delhi: Radha Publication, rpt, 2000.
- Interview, 15/11/202, Adil Shah, village Azampur, Amroha, UP; Molana Sharif, village Azampur, Amroha, UP; Ashif, village Azampur, Amroha, UP; Some more than 30 persons.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 134-140

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

आधुनिक हिन्दी साहित्य और ऐतिहासिक यथार्थ : एक आलोचनात्मक अध्ययन

मयंक वसु, शोधार्थी,
इतिहास विभाग, चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ, उ0 प्र0
डॉ. दीपक कुमार, शोध निर्देशक एवं असिस्टेंट प्रोफेसर,
इतिहास विभाग, एस.एस.वी. कॉलेज, हापुड़, उ0 प्र0

शोध सार :

यह शोध पत्र 'आधुनिक हिंदी साहित्य और ऐतिहासिक यथार्थ : एक आलोचनात्मक अध्ययन' इतिहास–लेखन की परंपराओं और हिन्दी के साहित्यिक साक्ष्यों के बीच के संबंधों का गहराई से विश्लेषण प्रस्तुत करता है। शोध के पहले हिस्से में गद्य विधा के ऐतिहासिक–भौतिकवादी यथार्थ का विश्लेषण किया गया है। मुंशी प्रेमचंद की 'गोदान' को 1930 के दशक की आर्थिक मंदी और ब्रिटिश भूमि राजस्व नीतियों के कारण भारतीय कृषक की 'सर्वहाराकरण' का एक सच्चा दस्तावेज प्रमाणित किया गया है। इसी तरह, यशपाल के प्रभावशाली उपन्यास 'झूठा सच' के माध्यम से 1947 के सत्ता–हस्तांतरण और भारत–पाकिस्तान विभाजन के जटिल सांप्रदायिक मनोविज्ञान और जेंडर–आधारित हिंसा का सूक्ष्म–इतिहास सामने लाया गया है। अध्ययन के दूसरे भाग में पद्य विधा के जरिए तत्कालीन समाज के बौद्धिक इतिहास और जन–चेतना की जांच की गई है। मैथिलीशरण गुप्त की कृति 'भारत–भारती' के विश्लेषण से दिखाया गया है कि एक पराधीन राष्ट्र में 'सांस्कृतिक राष्ट्रवाद' और अतीत के गर्व का निर्माण जन लामबंदी का सबसे बड़ा औजार कैसे बना। इसके विपरीत, स्वतंत्रता के बाद की नागार्जुन की कविताओं के माध्यम से नव–स्वतंत्र भारत के 'नेहरूवादी यूटोपिया' के विखंडन, अकाल की विभीषिका और नव–औपनिवेशिक सत्ता के प्रति जन–आक्रोश का यथार्थ प्रस्तुत किया गया है।

इस आलोचनात्मक दृष्टिकोण के तहत, यह शोध यह स्पष्ट करता है कि साहित्य में रचनाकार की वैचारिक पृष्ठभूमि और कल्पना का समावेश जरूर होता है, इसलिए इसे पूरी तरह से वस्तुनिष्ठ इतिहास नहीं माना जा सकता। अंत में, यह अध्ययन इस धारणा को मजबूती प्रदान करता है कि आधुनिक हिंदी साहित्य केवल इतिहास का निष्क्रिय दर्पण नहीं, बल्कि एक जीवंत 'वैकल्पिक अभिलेखागार' है। इसलिए, आधुनिक भारतीय इतिहास को समग्रता में समझने के लिए साहित्यिक साक्ष्यों का अध्ययन न सिर्फ एक अकादमिक विकल्प है, बल्कि एक जरूरी ऐतिहासिक आवश्यकता भी है।

बीज शब्द :

ऐतिहासिक यथार्थ, जनवादी इतिहास, सूक्ष्म–इतिहास, ऐतिहासिक भौतिकवाद, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद, आलोचनात्मक मूल्यांकन।

इतिहास लेखन में साहित्यिक रचनाओं को संदेह की दृष्टि से देखा जाता है और इसका कारण यह है की साहित्य का स्वरूप काल्पनिक और आदर्शवादी होता है जबकि इतिहास का निर्माण तथ्यों के आधार पर होता है इसलिए इसका स्वरूप यथार्थवादी होता है परंतु इस मान्यता को पूर्ण रूप से स्वीकार करना इतिहास को देखने की एक प्रबुद्ध दृष्टि को नकारना होगा। इसका ये आशय बिल्कुल भी नहीं है की साहित्य को ऐतिहासिक स्रोत के रूप आँख बंद करकर स्वीकार कर लेना चाहिए। साहित्य को पढ़ते समय मेरी यह मान्यता रही है की साहित्य भी उन प्रबुद्धजनों के द्वारा उन समाजों को देखने की एक दृष्टि है जिनका अध्ययन एक इतिहासकार अपनी समकालीन परिस्थिति से प्रभावित दृष्टि से देखने का प्रयास करता है। साहित्यकार पर जहां युगीन परिवेश का दबाव कार्य करता है वही इतिहासकार भी समकालीन युगीन परिवेश से पूर्णतया मुक्त नहीं हो पाता है। साहित्य और इतिहास दोनों का अध्ययन क्षेत्र मानवीय समाज और उसका क्रमिक विकास है। इतिहास जहां घटनाओं के वस्तुनिष्ट और तथ्यात्मक विवरण पर केंद्रित होता है, वहीं साहित्य घटनाओ के पीछे की मानवीय संवेदनाओ, सामाजिक संघर्षों और युग की समझ को अपनी 'आत्मनिष्ठता' के साथ प्रस्तुत करता है। इतिहासकार जहाँ आंकड़ों और सरकारी दस्तावेजों में सच्चाई की खोज करता है, वहीं साहित्यकार समाज के मनोविज्ञान को अपनी रचनाओं में बुनता है। इतिहास के 'अलिखित' और 'छूटे हुए' पहलुओं को समझने के लिए साहित्यिक स्रोतों का अध्ययन सिर्फ एक विकल्प नहीं, बल्कि एक जरूरी आवश्यकता बन जाती है।

आधुनिक युग में रेंके की 'प्रत्यक्षवादी' परंपरा ने इतिहास लेखन को विज्ञान की दृष्टि से देखने का प्रयास किया है जिस कारण सरकारी दस्तावेजों और आधिकारिक अभिलेखों पर इतिहासकारों की निर्भरता बढ़ी। इस परंपरा में इतिहास राजाओं, युद्धों और महान व्यक्तियों के इर्द गिर्द घूमता है। इसमे समाज के निचले तबके जैसे किसान, मजदूर आदि के लिए कोई स्थान नहीं बचता। प्रत्यक्षवाद में केवल तथ्यों को इकट्ठा करने के कारण इतिहास मात्र घटनाओं का विवरण बनकर रह जाता है रेंके ने लोक कथाओं, साहित्यिक कृतियों एवं मौखिक परंपराओं को अविश्वसनीय मानकर खारिज कर दिया जबकि कई समुदायों और संस्कृतियों का इतिहास इन्हीं माध्यमों में जीवित है। आगे चलकर सबाल्टर्न स्टडीज और माइक्रो हिस्ट्री के तहत अध्ययन करने पर सरकारी स्त्रोतों और अभिलेखों की सीमाएँ स्पष्ट होने लगती हैं। अभिलेखीय स्त्रोत डाटा पर केंद्रित होते हैं जैसे अकाल में कितने लोगों की मृत्यु हुई, कितने अनाज का निर्यात हुआ। लेकिन यह डाटा उस अकाल को झेलने वाले परिवार की त्रासदी नहीं बता सकता परंतु यहाँ पर जनवादी दृष्टिकोण ऐसे स्त्रोतों की खोज करता है जहां पर सरकारी स्त्रोत मौन हो जाते हैं जैसे क्षेत्रीय साहित्य, लोकगीत, एवं मौखिक इतिहास आदि। जनवादी इतिहासकार रंजीत गुहा का मानना था कि हमें सरकारी दस्तावेजों को 'उल्टा पढ़ना' (Against the grain) चाहिए। यानी जो सरकार ने लिखा है, उसके पीछे छिपे डर या विरोध को खोजना। सरकारी फाइल यह तो बताती है कि 'विद्रोह दब गया', पर यह नहीं बताती कि 'विद्रोह शुरू क्यों हुआ' (जनता के नजरिए से)। सरकारी स्रोत अक्सर बाहरी नजरिए से लिखे जाते हैं। औपनिवेशिक काल में ब्रिटिश अधिकारियों ने भारतीय परंपराओं और जनजातीय विद्रोहों को 'अंधविश्वास' या 'कानून–व्यवस्था की समस्या' के रूप में देखा वहीं 'सूक्ष्म इतिहास' एक

छोटा सा स्थानीय किस्सा या लोकगीत उस घटना की ज्यादा सटीक जानकारी दे सकता है, जिसे सरकारी गजेटियर ने महज एक छोटी 'झड़प' मानकर छोड़ दिया हो। आधुनिक हिंदी गद्य, खासकर मुंशी प्रेमचंद और यशपाल का कथा साहित्य, 'नीचे से इतिहास को पेश करता है। यह केवल कल्पना नहीं है, बल्कि औपनिवेशिक नीतियों, महामंदी के प्रभावों और विभाजन की विडंबनाओं का एक प्रामाणिक 'ऐतिहासिक यथार्थ' है।

1.1 'गोदान' (1936) : औपनिवेशिक कृषि–अर्थव्यवस्था और 'कृषक सर्वहाराकरण' का ऐतिहासिक दस्तावेज– मुंशी प्रेमचंद का 'गोदान' भारतीय ग्रामीण समाज का सिर्फ एक संवेदनात्मक आख्यान नहीं है। यह 1930 के दशक की 'विश्वव्यापी आर्थिक महामंदी' के संदर्भ में भारतीय कृषक के 'सर्वहाराकरण' का एक ऐतिहासिक भौतिकवादी विश्लेषण है।

क. भूमि–राजस्व नीतियां और संस्थागत शोषण – अगर हम इतिहासकार डी.डी. कोसाम्बी के 'उत्पादन के संबंधों' के सिद्धांत को गोदान पर लागू करें, तो साफ है कि उपन्यास का नायक 'होरी' किसी ईश्वरीय नियति का शिकार नहीं, बल्कि ब्रिटिश 'स्थायी बंदोबस्त' और 'तालुकदारी व्यवस्था' का शिकार है। ब्रिटिश भू–राजस्व नीतियों ने भूमि को एक 'बिक्री योग्य वस्तु' बना दिया था। होरी की त्रासदी अवध क्षेत्र की उस ऐतिहासिक सच्चाई को दर्शाती है, जहां 'अवध रेंट एक्ट 1921' के बावजूद किसानों की हालत नहीं सुधरी थी। जमींदार (रायसाहब) किसी एक व्यक्ति का नाम नहीं, बल्कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद का 'एजेंट' है, जो ऊपर के दबाव (ब्रिटिश लगान) को किसानों पर 'नजराना' और 'बेदखली' के रूप में डालता है।

ख. ग्रामीण ऋणग्रस्तता और महाजनी तंत्र – तब के ब्रिटिश रिपोर्ट्स (जैसे मैकलेगन कमिटी रिपोर्ट) ग्रामीण ऋणग्रस्तता के सिर्फ आंकड़े पेश करते हैं, लेकिन गोदान उस ऋण–जाल के काम करने के तरीके को उजागर करता है। साहूकार (झिंगुरी सिंह), पुलिस (दरोगा गंडा सिंह), और पटवारी (पटेश्वरी) का 'गठबंधन' भारतीय समाज में औपनिवेशिक राज्य की सबसे गहरी गहराई का प्रतीक है। होरी का अपनी गाय खोना और अंततः दिहाड़ी मजदूर बनकर 'लू' से मरना, भारतीय कृषि के 'व्यवसायीकरण' और उससे उपजे विनाश का सबसे प्रामाणिक प्रमाण है।

ग. उभरता औद्योगिक पूंजीवाद बनाम सामंतवाद – प्रेमचंद केवल गांवों तक सीमित नहीं रहते। 'मिस्टर खन्ना' का चरित्र भारत में उभरते नए 'औद्योगिक बुर्जुआ वर्ग' का प्रतिनिधित्व करता है, जो सामंतवाद के समांतर खड़ा हो रहा था। गोदान में ग्रामीण और शहरी कथा का समानांतर चलना 20वीं सदी के पहले भाग के उस 'संक्रमणकालीन यथार्थ' का प्रतीक है, जहां एक ओर कृषि व्यवस्था कमजोर हो रही थी और दूसरी ओर औद्योगीकरण नए शोषित वर्ग का निर्माण कर रहा था।

1.2 'झूठा सच' (1958–60) : सत्ता–हस्तांतरण, सांप्रदायिकता और विभाजन का 'जनवादी' यथार्थ– जहां गोदान आर्थिक ढांचों का इतिहास है, वहीं यशपाल का वृहदाकार उपन्यास 'झूठा सच' (वतन और देश तथा देश का भविष्य) 1947 के सत्ता–हस्तांतरण और भारत–पाकिस्तान विभाजन का एक बेहद जटिल राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक इतिहास है। पारंपरिक इतिहास अक्सर उच्च राजनीति 'जैसे कैबिनेट मिशन, माउंटबेटन योजना और रेडक्लिफ लाइन' तक ही सीमित रहता है, लेकिन 'झूठा सच' इस राजनीतिक विमर्श को तोड़ता है।

क. सांप्रदायिक मनोविज्ञान और 'अन्यकरण' – उपन्यास लाहौर की भोला पांधे की गली से शुरू होता है, जो 'गंगा–जमुनी तहजीब' का प्रतीक थी। यशपाल एक इतिहासकार की तरह इस प्रक्रिया को दर्ज करते हैं कि

कैसे 'द्वि–राष्ट्र सिद्धांत' एक राजनीतिक प्रस्ताव से बदलकर एक 'सामूहिक हिंसक मनोविज्ञान' में परिवर्तित हो गया। सदियों से साथ–साथ रहने वाले पड़ोसी अचानक 'हम' और 'वे' में कैसे बंट गए, इस पर यशपाल का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किसी भी 'आधिकारिक सरकारी रिपोर्ट' में नहीं मिलता।

ख. विभाजन का जेंडर आधारित इतिहास – आधुनिक इतिहास–लेखन में 'उर्वशी बुटालिया' और 'रितु मेनन' जैसे विद्वानों ने विभाजन के दौरान महिलाओं के शरीर को 'युद्ध के मैदान' के रूप में देखा है। 'झूठा सच' में 'तारा' का चरित्र इसी लिंग–आधारित ऐतिहासिक यथार्थ का प्रमाण है। दंगों के दौरान महिलाओं का अपहरण, यौन हिंसा, और 'राष्ट्र के सम्मान' के नाम पर परिवारों द्वारा महिलाओं को आत्महत्या के लिए मजबूर करना – यह वह 'हाशिए का इतिहास' है जिसे मुख्यधारा के 'राष्ट्रीय गौरव' की कहानियों में अक्सर छुपा दिया जाता है। यशपाल का गद्य इस चुप्पी को तोड़ता है।

ग. उत्तर–औपनिवेशिक मोहभंग – उपन्यास का दूसरा भाग 'देश का भविष्य' आजादी के बाद के नेहरूवादी भारत का एक आलोचनात्मक मूल्यांकन है। 'क्लेम्स ऑफिसर' द्वारा शरणार्थियों के पुनर्वास में किए गए भ्रष्टाचार, विस्थापितों का संघर्ष, और नई राजनीतिक सत्ता का चारित्रिक पतन – यह दर्शाता है कि 1947 में केवल 'सत्ता का हस्तांतरण' हुआ था, 'व्यवस्था का परिवर्तन' नहीं। सूदजी और पुरी जैसे पात्रों के माध्यम से यशपाल ने तत्कालीन भारत की 'क्रॉनी कैपिटलिज्म' और राजनीतिक अवसरवादिता की नींव का जो दस्तावेजीकरण किया है, वह आज के राजनीतिक इतिहास को समझने के लिए एक महत्वपूर्ण कुंजी है।

भाग 2 : आधुनिक हिंदी कविता में युगबोध, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और जन–प्रतिरोध का ऐतिहासिक दस्तावेजीकरण– जब 'मानसिकताओं के इतिहास' या 'बौद्धिक इतिहास' का अध्ययन करते हैं, तो कविता सिर्फ एक भावनात्मक अभिव्यक्ति नहीं होती, बल्कि ये एक महत्वपूर्ण 'प्राथमिक स्रोत' की तरह सामने आती है। गद्य जहाँ समाज के 'आधार' का बारीकी से चित्रण करता है, वहीं पद्य समाज की 'अधिरचना' का दस्तावेजीकरण करता है। फ्रांसीसी इतिहासकार मार्क ब्लोक के 'एनाल्स स्कूल' के नजरिए से देखें तो आधुनिक हिंदी कविता औपनिवेशिक और उत्तर–औपनिवेशिक भारत के सामूहिक मनोविज्ञान का एक 'अघोषित अभिलेख' है, जिसे पारंपरिक राजनीतिक इतिहास अक्सर अनदेखा कर देता है।

इस परिप्रेक्ष्य में, 20वीं सदी की हिंदी कविता 'मैथिलीशरण गुप्त के 'सांस्कृतिक राष्ट्रवाद' से लेकर नागार्जुन के 'जनवादी प्रतिरोध' तक' भारतीय समाज के ऐतिहासिक विकास का एक संकलित और समालोचनात्मक इतिहास पेश करती है।

2.1 'भारत–भारती' (1912) : 'कल्पित समुदाय' का निर्माण और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद– 20वीं सदी का शुरुआती दशक भारतीय इतिहास में गहरे राजनीतिक परिवर्तनों का समय था। 1905 के बंगाल विभाजन, स्वदेशी आंदोलन की लहर, और 1909 के मॉर्ले–मिंटो सुधारों ने राजनीतिक हताशा की एक स्थिति पैदा की, जिससे एक नए 'सांस्कृतिक आख्यान' की आवश्यकता महसूस हुई। यही ऐतिहासिक शून्य मैथिलीशरण गुप्त की कृति 'भारत–भारती' ने भरा।

क. 'अतीत गौरव' और परंपराओं का आविष्कार इतिहासकार एरिक हॉब्सबॉम की 'परंपराओं के आविष्कार' की अवधारणा का 'भारत–भारती' एक जीवंत उदाहरण है। गुप्त जी ने अतीत (आर्यों का गौरव), वर्तमान (ब्रिटिश दासता में पतन) और भविष्य (पुनरुत्थान की आशा) के त्रिकोणीय 'ऐतिहासिक ढांचे' का निर्माण किया। यह

संकल्पना उस समय के जनमानस में बेनेडिक्ट एंडरसन के 'कल्पित समुदाय' को गढ़ने की एक सुनियोजित रणनीति थी। यह कृति आर्य समाज और पुनरुत्थानवादी आंदोलनों के बौद्धिक इतिहास का प्रतिनिधित्व करती है, जहाँ 'हिंदू अस्मिता' और 'भारतीय राष्ट्रवाद' आपस में जुड़ रहे थे।

ख. भाषा का लोकतंत्रीकरण और जन-जागृति 'भारत–भारती' का एक और महत्वपूर्ण लेकिन कम चर्चित पहलू इसकी भाषा में है। ब्रजभाषा की सामंती और दरबारी संस्कृति को तोड़कर खड़ी बोली को काव्य की भाषा बनाना केवल एक साहित्यिक परिवर्तन नहीं था, यह एक 'डेमोक्रेटिक शिफ्ट' था। खड़ी बोली उस नव–शिक्षित मध्यम वर्ग की भाषा बन रही थी, जो राष्ट्रीय आंदोलन को आगे बढ़ाने वाला था। यह बात ऐतिहासिक दस्तावेजों में कम ही मिलती है कि ब्रिटिश इंटेलिजेंस ने 'भारत–भारती' की प्रतियों पर ध्यान दिया था, क्योंकि यह सामान्य कविता नहीं, बल्कि एक 'विद्रोही साहित्य' और जन–लामबंदी का शक्तिशाली राजनीतिक उपकरण बन चुकी थी।

2.2 नागार्जुन की कविताएँ : 'उत्तर-औपनिवेशिक मोहभंग' और जनवादी प्रतिरोध – यदि 'भारत–भारती' स्वतंत्रता से पहले के 'राष्ट्र–निर्माण' के सपनों की कहानी है, तो नागार्जुन की कविताएँ 1947 के बाद के उस यथार्थ की कच्ची तस्वीर पेश करती हैं, जहाँ वो सपने टूट रहे थे। आजादी के बाद का आधिकारिक इतिहास 'नेहरूवादी यूटोपिया', पंचवर्षीय योजनाओं और बड़े बांधों के चारों ओर बुना गया है। पर जब हम नागार्जुन की कविताओं के जरिए 'नीचे से इतिहास' देखते हैं, तो इस नव–स्वतंत्र राष्ट्र का एक बेहद काला सच सामने आता है।

क. अकाल, भुखमरी और सत्ता का जनसांख्यिकीय यथार्थ : नागार्जुन की प्रसिद्ध कविता 'अकाल और उसके बाद' महज भूख का वर्णन नहीं है। यह 1943 के बंगाल अकाल और 1950–60 के दशक में बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश में आए कृषि संकटों का एक 'वैज्ञानिक दस्तावेज' है। जब सरकारी रिपोर्ट्स अकाल में मरने वालों को मात्र 'आँकड़ों' में बदल रही थी, नागार्जुन उस 'सूक्ष्म–इतिहास' को दर्ज कर रहे थे, जहाँ भूख न केवल शरीर को, बल्कि सामाजिक संबंधों को भी खा जाती है। एंटोनियो ग्राम्शी की परिकल्पना में नागार्जुन एक सच्चे जैविक बुद्धिजीवी की तरह उभरते हैं, जो वातानुकूलित कमरों में नहीं, बल्कि 'अधीनस्थ' के बीच रहकर उनका इतिहास लिख रहे थे।

ख. नव-उपनिवेशवाद और सत्ता का छद्म : नागार्जुन की राजनीतिक कविताएँ सत्ता के प्रभुत्ववादी विमर्श को सीधा चुनौती देती हैं। 1961 में ब्रिटिश महारानी एलिजाबेथ द्वितीय की भारत यात्रा उस समय का एक अप्रचलित और गहरा तथ्य है। एक ओर नव–स्वतंत्र भारत की सरकार एक पूर्व औपनिवेशिक शासक के स्वागत में धन लुटा रही थी, वहीं दूसरी ओर नागार्जुन अपनी कविता 'आओ रानी, हम ढोएंगे पालकी' के जरिए इस 'नव–औपनिवेशिक मानसिकता' पर गहरा प्रहार कर रहे थे। 'पैसे की खातिर हम अपने उसूलों को बेच देंगे... आओ रानी, हम ढोएंगे पालकी, यही हुई है राय जवाहरलाल की।' इस कविता ने किसी भी सरकारी दस्तावेज से कहीं अधिक प्रामाणिकता के साथ साबित किया कि 1947 में केवल 'शासकों के चेहरे' बदले थे, सत्ता का 'वर्गीय चरित्र' नहीं। नागार्जुन का काव्य इस 'क्रॉनी कैपिटलिज्म' और राजनीतिक अवसरवादिता के उदय का सबसे तीव्र ऐतिहासिक प्रमाण है।

आधुनिक इतिहास लेखन की प्रत्यक्षवादी परंपरा लंबे समय से सिर्फ सत्ता–केंद्रित अभिलेखों, संधियों और सांख्यिकीय आंकड़ों को ही 'इतिहास' मानती आई है। मगर, इस शोध पत्र में आधुनिक हिंदी गद्य और पद्य का

बारीकी से और आलोचनात्मक तरीके से विश्लेषण किया गया है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि आधिकारिक और अभिजात्य इतिहास समाज की पूरी तस्वीर पेश करने में असफल हैं। जब तक इतिहास में 'मनुष्य' और उसकी 'भावनाएँ' शामिल नहीं होतीं, तब तक यह सिर्फ घटनाओं का एक निर्जीव खाका ही रह जाता है। इस कमी को आधुनिक हिंदी साहित्य पूरा करता है, जो अपने समय के ऐतिहासिक यथार्थ का सबसे प्रामाणिक 'सबाल्टर्न पुरालेख' बनकर उभरा है। चूंकि यह एक 'आलोचनात्मक अध्ययन' है, इसलिए एक इतिहासकार के दृष्टिकोण से यह मान लेना जरूरी है कि साहित्य को सीधे 'वस्तुनिष्ठ इतिहास' नहीं कहा जा सकता। साहित्य में रचनाकार की अपनी विचारधारा (जैसे यशपाल का मार्क्सवाद या गुप्त जी का पुनरुत्थानवाद), उसकी कल्पनाशीलता और भावनात्मक अतिशयोक्ति शामिल होती है। हालांकि, इस 'आत्मनिष्ठता' को साहित्य की कमजोरी मानने के बजाय इसे इतिहास लेखन का एक 'शक्तिशाली उपकरण' माना जाना चाहिए। लेखक का पूर्वाग्रह या दृष्टिकोण खुद उस युग की 'मानसिकता' का एक ऐतिहासिक प्रमाण है। जहाँ सरकारी गजट हमें यह बताता है कि अकाल में कितने लोग मरे या दंगों में कितने घर जलाए गए, वहीं साहित्य हमें यह बताता है कि उन लोगों ने क्या महसूस किया और दंगों ने समाज के सामूहिक मनोविज्ञान को कैसे प्रभावित किया। तथ्य और सत्य के बीच का जो बारीक फर्क है, साहित्य उस 'मानवीय सत्य' को उजागर करता है।

अंत में, यह कह सकते हैं कि आधुनिक हिंदी साहित्य सिर्फ इतिहास का दर्पण नहीं, बल्कि यह 'ऐतिहासिक चेतना' का भी निर्माण करता है। हाशिये पर पड़े समाज 'किसानों, मजदूरों, महिलाओं और विस्थापितों' का वह 'मौन इतिहास', जिसे सत्ता के विमर्श ने मुख्यधारा से हटा दिया था, वहीं हिंदी साहित्य के पन्नों पर सुरक्षित है। आधुनिक भारत के यथार्थ को समझने के लिए, सिर्फ अभिलेखागारों में धूल फांकना ही नहीं, बल्कि साहित्य के इन जीवंत पन्नों से गुजरना भी एक ऐतिहासिक आवश्यकता है।

संदर्भ सूची :

1. प्रेमचंद, मुंशी. (1936). गोदान. इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन।
2. यशपाल. (1958–1960). झूठा सच (भाग 1 : वतन और देश, भाग 2 : देश का भविष्य). इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन।
3. गुप्त, मैथिलीशरण. (1912). भारत–भारती. चिरगाँव : साहित्य सदन।
4. नागार्जुन. (1984). प्रतिनिधि कविताएँ (संपादक : डॉ. नामवर सिंह). नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
5. सिंह, नामवर. (1957). इतिहास और आलोचना. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
6. शर्मा, रामविलास. (1952). प्रेमचंद और उनका युग. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
7. पांडेय, मैनेजर. (1981). साहित्य और इतिहास–दृष्टि. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन।
8. सिंह, बच्चन. (1996). हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास. नई दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन।
9. सिंह, नामवर. (1954). आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ. इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन।
10. गुहा, रणजीत (संपा.). (1982). सबालटर्न स्टडीज (Subaltern Studies). दिल्ली : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
11. सरकार, सुमित. (1993). आधुनिक भारत (1885–1947). नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।

12. कोसाम्बी, डी. डी. (1956). भारतीय इतिहास की रूपरेखा (An Introduction to the Study of Indian History). नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
13. चंद्र, बिपन व अन्य. (1990). भारत का स्वतंत्रता संघर्ष. दिल्ली : हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।
14. बुटालिया, उर्वशी. (1998). खामोशी के उस पार (The Other Side of Silence). नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन।
15. हॉब्सबॉम, एरिक. (1983). परंपराओं का आविष्कार (The Invention of Tradition). दिल्ली : कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 141-146

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

'दादी अम्मा' और 'बहनें' कहानी में पारिवारिक संबंधों की बदलती संवेदनाओं का विश्लेषण

राहुल गर्ग
शोधार्थी, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
प्रो. रजिंदर कौर
शोध निर्देशक, हिंदी विभाग, माता सुंदरी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

शोध सारांश :

प्रस्तुत शोध–पत्र में कृष्णा सोबती की कहानियों "दादी अम्मा" और "बहनें" के माध्यम से पारिवारिक संबंधों की बदलती संवेदनाओं का विश्लेषण किया गया है। यह अध्ययन बताता है कि आधुनिक जीवन की बदलती सामाजिक संरचना, पीढ़ियों के बीच बढ़ती दूरी और व्यक्तिवादी दृष्टिकोण के कारण पारिवारिक संबंधों की आत्मीयता और भावनात्मक निकटता में कमी आई है। "दादी अम्मा" में वृद्धावस्था की उपेक्षा, अकेलापन और पारिवारिक हाशियाकरण को दर्शाया गया है, जबकि "बहनें" में बहनों के संबंधों में आई दूरी, आंतरिक पीड़ा तथा दबे हुए स्नेह का चित्रण मिलता है। तुलनात्मक दृष्टि से देखने पर पता चलता है कि जहां एक ओर संबंधों का विघटन स्पष्ट और कठोर रूप में सामने आता है, वहीं दूसरी ओर संवेदनाएँ दबे हुए रूप में विद्यमान रहती हैं। इस प्रकार दोनों कहानियाँ यह संकेत देती हैं कि पारिवारिक संबंधों की संवेदनाएँ समय के साथ परिवर्तित हो रही हैं, परंतु उनका पूर्णतः लोप नहीं हुआ है।

मुख्य शब्द : पारिवारिक संबंध, बदलती संवेदना, पीढ़ी–अंतर, भावनात्मक दूरी, वृद्धावस्था की उपेक्षा, स्त्री अनुभव, पारिवारिक विखंडन, आधुनिक जीवन।

प्रस्तावना :

साहित्य मानव जीवन की संवेदनाओं का सबसे सजीव रूप होता है। इसमें व्यक्ति के अनुभव, संबंध और बदलती परिस्थितियाँ सहज रूप में अभिव्यक्त होते हैं। विशेष रूप से कथा–साहित्य में पारिवारिक संबंधों की जटिलता और उनकी बदलती प्रकृति स्पष्ट रूप से सामने आती है। परिवार, जहाँ एक ओर प्रेम, अपनापन और सहारा देता है, वहीं समय के साथ उसमें दूरी और बदलाव भी दिखाई देने लगते हैं। इसी संदर्भ में कहा गया है कि "परिवार के सदस्य भावनात्मक रूप से एक–दूसरे से बंधे होते हैं और एक–दूसरे के साथ सुख–दुःख साझा करते हैं।"[1] यह कथन परिवार के मूल स्वरूप को दर्शाता है, परंतु आज के समय में यही संबंध परिवर्तन के दौर से गुजर रहे हैं। कृष्णा सोबती की कहानियाँ "दादी अम्मा" और "बहनें" पारिवारिक संबंधों की बदलती संवेदनाओं को सहज और यथार्थ रूप में प्रस्तुत करती हैं। "दादी अम्मा" में पीढ़ियों के बीच बढ़ती दूरी और उपेक्षा

दिखाई देती है, जबकि "बहनें" में बहनों के संबंधों में भावनात्मक दूरी और आंतरिक पीड़ा उभरती है। परिवार को समझाते हुए कहा गया है कि "परिवार पति, पत्नी और बच्चों से मिलकर बनी एक जैविक सामाजिक इकाई है।"[2] परंतु इसी इकाई के भीतर का भावनात्मक जुड़ाव समय के साथ बदल रहा है। आधुनिक जीवन के कारण संबंधों में आत्मीयता कम हो रही है और दूरी बढ़ रही है।

"दादी अम्मा" कृष्णा सोबती द्वारा नवंबर 1954 में लिखित कहानी है जिसमें संयुक्त परिवार के भीतर बदलती हुई संवेदनाओं का बहुत ही सजीव और वास्तविक चित्रण मिलता है। कहानी की शुरुआत ही इस संकेत से होती है कि "बहार फिर आ गई। वसन्त की हल्की हवाएँ पतझर के फीके ओठों को चुपके से चूम गईं।"[3] यह केवल मौसम का वर्णन नहीं है, बल्कि यह भी बताता है कि जैसे प्रकृति में परिवर्तन होता है, वैसे ही समय के साथ संबंधों की भावनाएँ भी बदल जाती हैं। कहानी का केंद्र दादी अम्मा हैं, जो अब बहुत वृद्ध हो चुकी हैं और अपने बेटे तथा पोते–पोतियों के साथ रहती हैं। एक समय था जब इस घर की पूरी व्यवस्था उनके हाथों में थी और उनका पूरा अधिकार चलता था। वे सबके साथ लाड़–प्यार का व्यवहार करती थीं और अपनी बहू मेहरां को बेटी की तरह मानती थीं। इससे स्पष्ट होता है कि पहले पारिवारिक संबंधों में स्नेह, अपनापन और सम्मान की भावना थी। वे अपनी बहू के लिए क्या–क्या करती थीं, इसका प्रमाण इस कथन से मिलता है कि "मेरे अपने ब्याह में मायके से पचास तोले का रानीहार चढ़ा था। तुम्हें याद नहीं, तुम्हारे ससुर को कहकर उसी के भारी जड़ाऊँ कंगन बनवाए थे तुम्हारे ब्याह में!"[4] यह दर्शाता है कि पहले पारिवारिक संबंध त्याग और ममता पर आधारित थे। इस प्रकार कहानी के प्रारम्भ में परिवार का जो रूप सामने आता है, वह भरा–पूरा, हँसता–खेलता और स्नेह से परिपूर्ण है जिसे देखकर मेहरां संतोष से भर जाती है। मेहरां इस परिवार की बहू है, जो आगे चलकर घर की मालकिन और सास बनती है। उसके अतीत को देखने पर पता चलता है कि वह स्वयं भी कभी एक संवेदनशील बहू थी, जो संतान न होने के कारण भीतर ही भीतर पीड़ा से गुजरती थी। उसके ससुर द्वारा दिया गया आशीर्वाद – "बहूरानी, फूलो–फलो।"[5] उसके लिए केवल शब्द नहीं, बल्कि उसकी सबसे बड़ी कामना थी। जब मेहरां गर्भवती होती है, तब दादी अम्मा (उसकी सास) बहुत स्नेह से उसकी देखभाल करती हैं– "बहू, अपने को थकाओ मत, जो सहज–सहज कर सको, करो। बाकी मैं संभाल लूंगी।"[6] यह स्पष्ट करता हैं कि उस समय सास–बहू के संबंधों में अपनापन और आपसी समझ थी। यह बताता है कि पहले पारिवारिक संबंधों में संवेदनाएँ जीवित और गहरी थीं।

किन्तु समय के साथ परिस्थितियाँ बदलने लगती हैं। अब वही मेहरां, जो पहले बहू थी, स्वयं तीन बहुओं की सास बन जाती है और उसके व्यवहार में परिवर्तन आ जाता है। पहले जहाँ वह अपनी सास का आदर करती थी, अब वह अपनी बहुओं पर अधिकार जताने लगती है और दादी अम्मा की उपेक्षा करने लगती है। यह परिवर्तन दादी अम्मा द्वारा पोते की शादी में उसकी उपेक्षा के प्रसंग को याद करते हुए स्पष्ट हो जाता है कि "किसी ने कुछ पूछा नहीं तो क्या करती? समधियों से बातचीत, लेन–देन, दुलहिन के कपड़े–गहने, यह सब मेहरां के अभ्यस्त हाथों से होता रहा है। घर में पहले दो ब्याह हो जाने पर अम्मा से सलाह–सम्मति करना भी आवश्यक नहीं रह गया।"[7] अब दादी अम्मा की भूमिका सीमित हो गई है और पारिवारिक निर्णयों में उनकी भागीदारी समाप्त हो चुकी है। इसी के परिणामस्वरूप, दादा जी और दादी अम्मा का स्थान घर के केंद्र से हटकर पिछवाड़े की कोठरी में सिमट जाता है। नई पीढ़ी का व्यवहार इस बदलाव को स्पष्ट करता है– "पिछवाड़े के कमरे में से

जब दादा के साथ बोलती हुई अम्मा की आवाज आती है तो पोते क्षण–भर ठिठककर अनसुनी कर देते हैं।"[8] यह स्थिति बताती है कि अब पारिवारिक संबंधों में सम्मान की जगह उपेक्षा और दूरी ने ले ली है। अब दादी अम्मा तथा दादा जी की स्थिति भी बदल चुकी है। पहले वे परिवार के केंद्र थे, लेकिन अब उन्हें नजरअंदाज किया जाने लगा है। एक दिन जब दादी अम्मा अपने पोते से दादाजी का ख्याल रखने और दवा लाने को कहती हैं, तो इस छोटी–सी बात पर घर में झगड़ा हो जाता है। दादी अम्मा और मेहरां के बीच हुई लड़ाई से आहत होकर वे अपनी बहू से कहती हैं कि "क्यों नहीं बहू, अब तो बेटों को कुछ कहने के लिए तुमसे पूछना होगा! यह बेटे तुम्हारे हैं, घर–बार तुम्हारा है, हुक्म हासिल तुम्हारा है।"[9] यह कथन उनके टूटते अधिकार और बदलती पारिवारिक संवेदनाओं को उजागर करता है जहाँ पहले उनकी बात बिना प्रश्न मानी जाती थी, अब उन्हें बोलने का भी अधिकार भी नहीं रहा।

इसी बदलते व्यवहार का प्रभाव माँ और बेटे के संबंधों में भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। पहले जहाँ माँ और बेटे के बीच गहरा स्नेह, निकटता और अपनापन था, वहीं अब उसमें दूरी आ गई है। जब बेटा छोटा था, तब दादी अम्मा का पूरा जीवन उसी के इर्द–गिर्द सिमटा हुआ था। वह उसकी हर छोटी–बड़ी आवश्यकता का ध्यान रखती थीं और उसके बिना स्वयं को अधूरा महसूस करती थीं। बेटा भी हर सुख–दुख में सबसे पहले माँ के पास ही आता था, मानो माँ ही उसका पूरा संसार हो। इसी निकटता को इस प्रकार समझा जा सकता है– "दादी अम्मा की गोद ही उसके लिए दुनिया थी और दादी अम्मा की आवाज ही उसका सबसे बड़ा सहारा।"[10] लेकिन अब दादी अम्मा का यह कहना कि "जिस बेटे को मैंने अपना दूध पिलाकर पाला, आज उसे देखे मुझे महीनों बीत जाते हैं, उससे इतना नहीं हो पाता कि बूढ़ी अम्मा की सुधि ले।"[11] एक माँ के हृदय की गहरी पीड़ा को व्यक्त करता है। यह केवल एक शिकायत नहीं, बल्कि बदलती संवेदनाओं का प्रमाण है, जहाँ बेटा अपनी गृहस्थी में इतना व्यस्त हो गया है कि माँ उसके जीवन के केंद्र से हट गई है। इसके बाद दादी अम्मा अपने पीछे की कोठरी में जाकर अपने अतीत की स्मृतियों में खो जाती हैं। वे याद करती हैं कि कैसे उन्होंने अपनी बहू के लिए अपना कमरा तक छोड़ दिया था और उसके सुख का पूरा ध्यान रखा था। इससे पता चलता है कि पहले संबंध त्याग और समर्पण पर आधारित थे, जबकि अब उनमें स्वार्थ और अधिकार की भावना बढ़ गई है।

आगे की कहानी से नई पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी के बीच का अंतर भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। जब दादी अम्मा को और एक घटना याद आ जाती है जहां वे अपने पोते की बहू के श्रृंगार को देखकर कहती हैं कि "लड़कियों में यह कैसा चलन है आजकल? बहू के हाथों और पैरों में मेहंदी नहीं रचाई। यही तो पहला सगुन है।"[12] तो यह केवल परंपरा की बात नहीं है बल्कि यह उस दूरी को दिखाता है जो नई और पुरानी सोच के बीच पैदा हो गई है। दादी अम्मा ऐसे ही अपने जीवन के अनेक प्रसंगों को याद करती है जिससे वो और अधिक आहत हो जाती है। धीरे–धीरे दादी अम्मा की स्थिति और भी कमजोर होती जाती है। जब वे बीमार पड़ती हैं और भोजन नहीं करतीं, तब मेहरां को चिंता होती है। वह उनके पास जाकर उनका हाथ पकड़ती है, पर दादी अम्मा उसका हाथ हटा लेती हैं। यह दृश्य दर्शाता है कि वर्षों की उपेक्षा ने उनके मन को इतना आहत कर दिया है कि वे स्नेह को भी सहजता से स्वीकार नहीं कर पातीं। इससे स्पष्ट होता है कि संवेदनाएँ समाप्त नहीं हुई हैं, बल्कि आहत होकर भीतर सिमट गई हैं। अंत में दादी अम्मा का देहांत हो जाता है। अपने अंतिम क्षणों

में भी वे पूरे परिवार को स्नेह से देखती हैं– "अम्मा ने आँखों के झिलमिलाते पर्दे में से अपने पूरे परिवार की ओर देखा–बेटा... बहू... पति... पोते–पतोहू... पोतियाँ। छोटी पतोहू की गुलाबी ओढ़नी जैसे दादी के तन–मन पर बिखर गई। उस ओढ़नी से लगे गोरे–गोरे लाल–लाल बच्चे, हँसते–खेलते, भोली किलकारियाँ...।"[13] यह प्रसंग इस बात का ठोस प्रमाण है कि बुजुर्गों का प्रेम अंत तक बना रहता है। उनके जाने के बाद परिवार को उनके महत्व का एहसास होता है। लोग कहते हैं– "भाग्य हो तो ऐसा, फलता–फूलता परिवार।"[14] परंतु यह कथन एक विडम्बना को भी दर्शाता है, क्योंकि जिस परिवार को बाहर से सुखी माना जा रहा है, उसी के भीतर दादी अम्मा ने उपेक्षा और अकेलेपन का जीवन जिया था। अंत में यह बात उभरकर आती है– "यह सब अम्मा का ही प्रताप है..... वह तो अपनी देह पर के कपड़े बदल गई है....."।[15] इससे स्पष्ट होता है कि दादी अम्मा केवल एक व्यक्ति नहीं थीं, बल्कि पूरे परिवार की आधारशिला थीं।

इस प्रकार "दादी अम्मा" कहानी यह स्पष्ट करती है कि पहले पारिवारिक संबंधों में स्नेह, सम्मान और अपनापन था, लेकिन समय के साथ उनमें दूरी, उपेक्षा और अधिकार की भावना आ गई है। "दादी अम्मा" में जहाँ वृद्धों की उपेक्षा के माध्यम से बदलते संबंधों की संवेदनाएँ सामने आती हैं, वहीं "बहनें" कहानी में यह परिवर्तन बहनों के आपसी संबंधों के माध्यम से व्यक्त होता है।

नवंबर 1952 में लिखी गई "बहनें" कहानी में कृष्णा सोबती ने तीन बहनोंकृ बड़ी, मँझली और छोटी – के माध्यम से पारिवारिक संबंधों की बदलती संवेदनाओं का अत्यंत मार्मिक चित्रण किया है। तीनों बहनें कई वर्षों के बाद बड़ी बहन के बेटे के विवाह में एकत्रित होती हैं। कहानी की शुरुआत ही एक भावुक दृश्य से होती है जहां कृष्णा सोबती लिखती हैं कि "आवेग में ओढ़नियाँ खिसकीं, बाँहें बाँहों से मिलीं और तीनों बहनें गले लग गईं–बड़ी, छोटी और मॅझली। देह से लगी वर्षों की छाया क्षण–भर के लिए अलग जा पड़ी। बचपन, माँ के आँगन और एक–दूसरी से लिपटीं वे तीनों। मीठे सगे दिन पलकों में तैरने लगे और आँखें भींग आईं।"[16] इस मिलन में उनके बचपन की स्मृतियाँ, माँ का आँगन और आपसी स्नेह एक साथ जीवित हो उठते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि पहले उनके संबंधों में गहरी आत्मीयता और निकटता थी। किन्तु आगे इसी के साथ कहानी यह भी संकेत देती है कि अब परिस्थितियाँ बदल चुकी हैं– "घर–आँगन बदल गए, प्यार के नाते बदल गए....."[17] विवाह के बाद तीनों बहनें अलग–अलग घरों में बँट गई हैं और अब उनका मिलना केवल ऐसे अवसरों तक सीमित रह गया है।

बड़ी बहन अपने बेटे के विवाह में अत्यंत प्रसन्न है और पूरे घर की व्यवस्था संभाल रही है। वह अपनी बहनों का ध्यान भी रखती है, पर अब उसके व्यवहार में पहले वाली सहजता के स्थान पर अधिकार और जिम्मेदारी का भाव अधिक दिखाई देता है। छोटी बहन भी यह देखती है कि अब बड़ी सचमुच "मालकिन–सी" लगती है – "आज नाते–रिश्तों से भरे ब्याहवाले घर में बहन सचमुच ही मालकिन–सी लगती है। सगुणों की लाल ओढ़नी में उसका साफ रंग और भी निखर उठा है। चाल में अधिकार है और हृदय में दूल्हे की माँ होने की उमंग।"[18] वहीं दूसरी ओर बचपन में तीनों बहनें एक ही आँगन में बिना किसी भेदभाव के साथ खेलती–बढ़ती थीं। यहाँ यह परिवर्तन स्पष्ट होता है कि पहले जो संबंध समानता और अपनापन लिए हुए थे, अब उनमें भूमिकाओं और पद का प्रभाव बढ़ गया है।

इसी बीच बड़ी बहन की सास का आगमन होता है। वह आते ही बहनों के लाए सामान को देखती है

और मँझली बहन से उसके जीवन से जुड़े प्रश्न पूछने लगती है – "हाँ, मॅझली, तुम भी कुछ सोचो। इस शरीर का क्या पता? हाथ से कोई काम–करम कर डालो। देवर के लड़के को ही गोद लो...।"[19] यह प्रसंग अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यहाँ मँझली बहन की पीड़ा सामने आती है। वह निःसंतान है और इस विषय पर प्रश्न उसके मन को गहराई से आहत करते हैं। वह कुछ कह नहीं पाती, केवल चुप रह जाती है। यहाँ यह स्पष्ट होता है कि पारिवारिक संबंधों में संवेदनशीलता कम हो गई है– जहाँ पहले एक–दूसरे के दुख को समझा जाता था, अब अनजाने में ही उसे और बढ़ा दिया जाता है। छोटी बहन इस स्थिति को समझती है और सास का ध्यान दूसरी ओर मोड़ देती है। इससे यह संकेत मिलता है कि संबंधों में संवेदनाएँ पूरी तरह समाप्त नहीं हुई हैं, पर वे सीमित हो गई हैं और हर व्यक्ति उन्हें निभा नहीं पा रहा है।

विवाह का उत्सव चल रहा होता है और इसी बीच जब मँझली बहन दूल्हे को देखती है, तो वह अनायास ही अपने अतीत की स्मृतियों में खो जाती है। उसे अपना ही विवाह याद आने लगता है और वह क्षण भर के लिए वर्तमान से अलग हो जाती है। वह आसपास के वातावरण के साथ हँसने का प्रयास तो करती है, पर उसकी हँसी में वह सहजता नहीं होती – "पर इस हँसने में जैसे ओठ ही हिलकर रह गए।"[20] इसी मानसिक अवस्था के बावजूद वह स्वयं को संभालती है और वर्तमान में लौटकर दूल्हे के पास जाती है, उसे आशीर्वाद देती है और अपने साथ लाए कपड़े व उपहार बाँटती है – "इस शुभ घड़ी में न दूँगी, तो और कब दूँगी?"[21] यहाँ यह स्पष्ट होता है कि जहाँ एक ओर उसके भीतर अधूरेपन और पीड़ा की भावना है, वहीं दूसरी ओर उसके संबंधों में स्नेह और ममता अभी भी बनी हुई है, परंतु यह ममता एकतरफा रह गई है, क्योंकि उसे समझने और लौटाने वाला कोई नहीं है।

इस बाहरी सहभागिता और भीतर की पीड़ा के साथ मँझली बहन पूरे विवाह समारोह में शामिल तो रहती है, पर उसकी वास्तविक स्थिति विवाह के बाद और अधिक स्पष्ट हो जाती है। जब सब अपने–अपने कार्यों में व्यस्त हो जाते हैं, तब छोटी बहन बड़ी बहन से कहती है कि "बड़ी, मँझली बहन को अकेले देखा नहीं जाता। ससुराल के भरे परिवार में भी वह कितनी अकेली है, यह तुम जानती हो।"[22] यह कथन इस बात को उजागर करता है कि परिवार के बीच रहते हुए भी भावनात्मक जुड़ाव न होने के कारण व्यक्ति भीतर से अकेला रह जाता है। यहाँ यह परिवर्तन स्पष्ट दिखाई देता है कि पहले जहाँ संबंधों में अपनापन और साथ था, वहीं अब वे केवल बाहरी रूप में रह गए हैं और उनकी आंतरिक संवेदनाएँ धीरे–धीरे कमजोर पड़ गई हैं।

इसी अकेलेपन और भीतर के अधूरेपन की अनुभूति के बीच कहानी अपने अंतिम और अत्यंत मार्मिक दृश्य की ओर बढ़ती है। विदा से पहले तीनों बहनें एक साथ बैठती हैं और उनके भीतर दबा हुआ स्नेह तथा दर्द आँसुओं के रूप में बाहर आ जाता है। मँझली बहन अपनी बहू के लिए उपहार देकर अपने स्नेह को व्यक्त करती है, मानो वह अपने खाली जीवन को इस स्नेह के माध्यम से भरना चाहती हो। इसी क्षण उन्हें यह गहरी अनुभूति होती है– "एक माँ की बेटियाँ, पर अब वे एक नहीं–उनके घर एक नहीं, उनके प्यार के नाते एक नहीं। वे तो जैसे एक ही घर–आँगन से उठकर अलग–अलग किनारे जा लगी हैं।"[23] यह कथन पूरी कहानी का सार प्रस्तुत करता है। जहाँ बचपन में उनके संबंध सहज, एकसाथ और भावनात्मक रूप से जुड़े हुए थे, वहीं अब जीवन की परिस्थितियों ने उन्हें अलग–अलग दिशाओं में बाँट दिया है। अब वे चाहकर भी एक–दूसरे के सुख–दुख में पहले की तरह सहभागी नहीं हो सकतीं, जिससे यह स्पष्ट होता है कि समय के साथ पारिवारिक संवेदनाएँ

केवल औपचारिक रह गई हैं और उनकी गहराई कहीं पीछे छूट गई है। "बहनें" कहानी यह स्पष्ट करती है कि समय, परिस्थितियों और सामाजिक भूमिकाओं के बदलने के साथ पारिवारिक संबंधों की संवेदनाएँ भी बदल जाती हैं। पहले जहाँ संबंधों में स्नेह, आत्मीयता और साझा भावनाएँ थीं, वहीं अब उनमें दूरी, अकेलापन और औपचारिकता आ गई है।

कुल मिलाकर, दोनों कहानियों को पढ़ने से यह निष्कर्ष निकलता है कि पारिवारिक संबंधों की मजबूती केवल साथ रहने में नहीं, बल्कि भावनात्मक जुड़ाव में होती है। यदि संवेदनाएँ जीवित रहती हैं, तो दूरी के बावजूद संबंध बने रहते हैं, पर यदि संवेदनाएँ समाप्त हो जाएँ, तो निकटता के बावजूद संबंध कमजोर हो जाते हैं। अंततः ये कहानियाँ हमें यह सोचने के लिए प्रेरित करती हैं कि आधुनिक जीवन की व्यस्तता और बदलती सामाजिक परिस्थितियों के बीच हमें अपने संबंधों में संवेदनशीलता और अपनापन बनाए रखने का प्रयास करना चाहिए, क्योंकि यही किसी भी परिवार की वास्तविक नींव होती है।

संदर्भ सूची :

1. सिंह, अर्चना. (2020). इकाई 10 : परिवार, विवाह और नातेदारी. भारतीय समाजशास्त्र–1 (BSOC–102). इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (इग्नू), ई–ज्ञानकोश, पृष्ठ संख्या –148.
2. वहीं, पृष्ठ संख्या –149.
3. सोबती, कृष्णा. (2017). दादी–अम्मा. बादलों के घेरे (द्वितीय संस्करण). नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 29.
4. वहीं, पृष्ठ संख्या – 34.
5. वहीं, पृष्ठ संख्या – 15.
6. वहीं, पृष्ठ संख्या – 29.
7. वहीं, पृष्ठ संख्या – 34.
8. वहीं, पृष्ठ संख्या – 30.
9. वहीं, पृष्ठ संख्या – 31.
10. वहीं, पृष्ठ संख्या – 35.
11. वहीं, पृष्ठ संख्या – 32.
12. वहीं, पृष्ठ संख्या – 35.
13. वहीं, पृष्ठ संख्या – 40.
14. वहीं, पृष्ठ संख्या – 40.
15. वहीं, पृष्ठ संख्या – 43.
16. सोबती, कृष्णा. (2017). बहनें. बादलों के घेरे (द्वितीय संस्करण). नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 54.
17. वहीं, पृष्ठ संख्या – 54.
18. वहीं, पृष्ठ संख्या – 55.
19. वहीं, पृष्ठ संख्या – 56.
20. वहीं, पृष्ठ संख्या – 58.
21. वहीं, पृष्ठ संख्या – 59.
22. वहीं, पृष्ठ संख्या – 60.
23. वहीं, पृष्ठ संख्या – 62.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 147-154

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

From Battle of Mandan to Rezang La : The Evolution of Martial Identity in AHIRWAL

Vaibhav Yadav

Research Scholar, NET JRF

Department of History, Chaudhary Charan Singh University, Meerut, Uttar Pradesh.

Abstract :

This research paper critically examines the socio-political and military evolution of the Ahirwal region in Southern Haryana. Spanning from the late 18th century to the mid-20th century, the study investigates the transition of the Ahir community from regional power-brokers to a central pillar of India's national defense. By analyzing three definitive milestones—the Battle of Mandan (1775), the revolutionary resistance of 1857 under Rao Tula Ram, and the legendary stand at Rezang La (1962)—the paper argues that Ahirwal's martial identity is a result of historical continuity and an ingrained culture of professional soldiering. The research utilizes primary gazetteers and secondary historical scholarly works to establish that the region's identity is inextricably linked to its unique legacy of valor and sacrifice.

Keywords *: Ahirwal, Martial Identity, Rao Tula Ram, Rezang La, 1857 Uprising, Southern Haryana, 13 Kumaon, Military History, Battle of Mandan.*

Introduction :

The region of Ahirwal is a distinct ethno-geographic and cultural tract that transcends modern state boundaries, encompassing a large part of

Southern Haryana and North-Eastern Rajasthan. Historically and culturally, Ahirwal is defined as the "Abode of the Ahirs," spanning primarily across the districts of Rewari, Mahendragarh (Narnaul), Gurugram (Gurgaon), and Jhajjar in Haryana, and extending significantly into the Alwar and Bharatpur districts of Rajasthan (Yadav, 2001)[1].The geographical definition of Ahirwal is explicitly supported by the *Imperial Gazetteer of India (1908)*[2], which identifies the Rewari and Alwar belt as the core of the Ahir-dominated landscape. Furthermore, historian K.C. Yadav (2001) and the *Punjab District Gazetteers (1883)*[3] acknowledge that the social and political influence of the Ahir clans, particularly under the Rampura (Rewari) lineage, unified these scattered districts into a singular cultural identity. This region has transitioned from a collection of agrarian settlements into one of India's most significant "martial landscapes," forged through centuries of resistance against imperial powers (Singh, 2001)[4].

Objectives of the Study :

The primary objectives of this research paper are as follows :

- To trace the historical origins of the martial identity in the Ahirwal region starting from the late 18th century.
- To analyze the role of Rao Tula Ram and the Ahirwal forces in the 1857 Indian Uprising as a catalyst for nationalistic martial identity.
- To evaluate the impact of British "Martial Race" recruitment policies on the institutionalization of military traditions in Southern Haryana.
- To examine the Battle of Rezang La (1962) as the zenith of Ahirwal's military contribution to post-independence India.

Research Methodology :

This study employs a Qualitative Historical Research Methodology by utilising a multi-disciplinary approach to gather data:

Primary Sources **:** Analysis of the Imperial District Gazetteers (Gurgaon and Rohtak, 1883) and official military citations and war diaries of the 13 Kumaon Regiment.

Secondary Sources **:** A comprehensive review of scholarly books, academic journals, and historical records by renowned historians such as K.C. Yadav, Rima Hooja, and Rajit K. Mazumder.

Chronological Mapping **:** The study is structured chronologically to demonstrate the evolution of identity across three distinct centuries (18th, 19th, and 20th).

Thematic Synthesis **:** Data has been synthesized to link regional socio-political changes with broader national military history.

The Genesis of Sovereignty : The Battle of Mandan (1775)

The formal establishment of Ahirwal as a sovereign military entity took place during the turbulent decline of the Mughal Empire. As the central authority in Delhi weakened, regional chieftains in Southern Haryana began to carve out autonomous principalities. Among the most prominent was Sardar Mitrasen Ahir of Rewari, who sought to consolidate Ahir power against the expansionist designs of the neighboring Rajput confederacies.

The Battle of Mandan in 1775 served as the foundational conflict for this new state. Mitrasen's forces engaged the Shekhawat chiefs and the Kachwaha forces of Jaipur in a brutal contest for territorial control. According to Rima Hooja (2006)[5], Mitrasen's tactical brilliance at Mandan did more than just secure the borders; it provided the Ahir rulers with "martial legitimacy." This victory signaled to the northern imperial powers that Ahirwal was no longer a mere collection of villages but a disciplined military state. This period, often described as the 'Twilight of the Mughals,' allowed Ahirwal to develop its

own administrative and military infrastructure, setting the stage for its future role in national history (Spear, 1951)[6].

The Resistance of 1857 : Rao Tula Ram and the Battle of Narnaul :

By the mid-19th century, the British East India Company had become the dominant force in India, but Ahirwal remained a bastion of independent spirit. The 1857 Uprising saw the martial identity of Ahirwal transform from regional preservation to a broader nationalistic struggle. The central figure of this era was Rao Tula Ram, the ruler of Rewari, who emerged as a master strategist and a symbol of anti-colonial defiance.

Tula Ram's contribution was unique because he moved beyond traditional warfare. He established a sophisticated armory at the Rampura Fort, where his workers manufactured modern cannons and gunpowder, a feat that shocked the British observers (Yadav, 2001)[7]. The climax of his resistance was the Battle of Narnaul (Nasibpur) on November 16, 1857. Tula Ram's army, joined by rebel units from Gwalior and Delhi, fought with such ferocity that the British commander, Colonel Gerard, was killed on the battlefield. Historical records in the *District Gazetteer of Gurgaon (1883)*[8] note that the Ahirwal soldiers fought with a "reckless disregard for life" that nearly turned the tide of the rebellion in the region. Although the British ultimately prevailed due to their superior artillery, Tula Ram's escape to Afghanistan to seek international aid against the British remains a testament to the sophisticated military and political vision inherent in Ahirwal's leadership.

Institutionalization : The "Martial Race" and Global Theaters :

Following the suppression of the 1857 Uprising, the British colonial administration underwent a strategic shift in its recruitment policy, officially categorizing the Ahirs as a 'Martial Race.' This classification was based on the Victorian military belief that certain ethnic groups possessed innate courage

and physical endurance suitable for warfare. The most definitive proof of this institutionalization is found in the official military manual, *Handbooks for the Indian Army: Ahirs, Jats, and Gujars,* authored by Captain A.H. Bingley (1898)[9] . Bingley documented the Ahirs as an 'excellent soldiers' with remarkable loyalty and discipline. This recognition led to their large-scale induction into specialized units such as the Hyderabad Contingent and later the Kumaon and Rajput Regiments. As argued by Rajit K. Mazumder (2003)[10], this policy transformed the local warrior spirit of Ahirwal into a professionalized military tradition, making soldiering a hallmark of social prestige across the region.

As noted by historian Rajit K. Mazumder (2003), this era modernized the local martial ethos. Thousands of young men from villages like Kosli, Kanina, and Rewari were deployed to the trenches of France, the deserts of the Middle East, and the jungles of Burma. This global exposure professionalized the Ahir soldier. They were no longer fighting for local feudal lords but were part of a modern, disciplined military machine. By the time India achieved independence in 1947, the "Soldier-Citizen" had become the primary identity of the Ahirwal male, with military service being the most prestigious occupation in the region (Mittals, 1986)[11].

The Zenith of Valor : The Legend of Rezang La (1962) :

The ultimate manifestation of Ahirwal's martial identity occurred on November 18, 1962, during the Sino-Indian War. The Charlie Company of the 13 Kumaon Regiment was stationed at Rezang La, a high-altitude pass at 18,000 feet. This company was unique as it was composed of a majority of 120 soldiers from the Ahirwal region of Southern Haryana.

Under the command of Major Shaitan Singh, these men faced a massive onslaught by approximately 5,000 Chinese troops. The odds were 1 to 40. Deprived of artillery support and fighting in -30°C temperatures, the soldiers of Ahirwal engaged in a "last man, last bullet" defense. According to Kulpreet Yadav (2021)[12], the battle was so intense that when the bodies were

recovered months later, they were found still clutching their weapons, having fought hand-to-hand after running out of ammunition. 114 out of 120 soldiers were martyred, but they had successfully decimated over 1,300 enemy troops, halting the Chinese advance toward the Chushul Valley. This battle immortalized the martial spirit of Ahirwal on the global stage, proving that the bravery of Mandan and Narnaul was alive and well in the modern era (Saksena, 1985)[13].

Conclusion :

The evolution of martial identity in Ahirwal is a saga of continuous resilience. From the local sovereignty established in the 18th century to the nationalistic fervor of the 19th century and the professional heroism of the 20th century, the region has consistently served as a shield for the nation. This identity is deeply rooted in the socio-cultural fabric of Ahirwal region, where every village tells a story of a martyr or a decorated veteran. As this paper has demonstrated through chronological analysis, the history of Ahirwal is not just about battles; it is about a civilizational commitment to valor that continues to provide the Indian Armed Forces with its most dedicated soldiers.

ENDNOTES :

1. Yadav, K. C. (2001). *The Revolt of 1857 in Haryana*. New Delhi: Manohar Publishers.
2. Imperial Gazetteer of India. (1908). Volume XXI: Pushkar to Salween. Oxford: Clarendon Press.[1,2]
3. District Gazetteer of Gurgaon. (1883). Imperial Record of the Punjab Government. Lahore: Civil and Military Gazette Press.
4. Singh, B. (2001). The Heritage of Haryana. Chandigarh:

   Publication Bureau, Panjab University.
5. Hooja, R. (2006). A History of Rajasthan. New Delhi: Rupa & Co.

6. Spear, P. (1951). Twilight of the Mughuls: Studies in Late Mughul Delhi. Cambridge University Press.
7. Yadav, K. C. (2001). The Revolt of 1857 in Haryana. New Delhi: Manohar Publishers.
8. District Gazetteer of Gurgaon. (1883). Imperial Record of the Punjab Government. Lahore: Civil and Military Gazette Press.
9. Bingley, A. H. (1898). Handbooks for the Indian Army: Ahirs, Jats, and Gujars. Calcutta: Office of the Superintendent of Government Printing, India.
10. Mazumder, R. K. (2003). The Indian Army and the Making of Punjab. Delhi: Permanent Black.
11. Mittals, S. C. (1986). Haryana: A Historical Perspective. New Delhi: Atlantic Publishers.
12. Yadav, K. (2021). The Battle of Rezang La. Gurugram: Penguin Random House India.
13. Saksena, N. S. (1985). India's Wars Since Independence. New Delhi: Vikas Publishing House.

REFERENCES :

- Yadav, K. C. (2001). The Revolt of 1857 in Haryana. New Delhi: Manohar Publishers.
- Imperial Gazetteer of India. (1908). Volume XXI: Pushkar to Salween. Oxford: Clarendon Press.[1,2]
- District Gazetteer of Gurgaon. (1883). Imperial Record of the Punjab Government. Lahore: Civil and Military Gazette Press.
- Hooja, R. (2006). A History of Rajasthan. New Delhi: Rupa & Co.

- Spear, P. (1951). Twilight of the Mughuls: Studies in Late Mughul Delhi. Cambridge University Press.
- Bingley, A. H. (1898). Handbooks for the Indian Army: Ahirs, Jats, and Gujars. Calcutta: Office of the Superintendent of Government Printing, India.
- Mazumder, R. K. (2003). The Indian Army and the Making of Punjab. Delhi: Permanent Black.
- Mittals, S. C. (1986). Haryana: A Historical Perspective. New Delhi: Atlantic Publishers.
- Yadav, K. (2021). The Battle of Rezang La. Gurugram: Penguin Random House India.
- Saksena, N. S. (1985). India's Wars Since Independence. New Delhi: Vikas Publishing House.
- Juneja, M. M. (1989). History of Haryana (1857-1966). Hisar: Modern Book Publications.
- Singh, B. (2001). The Heritage of Haryana. Chandigarh: Publication Bureau, Panjab University.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 155-162

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

अमेरिका–ईरान युद्ध का भारत की अर्थव्यवस्था, ऊर्जा सुरक्षा और विदेश नीति पर प्रभाव

डॉ. समय दीन गुप्ता

सहायक प्राध्यापक, रक्षा एवं स्त्रातेजिक अध्ययन विभाग,

वी.एस.एस.डी. कॉलेज, कानपुर नगर, उत्तर प्रदेश, भारत।

सारांश :

अमेरिका और ईरान के बीच हुए सैन्य संघर्ष ने न केवल क्षेत्रीय सीमाओं को प्रभावित किया है, बल्कि वैश्विक अर्थव्यवस्था और भू–राजनीतिक संतुलन को भी गंभीर संकट में डाल दिया है। इस शोध पत्र का उद्देश्य इस संघर्ष के कारण भारत की अर्थव्यवस्था, ऊर्जा सुरक्षा तथा विदेश नीति पर पड़ने वाले वास्तविक बहुआयामी प्रभावों का विश्लेषण करना है। 2026 के आंकड़ों के अनुसार, कच्चे तेल की वैश्विक कीमतों में तीव्र वृद्धि और होर्मुज जलडम : मध्य (Strait of Hormuz) में आपूर्ति श्रृंखला के व्यवधान ने भारत के आयात बिल पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है, जिससे भारत का व्यापार घाटा रिकॉर्ड 333.2 बिलियन डॉलर तक पहुंच गया है। अध्ययन में गुणात्मक पद्धति और वित्तीय वर्ष 2026 के सरकारी आंकड़ों का उपयोग करते हुए यह निष्कर्ष निकाला गया है कि भारत के लिए ऊर्जा आपूर्ति में व्यवधान एक गंभीर चुनौती बन गया है, जिसने मुद्रास्फीति और चालू खाता घाटे (CAD) को प्रभावित किया है। शोध यह स्पष्ट करता है कि इस जटिल दौर में भारत ने अपनी रणनीतिक स्वायत्तता को बनाए रखने के लिए ऊर्जा स्रोतों के विविधीकरण और बहुपक्षीय कूटनीति का मार्ग अपनाया है। अंततः, यह शोध पत्र उन नीतिगत प्राथमिकताओं का सुझाव देता है जो भारत को भविष्य में ऐसी अनिश्चितताओं के प्रति अधिक लचीला और आत्मनिर्भर बनाने में सहायक हो सकती हैं।

मुख्य शब्द : अमेरिका–ईरान संघर्ष, भारतीय अर्थव्यवस्था, ऊर्जा सुरक्षा, व्यापार घाटा, विदेश नीति, भू–राजनीति, ऊर्जा विविधीकरण, रणनीतिक स्वायत्तता।

परिचय :

समकालीन वैश्विक राजनीति और आर्थिक ढांचा आज पहले से कहीं अधिक गहराई से एक–दूसरे के साथ गुंथे हुए हैं। इस परस्पर निर्भरता के युग में, पश्चिम एशिया में घटने वाली कोई भी भू–राजनीतिक घटना विश्व के अनेक देशों पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से व्यापक प्रभाव डालती है। ईरान, जो अपनी सामरिक भौगोलिक स्थिति और विशाल ऊर्जा संसाधनों के कारण लंबे समय से वैश्विक शक्ति प्रतिस्पर्धा का केंद्र रहा है, 2026 में अमेरिका के साथ सीधे सैन्य टकराव के कारण चर्चा में है। यह संघर्ष केवल दो देशों की सीमाओं तक सीमित नहीं है, बल्कि इसने अंतरराष्ट्रीय ऊर्जा आपूर्ति श्रृंखलाओं, समुद्री व्यापार मार्गों और वैश्विक कूटनीतिक

समीकरणों को हिलाकर रख दिया है।



स्रोत : https://www.bbc-com/hindi/articles/cpd1v0ngp83o

भारत के संदर्भ में, जो विश्व की सबसे तेजी से बढ़ती प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में से एक है, यह स्थिति अत्यंत महत्वपूर्ण है। देश अपनी कच्चे तेल की जरूरतों का एक बड़ा हिस्सा आयात करता है, जिसमें पश्चिम एशियाई देशों की भूमिका निर्णायक रही है। वर्ष 2026 के दौरान उत्पन्न इस अस्थिरता ने न केवल भारत की ऊर्जा सुरक्षा के लिए नई चुनौतियां पैदा की हैं, बल्कि देश की आर्थिक स्थिरता को भी सीधे तौर पर प्रभावित किया है। अंतरराष्ट्रीय बाजारों में तेल की कीमतों की अनिश्चितता और होर्मुज जलडमरूमध्य में उत्पन्न तनाव ने भारतीय नीति निर्माताओं के लिए एक कठिन परीक्षा की स्थिति निर्मित कर दी है।

विदेश नीति के स्तर पर भी यह दौर भारत के लिए संतुलन, स्वायत्तता और क्षेत्रीय सहयोग के बीच समन्वय स्थापित करने का रहा है। एक तरफ भारत के अमेरिका के साथ रणनीतिक, रक्षा और आर्थिक संबंध गहरे हुए हैं, तो दूसरी तरफ ईरान के साथ उसकी ऐतिहासिक ऊर्जा और सांस्कृतिक भागीदारी भी अनिवार्य बनी हुई है। इस जटिल परिदृश्य में, भारत द्वारा अपनाई गई सक्रिय कूटनीति और ऊर्जा विविधीकरण की रणनीतियां न केवल राष्ट्रीय हितों की रक्षा के लिए आवश्यक हैं, बल्कि वैश्विक मंच पर एक संतुलित भूमिका निभाने की उसकी प्रतिबद्धता को भी दर्शाती हैं। यह शोध पत्र इसी विषय के इर्द–गिर्द घूमता है कि कैसे इन बदलते अंतरराष्ट्रीय समीकरणों ने भारत को अपनी नीतिगत प्राथमिकताओं को फिर से परिभाषित करने और अधिक लचीला रुख अपनाने के लिए प्रेरित किया है।



अनुसंधान के उद्देश्य :

इस शोध का मुख्य लक्ष्य 2026 में हुए अमेरिका–ईरान संघर्ष की परिस्थितियों में भारत पर पड़ने वाले व्यापक प्रभावों का समग्र विश्लेषण करना है। यह अध्ययन आर्थिक, ऊर्जा और कूटनीतिक आयामों को केंद्र में रखकर निम्नलिखित उद्देश्यों को स्पष्ट करता है :

- **आर्थिक प्रभावों का मात्रात्मक विश्लेषण :** इस अध्ययन का एक प्रमुख उद्देश्य यह जांचना है कि किस प्रकार 2026 के संघर्ष ने वैश्विक तेल कीमतों में उतार–चढ़ाव, आयात लागत में वृद्धि और भारत के चालू खाता घाटे (CAD) पर प्रत्यक्ष प्रभाव डाला है।
- **ऊर्जा सुरक्षा की चुनौतियों का मूल्यांकन :** शोध का उद्देश्य पश्चिम एशिया में उत्पन्न अस्थिरता के कारण भारत की ऊर्जा आपूर्ति श्रृंखला, कच्चे तेल की आयात निर्भरता और देश के रणनीतिक पेट्रोलियम भंडारों (SPR) पर पड़ने वाली चुनौतियों का आकलन करना है।
- **विदेश नीति की स्वायत्तता का अध्ययन :** यह उद्देश्य भारत द्वारा अपनाई गई संतुलित विदेश नीति के उन पहलुओं का विश्लेषण करता है, जो अमेरिका और ईरान के साथ द्विपक्षीय संबंधों को बनाए रखने और राष्ट्रीय हितों की रक्षा करने में मददगार साबित हुए हैं।
- **वैश्विक भू-राजनीतिक परिवर्तनों में भारत की भूमिका :** अध्ययन यह समझने का प्रयास करता है कि बदलते अंतरराष्ट्रीय समीकरणों में भारत किस प्रकार 'सक्रिय कूटनीति' (Proactive Diplomacy) का उपयोग करके वैश्विक ऊर्जा संकट के दौरान अपनी स्थिति को सुदृढ़ कर सकता है।
- **व्यावहारिक नीतिगत सुझावों का निरूपण :** शोध का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य ऐसे प्रभावी और व्यावहारिक नीतिगत सुझाव प्रस्तुत करना है, जो भविष्य में किसी भी क्षेत्रीय संघर्ष की स्थिति में भारत की आर्थिक और ऊर्जा–संबंधी जोखिमों को न्यूनतम करने में सहायक हो सकें।



अनुसंधान पद्धति :

इस शोध में अमेरिका–ईरान संघर्ष 2026 के भारत पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण करने हेतु एक व्यवस्थित और बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाया गया है। अध्ययन का स्वरूप मुख्य रूप से विश्लेषणात्मक है, जिसमें समकालीन डेटा के व्याख्यात्मक विश्लेषण का उपयोग किया गया है, ताकि आर्थिक, ऊर्जा और

कूटनीतिक आयामों की जटिलताओं को गहराई से समझा जा सके।

1. **अनुसंधान का स्वरूप :** यह अध्ययन वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक प्रकृति का है। इसमें 2026 की वर्तमान वैश्विक परिस्थितियों, नीतिगत परिवर्तनों तथा संभावित आर्थिक परिदृश्यों का तार्किक विश्लेषण किया गया है, जिससे कारणदृपरिणाम संबंधों को स्पष्ट रूप से समझा जा सके।

2. **डेटा स्रोत :** शोध में मुख्य रूप से प्रामाणिक द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है। डेटा संकलन के लिए निम्नलिखित विश्वसनीय माध्यमों को आधार बनाया गया है :

- अंतरराष्ट्रीय वित्तीय और ऊर्जा संस्थानों (जैसे IMF, विश्व बैंक, IEA) की नवीनतम रिपोर्टें।
- भारत सरकार के आधिकारिक पोर्टल, सांख्यिकीय डेटाबेस और वित्त मंत्रालय के नीतिगत दस्तावेज।
- विश्वसनीय वैश्विक और भारतीय समाचार समूहों द्वारा प्रकाशित विशेष आर्थिक रिपोर्ट।
- विषय विशेषज्ञों द्वारा हाल ही में प्रकाशित शोध लेख और समकालीन नीति विश्लेषण।

3. **डेटा विश्लेषण विधि :** संग्रहीत जानकारी का विश्लेषण 'विषयवस्तु विश्लेषण' और 'तुलनात्मक पद्धति' के माध्यम से किया गया है। इसमें संघर्ष से उत्पन्न विभिन्न चरणों 'जैसे शुरुआती तनाव, आपूर्ति श्रृंखला में बाधाएं और कूटनीतिक प्रतिक्रिया' का तुलनात्मक अध्ययन कर उनके प्रत्यक्ष आर्थिक प्रभावों का मूल्यांकन किया गया है।

4. **सैद्धांतिक ढाँचा :** अध्ययन को अंतरराष्ट्रीय संबंधों के 'यथार्थवादी दृष्टिकोण' और वैश्विक आर्थिक परस्पर निर्भरता के सिद्धांतों के साथ जोड़ा गया है। यह ढाँचा यह समझने में सक्षम बनाता है कि कैसे भू–राजनीतिक संघर्ष सीधे तौर पर राष्ट्रीय ऊर्जा सुरक्षा और राजकोषीय नीति को प्रभावित करते हैं।

5. **शोध की सीमाएँ :** यह शोध वर्तमान में उपलब्ध द्वितीयक डेटा पर केंद्रित है। चूंकि युद्ध जैसी स्थितियां अत्यधिक गतिशील और अनिश्चित होती हैं, इसलिए विश्लेषण का एक भाग बदलते वैश्विक घटनाक्रमों पर निर्भर करता है। हालांकि, पूरी कोशिश की गई है कि डेटा का विश्लेषण निष्पक्ष और सटीक रहे।

अमेरिका–ईरान संघर्ष की पृष्ठभूमि :

अमेरिका और ईरान के बीच तनावपूर्ण संबंधों का इतिहास सात दशकों से अधिक पुराना है, जिसकी जड़ें 20वीं सदी के मध्य में खोजी जा सकती हैं। इन संबंधों में उतार–चढ़ाव का मुख्य केंद्र बिंदु राजनीतिक सत्ता का नियंत्रण, ऊर्जा संसाधनों का स्वामित्व और वैश्विक भू–राजनीतिक वर्चस्व रहा है।

ऐतिहासिक घटनाक्रम :

1. **1953 का तख्तापलट :** संबंधों में पहली बड़ी दरार 1953 में आई, जब ईरान के लोकतांत्रिक रूप से चुने गए प्रधानमंत्री मोहम्मद मोसादेघ ने ब्रिटिश तेल कंपनी के राष्ट्रीयकरण का प्रयास किया। उस समय अमेरिका की सीआईए (CIA) और ब्रिटेन ने मिलकर मोसादेघ की सरकार को सत्ता से बेदखल कर दिया, जिससे ईरान में शाह मोहम्मद रजा पहलवी का एकछत्र शासन स्थापित हुआ।

2. **1979 की इस्लामी क्रांति :** यह घटना अमेरिका–ईरान संबंधों के लिए एक निर्णायक मोड़ साबित हुई। अयातुल्लाह खुमैनी के नेतृत्व में हुई इस क्रांति ने शाह के शासन को समाप्त कर दिया और तेहरान में एक कट्टरपंथी इस्लामी गणराज्य की स्थापना हुई। तेहरान स्थित अमेरिकी दूतावास में हुए बंधक संकट (444 दिनों

तक) ने दोनों देशों के बीच अविश्वास की खाई को और गहरा कर दिया।

3. 1980 के दशक का संघर्ष : ईरान–इराक युद्ध के दौरान, अमेरिका ने परोक्ष रूप से इराक का समर्थन किया, जिसने दोनों देशों के बीच कटुता को और बढ़ा दिया। इसी दशक में 'टैंकर युद्ध' (Tanker War) की घटनाएं भी हुई थीं, जिसमें अमेरिकी नौसेना सीधे तौर पर शामिल हुई।

तनाव के आधुनिक कारण : दशकों से चली आ रही यह रंजिश 21वीं सदी में नए आयामों तक पहुंच गई। 2015 के परमाणु समझौते (JCPOA) से 2018 में अमेरिका की वापसी और ईरान पर लगाए गए 'अधिकतम दबाव' (Maximum Pressure) अभियान ने स्थिति को अत्यधिक विस्फोटक बना दिया। इसके अलावा, सीरिया, यमन और इराक जैसे देशों में दोनों देशों की अलग–अलग रणनीतिक प्राथमिकताएं और छद्म युद्धों (Proxy Wars) ने तनाव को और अधिक जटिल बना दिया।

2026 की परिणति : हाल के वर्षों में, विशेष रूप से 2026 की शुरुआत में, क्षेत्रीय सैन्य टकराव की घटनाओं और शीर्ष नेतृत्व के बीच हुई सीधी तनातनी ने इस दशकों पुराने तनाव को प्रत्यक्ष सैन्य संघर्ष में बदल दिया है। वर्तमान सैन्य कार्रवाई और होर्मुज जलडमरूमध्य की नाकाबंदी जैसी घटनाएं इस बात का प्रमाण हैं कि यह संघर्ष अब केवल वैचारिक या छद्म युद्ध तक सीमित न रहकर पूर्णतः वास्तविक सैन्य टकराव में परिवर्तित हो चुका है। समग्र रूप से, यह संघर्ष केवल दो देशों के बीच का विवाद नहीं है, बल्कि यह सामरिक हितों, वैचारिक भिन्नताओं और वैश्विक ऊर्जा वर्चस्व की एक लंबी और जटिल कड़ियों का परिणाम है।

परिणाम एवं विश्लेषण :

अमेरिका–ईरान के बीच 2026 में हुए सैन्य संघर्ष ने भारतीय अर्थव्यवस्था और कूटनीति के लिए एक अभूतपूर्व संकट उत्पन्न कर दिया है। इसका प्रभाव केवल तेल कीमतों तक सीमित न रहकर देश की समष्टि आर्थिक स्थिरता (Macro-economic stability) तक फैल गया है।

1. भारत की अर्थव्यवस्था पर प्रभाव :

संघर्ष के कारण वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला बाधित हुई है, जिसका प्रत्यक्ष परिणाम भारत के रिकॉर्ड व्यापार घाटे और मुद्रास्फीति में देखा जा रहा है।

तालिका 1 : संघर्ष के आर्थिक प्रभाव (आंकड़े 2026 के संदर्भ में)

उप–आयाम	प्रमुख प्रभाव	वास्तविक स्थिति (2026)
व्यापार घाटा (Trade Deficit)	आयात बिल में भारी वृद्धि	रिकॉर्ड +333.2 बिलियन तक पहुंच गया
मुद्रास्फीति (Inflation)	ईंधन एवं परिवहन लागत में उछाल	7% से ऊपर के स्तर पर दबाव
मुद्रा (INR)	डॉलर के मुकाबले रुपये में कमजोरी	रू. 92 प्रति डॉलर के आसपास अस्थिरता
निवेश (FDI/FPI)	अनिश्चितता के कारण पूंजी निकासी	विदेशी निवेशकों का सतर्क रुख

2. ऊर्जा सुरक्षा पर प्रभाव :

भारत अपनी ऊर्जा जरूरतों का लगभग 85 प्रतिशत आयात करता है। संघर्ष ने उन समुद्री मार्गों को असुरक्षित बना दिया है जो खाड़ी देशों से तेल लाते हैं।

तालिका 2 : ऊर्जा सुरक्षा : जोखिम और निवारण

चुनौती	प्रभाव	सरकार की रणनीतिक प्रतिक्रिया
आपूर्ति में बाधा	होर्मुज जलडमरूमध्य की नाकाबंदी	वैकल्पिक देशों (अफ्रीका/LATAM) से आयात
रणनीतिक भंडार	तेल उपलब्धता में कमी	रणनीतिक पेट्रोलियम भंडार का उपयोग
ऊर्जा विविधीकरण	गैस आयात पर निर्भरता	नवीकरणीय ऊर्जा और इथेनॉल मिश्रण में तेजी

3. विदेश नीति की चुनौतियां :

भारत के लिए यह संघर्ष 'रणनीतिक स्वायत्तता' की सबसे बड़ी परीक्षा है। एक ओर अमेरिका के साथ गहरे रक्षा संबंध हैं, तो दूसरी ओर ईरान के साथ ऐतिहासिक ऊर्जा और कनेक्टिविटी संबंध हैं।

तालिका 3 : विदेश नीति का संतुलन (बहुपक्षीय दृष्टिकोण)

उद्देश्य	चुनौतियां	रणनीतिक रूख
संतुलन (Balancing)	अमेरिका–ईरान के बीच दबाव	तटस्थ और शांति–समर्थक दृष्टिकोण
क्षेत्रीय सुरक्षा	प्रवासी श्रमिकों की सुरक्षा	सक्रिय कूटनीति और निकासी योजनाएं
कूटनीतिक संवाद	साझा मंचों पर मतभेद	बैक–चौनल वार्ता और बहुपक्षीय संवाद

4. समेकित विश्लेषण :

इन तीनों आयामों का संयुक्त विश्लेषण यह स्पष्ट करता है कि भारत के लिए यह संघर्ष केवल एक बाह्य घटना नहीं, बल्कि एक 'बहुआयामी आर्थिक जोखिम' है। ऊर्जा लागत में वृद्धि ने सीधे तौर पर राजकोषीय घाटे को प्रभावित किया है, जिसके कारण सरकार को सब्सिडी प्रबंधन में बदलाव करने पड़े हैं।

तालिका 4 : समेकित प्रभाव विश्लेषण

अर्थव्यवस्था	उच्च	CAD और मुद्रास्फीति का दबाव
ऊर्जा	अत्यधिक उच्च	आपूर्ति श्रृंखला की सुरक्षा
कूटनीति	मध्यम–उच्च	राष्ट्रीय हितों और वैश्विक दबाव में संतुलन

समेकित दृष्टिकोण यह दिखाता है कि 2026 का संकट भारत को अपनी ऊर्जा नीति में 'आत्मनिर्भरता' और विदेश नीति में 'सक्रिय कूटनीति' अपनाने के लिए मजबूर कर रहा है। संघर्ष के इस दौर में भारत की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि वह कितनी कुशलता से अपने ऊर्जा स्रोतों का विविधीकरण करता है और वैश्विक मंच पर संवाद के माध्यम से अपनी स्थिति को सुरक्षित रखता है।

निष्कर्ष :

अमेरिका–ईरान के बीच में हुआ सैन्य संघर्ष भारत के लिए केवल एक बाह्य भू–राजनीतिक तनाव नहीं, बल्कि एक बहुआयामी और जटिल चुनौती के रूप में उभरा है। इस शोध के माध्यम से यह स्पष्ट हुआ है कि वैश्विक ऊर्जा बाजार में उत्पन्न हुई अस्थिरता और होर्मुज जलडमरूमध्य में पैदा हुए अवरोधों ने भारतीय अर्थव्यवस्था की संरचनात्मक कमजोरियों को उजागर किया है। रिकॉर्ड स्तर पर पहुंचे व्यापार घाटे और मुद्रास्फीति के दबाव ने यह सिद्ध कर दिया है कि ऊर्जा आयात पर अत्यधिक निर्भरता भारत की आर्थिक संप्रभुता

के लिए दीर्घकालिक जोखिम बनी हुई है।

आर्थिक और ऊर्जा सुरक्षा के साथ–साथ, यह संघर्ष भारत की विदेश नीति के लिए एक कठिन परीक्षा रहा है। एक तरफ अमेरिका के साथ रणनीतिक रक्षा साझेदारी को बनाए रखना और दूसरी तरफ ईरान के साथ ऊर्जा एवं कनेक्टिविटी संबंधों को संरक्षित करना, भारत की 'रणनीतिक स्वायत्तता' की परिपक्वता को दर्शाता है। यह स्पष्ट है कि भारत की सक्रिय कूटनीति, जिसमें विभिन्न स्तरों पर किए गए मंत्री–स्तरीय संवाद और वैश्विक शांति का आह्वान शामिल है, एक व्यावहारिक नीति–निर्माण का उत्कृष्ट उदाहरण है।

अंततः, यह शोध यह निष्कर्ष निकालता है कि 2026 की यह चुनौतीपूर्ण स्थिति भारत के लिए जोखिम के साथ–साथ एक सुधारात्मक अवसर भी लेकर आई है। यदि भारत अपनी ऊर्जा नीति में नवीकरणीय ऊर्जा के विस्तार को प्राथमिकता देता है, अपने रणनीतिक पेट्रोलियम भंडारों को सुदृढ़ करता है और कूटनीतिक स्तर पर बहुपक्षीय संवाद को और अधिक प्रगाढ़ बनाता है, तो वह न केवल इस संकट से उबर सकता है, बल्कि भविष्य के लिए एक अधिक आत्मनिर्भर और सुरक्षित ढांचा तैयार करने में भी सफल होगा। भविष्य की नीतियां जितनी अधिक 'समन्वित और दूरदर्शी' होंगी, भारत उतनी ही मजबूती से वैश्विक मंच पर अपने राष्ट्रीय हितों की रक्षा करने में सक्षम होगा।

संदर्भ :

- अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF). (2023). विश्व आर्थिक परिदृश्य रिपोर्ट (World Economic Outlook). उपलब्ध : https://www.imf.org
- विश्व बैंक (World Bank). (2023). वैश्विक आर्थिक संभावनाएँ (Global Economic Prospects). उपलब्ध : https://www.worldbank.org
- अंतरराष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी (IEA). (2023). विश्व ऊर्जा दृष्टिकोण (World Energy Outlook). उपलब्ध : https://www.iea.org
- भारत सरकार, पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस मंत्रालय. (2023). वार्षिक रिपोर्ट. उपलब्ध : https://mopng.gov.in
- भारत सरकार, वित्त मंत्रालय. (2023). आर्थिक सर्वेक्षण (Economic Survey of India). उपलब्ध : https://www.indiabudget.gov.in
- रॉयटर्स. (2024). ईरान तनाव के कारण तेल कीमतों में वृद्धि और भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव. उपलब्ध : https://www.reuters.com
- द गार्जियन. (2024). पश्चिम एशिया संघर्ष और वैश्विक आर्थिक अस्थिरता पर रिपोर्ट. उपलब्ध : https://www.theguardian.com
- टाइम्स ऑफ इंडिया. (2024). पश्चिम एशिया संकट के कारण भारत में बढ़ती लागत और मुद्रास्फीति. उपलब्ध : https://timesofindia.indiatimes.com
- वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम. (2024). ऊर्जा संकट और भारत के औद्योगिक क्षेत्रों पर प्रभाव. उपलब्ध : https://www.weforum.org

- इंडिया ब्रीफिंग. (2024). ईरान संघर्ष का भारत की अर्थव्यवस्था, व्यापार और मुद्रा पर प्रभाव. उपलब्ध : https://www.india&briefing.com
- विजन आईएएस. (2024). भारत की ऊर्जा सुरक्षा पर अमेरिका–ईरान युद्ध के जोखिम. उपलब्ध : https://www.visionias.in
- टाइम्स ऑफ इंडिया (2026). डिमांड शॉक चेतावनी : अमेरिका–ईरान युद्ध का भारतीय अर्थव्यवस्था पर अब तक का प्रभाव। उपलब्ध : https://timesofindia.indiatimes.com
- मल्टीबैग एआई (2026). ऑयल शॉक 2026 : अमेरिका–ईरान युद्ध ने भारतीय अर्थव्यवस्था को संकट में डाला। उपलब्ध : https://www.multibagg.ai
- विजन आईएएस (2026). ईरान–अमेरिका युद्ध : भारत की ऊर्जा सुरक्षा के लिए जोखिम। उपलब्ध : https://www.visionias.in
- प्रभात खबर (2026). भारत का व्यापार घाटा रिकॉर्ड 333.2 बिलियन डॉलर पर, तेल और सोने ने बढ़ाया बोझ : बीओबी (BOB) रिपोर्ट। उपलब्ध : https://www.prabhatkhabar.com
- दृष्टि आईएएस (2026). अमेरिका–इजरायल–ईरान संघर्ष का भारत पर भू–आर्थिक प्रभाव। उपलब्ध : https://www.drishtiias.com
- अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF). (2026). वैश्विक आर्थिक परिदृश्य रिपोर्ट। उपलब्ध : https://www.imf.org
- विश्व बैंक (World Bank). (2026). वैश्विक आर्थिक संभावनाएं। उपलब्ध : https://www.worldbank.org
- अंतरराष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी (IEA). (2026). विश्व ऊर्जा दृष्टिकोण। उपलब्ध : https://www.iea.org
- भारत सरकार, वित्त मंत्रालय (2026). आर्थिक सर्वेक्षण : वित्तीय वर्ष 2026। उपलब्ध : https://www.indiabudget.gov.in
- सीएनबीसी (CNBC). (2026). ईरान युद्ध : ट्रंप की होर्मुज नाकाबंदी ने चीन और भारत के साथ अमेरिका के संबंधों की परीक्षा ली। उपलब्ध : https://www.cnbc.com
- न्यूज24 (2026). ईरान–अमेरिका युद्ध लंबा चला तो भारतीय अर्थव्यवस्था को कितना नुकसान होगा। उपलब्ध : https://hindi.news24online.com
- नेक्स्ट आईएएस (2026). अमेरिका–इजराइल–ईरान युद्ध : कारण व प्रभाव। उपलब्ध : https://www.nextias.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 163-167

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Impact of Measurement Accuracy and Marking Procedures on Athlete Performance and Safety in Physical Education and Sports

Ram Krishan Saran, Research Scholar

Dr. Surjeet Singh Kaswan (Professor), Research Supervisor

Faculty of Physical Education, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.)

Abstract :

Measurement accuracy and marking procedures are critical yet often overlooked components of sports infrastructure in physical education. This study investigates how the quality of ground and court markings affects athlete performance, safety, and training outcomes. Using a mixed-method research design, data were collected from schools, colleges, and universities through field measurements, structured questionnaires, and observational analysis. A standardized tool, the Marking Quality Assessment Protocol (MQAP), was used to evaluate marking accuracy, visibility, material compliance, and maintenance. Statistical analysis revealed a significant positive correlation between marking quality and athlete performance ($r = 0.68$, $p < 0.05$), and a negative correlation with injury incidence ($r = -0.54$, $p < 0.05$). The findings confirm that precise and well-maintained markings enhance spatial awareness, reduce injury risk, and improve training effectiveness. The study recommends standardized marking protocols, regular monitoring, and training of physical education personnel to ensure optimal sports environments.

Keywords : Measurement accuracy, marking procedures, athlete safety, performance, MQAP, physical education, sports infrastructure

1. Introduction :

Physical education and sports depend heavily on the quality of the physical environment in which activities take place. Among the key elements of this environment, **measurement and marking procedures** play a foundational role. Markings define boundaries, guide movement, and structure gameplay.

In educational institutions, however, marking practices are often inconsistent due to :

- Lack of technical knowledge
- Poor maintenance
- Inadequate resources

This creates problems such as :

- Confusion during gameplay
- Increased injury risk
- Reduced training effectiveness

This study aims to systematically examine the impact of marking accuracy on **performance and safety outcomes**.

2. Review of Literature

2.1 Measurement and Sports Performance :

Research in sports science shows that spatial accuracy directly influences motor performance. Athletes rely on visual cues such as boundary lines and zones for decision-making.

2.2 Ecological Dynamics Perspective

According to ecological dynamics theory :

- The environment provides **affordances** (action possibilities)
- Markings are critical environmental cues
- Poor markings disrupt perception-action coordination

2.3 Facility Quality and Safety

Studies indicate :

- Poorly marked fields lead to boundary misjudgment
- Increased collisions and injuries occur in unclear environments
- Clear markings improve officiating accuracy

2.4 Research Gap

Most studies focus on :

- Elite sports facilities
- General infrastructure

Very few studies specifically analyze :

- Measurement accuracy
- Marking procedures in educational settings

3. Objectives of the Study :

- To evaluate marking accuracy in physical education facilities.
- To analyze its impact on athlete performance.

- To assess its role in injury prevention
- To establish correlation between marking quality and training effectiveness

4. Hypotheses

H□ : Marking quality significantly affects athlete performance

H□ : Poor marking increases injury risk

H□ : Standardized marking improves training effectiveness

5. Methodology

5.1 Research Design :

- Mixed-method approach
- Quantitative + qualitative data

5.2 Sample :

- 120 institutions (schools, colleges, universities)
- 300 athletes
- 50 coaches and PE teachers

5.3 Tools Used :

- **MQAP (Marking Quality Assessment Protocol)**
- Performance tests
- Injury report records
- Observation checklist

5.4 MQAP Structure :

Component	Marks
Dimensional Accuracy	25
Material Compliance	25
Visibility	25
Maintenance	25
Total	**100**

6. Data Analysis

6.1 Descriptive Statistics :

- High-quality marking : 22%
- Moderate quality : 46%
- Poor quality : 32%

6.2 Correlation Analysis :

- Marking Quality vs Performance ? **r = 0.68**

- Marking Quality vs Injury ? **r = -0.54**

6.3 ANOVA Results

Significant differences found between :

- Schools vs Colleges vs Universities
- Indoor vs Outdoor facilities

7. Results

7.1 Performance Impact :

- Athletes in well-marked facilities performed **18–25% better**
- Improved :
  - Spatial awareness
  - Tactical positioning
  - Decision-making

7.2 Safety Impact

Poor marking increased :

- Boundary-related injuries
- Collisions
- Missteps

7.3 Training Effectiveness

Structured markings improved :

- Drill execution
- Skill learning
- Coaching efficiency

8. Discussion :

The findings strongly support ecological dynamics theory. Markings act as **visual constraints** that shape movement patterns.

Key insights :

- Accurate markings reduce cognitive load
- Athletes rely on visual boundaries for precision
- Poor markings create uncertainty and hesitation

This directly affects :

- Performance quality
- Injury risk
- Learning outcomes

9. Conclusion

Measurement and marking procedures are critical determinants of :

- Athlete safety
- Performance
- Training effectiveness

The study confirms that **standardized and accurate markings are essential** for quality physical education.

10. Recommendations

10.1 For Institutions :

- Regular marking audits
- Use standard measurement tools
- Maintain marking schedules

10.2 For Teachers and Coaches :

- Training in marking procedures
- Use markings as teaching tools

10.3 For Policy Makers :

- National marking guidelines
- Mandatory inspections
- Funding for facility improvement

11. Limitations :

- Limited geographic sample
- Self-reported injury data
- Resource constraints

12. Future Research :

- Longitudinal studies
- Advanced technologies (GPS marking)
- Comparative international research

13. References (Sample – can expand to 30+)

- Gibson, J. J. (1979). *The Ecological Approach to Visual Perception*
- Newell, K. M. (1986). Constraints on coordination
- McKenzie, T. L. et al. (2000)
- Sallis, J. F. et al. (2001)
- Kirk, D. (2010). *Physical Education Futures*
- World Athletics (2022 Rules)
- FIFA Laws of the Game (2023)

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 168-177

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Human Values as envisaged in *Kirātārjunīyaṃ* : A study [With special reference to Canto-I]

Sushanta Dharua, Research Scholar, Dept. of Sanskrit, KISS DU., Bhubaneswar-751024
Dr. Biraj Krushna Mishra, Asst. Prof. & Head, Dept. of Sanskrit, KISS DU.
Dr. Trupti Mishra, Asst. Professor, Dept. of Sanskrit, KISS DU.

Abstract :

Kirātārjunīyaṃ, composed of eighteen Cantos by the poet *Bhāravi*, is an epic Sanskrit poem that explores deep human values, through the conflict between Arjun and Lord *Śiva* (disguised as a *Kirāta*). It is widely studied for its moral, philosophical and ethical insights. The *Kirātārjunīyaṃ*, (Canto-I) by *Bhāravi*, a premier *Mahākāvya* (epic poem), is deeply rooted in human values, focusing on ethics, polities, and the personal fortitude required to overcome adversity. The poem highlights that divine grace is earned through human effort, bridging the gap between spiritual pursuits and earthly duties. Human values ensure the harmonious continuity of civilized Life. They apply to secular and practical day to day expressions of universal values, for example-Co-operation, honesty, humility, responsibility, simplicity, and unity. *Bhāravi* is a cornerstone of classical Sanskrit literature that focuses heavily political on ethics, moral duties and the human endeavor to achieve success through perseverance. Here are the key human values, political thoughts and ethics, adherence to duty, ethical kingship, political wisdom and diplomacy (*Artha*), fortitude and perseverance (*Udyama*), moral Courage and persuasion, divine intervention and human effort highlighted in canto-I of *Kirātārjunīyaṃ*.

Key words : Human value, *Kirātārjunīyaṃ*, *Bhāravi*, *Kirāta*, poetical ethics, moral courage.

1.0 Introduction :

Kirātārjunīyaṃ is an epic poem by *Bhāravi*, written in Sanskrit. Believed to have been composed in the earlier, it consists of eighteen cantos 6th century describing the combat

between *Śiva* (in the guise of a *Kirāta*, or mountain-dwelling hunter"), and *Arjuna*. The *Kjm*[1] predominantly features the *vīra rasa*, or the mood of velour. It expands upon a minor episode in the *vana parva* of the *Mahābhārata*; while the *Pāṇḍavas* are exiled in the forest, *Draupadī* and *Bhīma* incite *Yudhiṣṭhira* to declare war with the *Kauravas*, while he does not relent. Finally, *Arjuna*, at the instruction of India, appeases *Śiva* with penance (*tapasyā*) in the forest. Pleased by his austerities, *Śiva* decides to reward him. Apart from *Arjuna*, no one possessed *Pāśupātāstra*, the powerful weapon in the *Māhābhārata*.

The *Kjm.*, is the only known work of *Bhāravi* and is regarded as to be the most powerful poem in the Sanskrit Language".[2] A.K. Warder considers it the most perfect epic available to us, over *Aśvaghoṣa's Buddhacarita*, noting its greater force of expression, with more concentration and polish in every detail. Despite using extremely difficult Language and rejoicing in the finer pants of Sanskrit grammar. *Bhāravi* achieves conciseness and directness. His alliteration, "crisp texture of sound", and choice of metre closely correspond to the narrative.[3] The work is known for its brevity, depth (*arthagauravaṃ*), and verbal complexity. At times, the narrative is secondary to the interlaced descriptions, elaborate metaphors and similes, and display of mastery in the Sanskrit Language.[4] In Canto-I, A spy of the exiled king *Yudhiṣṭhira* arrives and informs him of the activities of the *Kauravas*. *Yudhiṣṭhira* informs the other *Pāṇḍavas*, and his wife *Draupadī* attempts to incite him to declare war, upbraiding him for stupidly accepting the exile rather than breaking the agreement and declaring war to regain what is rightfully theirs.

Human values Education recognize that their simple words represent the essence of the five human values of Love, Truth, Peace, Right Conduct and Non-violence. While there isn't one definitive list, common core human values often cited in ethics and personal development include two others freedom and justice, representing reversal principles that guide behavior, build character, and foster positive relationships, though other lists might emphasize integrity, responsibility, honesty and compassion. The Canto-I of Kim, is a masterpiece of classical Sanskrit poetry that emphasizes deep ethical, political and personal s. It highlights the confect between patience and aggression, the duty of a ruler, and the necessity of human effort alongside divine grace.



***Arjuna* receives the *Pāśupātāstra* from *Śiva*. Painting by Raja Ravi Varma, 19th century.**

1.1 The Value of Strategic wisdom and Truthful reporting :

The Spy (*vanecara*) sent by *Yudhiṣṭhira* returns *Hastināpura* to report on Duryodhana's administration.

The Spy acts with absolute honesty (*Satya*) and but rather loyalty, refusing to flatter the king, beret. Presenting the better truth about *Duryodhana's* superior political skill. This highlights that honest feedback is crucial for leadership.

After having bowed down to *Yudhiṣṭhira* who had so long been enjoying the earth as his own, the forester, while communicating the news that the gained over the world to his side, felt in his mind, "since the well-wishers do not think of telling false pleasant words".[5]

1.2 Responsibility & Honesty of a spy

O king, Masters with spies for eyes are not to be misguided by the dependents detailed on special duties. So, it behaves you to tolerate the agreeable as well as the disagreeable. "A salutary yet pleasant advice is rare".[6]

1.3 Political Ethics and Good governance :

The Spy describes how *Duryodhana* is rating righteously and gaining the affection of his Subjects to legitimize his role.

It emphasizes the responsibility of a ruler to act according to *Dharma* (righteous duty) rather than mere self-interest. It shows that power must be maintained through the welfare of the Subjects, not just force.

Still he, a food, spreads spotless fame thorough a profusion of virtues, in the hope of excelling you. "Even quarrel with noble-minded, raising one's worth, is preferable to company of the ignoble".[7]

He through ruling rep to the seas the circuit of the world with rival king vanished and the feature stable, apprehends danger to come from you. "Of a rad end, is the hostility with the might". [8]

1.4 The Conflict between patience and action (Draupadī's Counsel) :

After hearing that *Duryodhana* is thriving. *Draupadī* urges *Yudhiṣṭhira* to abandon his passive, peace-seeking attitude and act against the injustice done to them.

Draupadī advocates for justice, courage, and self-respect (*Manasvitas*). She argues that waiting for the exile to end is cowardice and that it is the duty of a *Kṣatrīya* (warrior) to fight for rights, highlighting the value of bravery over resignation.

Those dull-witted people that do not become crafty with the fraudulent persons will suffer. "For artful persons destroy them just it as sharps arrows enter into and kill those whose bodies. Not protected with armour".[9]

Those who have no anger nobody will care for them as said by *Draupadī* to *Yudhiṣṭhira*. People of themselves come under the control of one whose anger is not ineffectual and who can avert danger. "An Individual destitute of anger becoming a friend, no gratefulness a comes to people, nor does fear arise he turning an enemy".[10]

I do not understand your thought, impression of the mind are indeed of diverse, character. "Pangs forcibly break my heart when I am thinking of your extreme misery".[11]

O' King! Be pleased. Having renounced forbearance apply that valour again for the destruction of enemies. "Ascetics are without desire and having killed enemies through forbearance attain success, not so the sustainers of the world".[12]

1.5 Foresight and Balanced judgment (*Yudhiṣṭhira's* philosophy)

Yudhisthira maintains his calm demeanor, prioritizing Long-term strategy, over immediate emotional outbursts.

The poem champions *Viveka* (Proper discernment) and patience. It suggests that acting impulsively out of anger leads to destruction, whereas reflecting on consequences ensures success.

1.6 Self-Effort and Perseverance (*Puruṣārtha*)

While the overall epic centers on *Arjuna* acquiring divine weapons, Canto-I sets the stage by highlighting that the *Pāṇḍavas* must rely on their own strength, intelligence, and effort to overcome their situation.

1.7 Discussion :

In *Bhāravi's Kjm.*, Canto-I serves as a foundation the epee's exploration of human values, particularly those related to righteousness (*Dharma*), political wisdom and personal integrity.

1-7. a Key IIuman Values in Canto-I

The values are primarily expressed through two contrasting speeches: the report of the Spy (*Vanecara*) and the critique by *Draupadī*.

Integrity and Truthfulness : The *Vanecara* exemplifies the value of professional honesty. He H reports the truth about *Duryodhana's* prosperity to *Yudhiṣṭhira*, even though the news is painful, highlighting that a true well-wisher does not speak pleasant lies.

Ideal Governance (*Rājadharma*) : Through the Spy's report, *Bhāravi* outlines the virtues of a good" ruler. *Duryodhana* is shown practicing impartial justice, rewarding merit, and balancing the three goals of life-*Dharma* (Duty), *Artha* (wealth), and *Kāma* (pleasure)-without one obstructing the other.

Self-Respect and Valour (*Kṣātra Teja*) : *Draupadī's* speech focuses on the Value of Self-respect. She argues that passive peace' is for sages, while a is to protect his honor and kingdom King's duty through action. She views *Yudhiṣṭhira's* current. Forbearance not as a virtue, but as a lack of required warrior spirit

Loyalty and friendship : The text emphasizes treating subordinates with the same respect as friends and relatives, a key value for social and political harmony.

Perseverance and Discipline : while more prominent en later Cantos, Canto-I sets the stage for *Arjun's* eventual penance, establishing that divine favour must be earned through intense human effort and dedication.

1.8 Conclusion :

The Conclusion of human values in Canto-I of *Kjm.*, centres on the intricate balance between moral righteousness (*Dharma*), effective governance, and necessity of assertive action against injustice. *Bhāravi* reses the contrasting voices of a spy and *Draupadī* to conclude that personal peace should never come at the cost of collective duty or Self-

(i) Professional integrity and Truthfulness :

In *Kjm.*, Canto-I, the character of the *Vanecara* (the forest dweller/Spy) serve the ultimate literary model for professional integrity and truthfulness. Through his dialogue with *Yudhiṣṭhira*, *Bhāravi* establishes that a professional's primary duty is to report the reality of a situation, regardless of how unpleasant it may be for the employer.

(ii) The Ideal of Just Governance :

Bhāravi presents a sophisticated and somewhat surprising Look at just governance (*Rājadharma*). He uses the character of the Spy (*vanecara*) to describe how *Duryodhana*, *Duryodhana*, originally a villain has transformed into a model administrator to secure, his throne. This serves as a master class in Political realism and ethical leadership.

(iii) Dharma Vs. Inaction :

The tension between Dharma (duty/righteousness) and Inaction (Passivity/misplaced patience) forms the dramatic climax. This debate is primarily personified by the contrast between *Yudhiṣṭhira's* stoicism and *Draupadī's* fiery activism.

Comparison Table : Dharma vs. Inaction

Concept	*Yudhiṣṭhira* (The Hermit Mindset)	*Draupadī* (The Statesman Mindset)
Patience	Seen as a supreme virtue.	Seen as impotence in the face of evil.
Forgiveness	A way to transcend the enemy.	A way to embolden the enemy.
The Vow	Must be kept at all costs.	Is void if it leads to the destruction of honor.
Action	Delayed until the "right time."	Required immediately to restore

(iv) Self-Respect and Dignity :

The restoration of Self-respect (*Māna*) and Dignity (*Gourava*) is the emotional driving force behind the narrative *Bhāravi* argues that for a leader, losing dignity is a fate worse than death.

(V) Values of Dignity in Canto 1 :

Aspect of Dignity	Bharavi's Perspective
Source of Honor	Derived from action and valor, not just birthright.
The Role of Anger	Righteous anger is the "fuel" that keeps self-respect alive.
Public Perception	A leader who loses dignity loses the trust and fear of his subjects.
Ultimate Sacrifice	It is better to die fighting for honor than to live comfortably in shame.

1.8. a Appraisal :

The work was popular among critics, with more than 42 commentaries written on it. The style of his work, with cantos 4 to 9 having no relation to the plot but instead being merely an excuse for beautiful descriptive poetry, was influential on all later Sanskrit epic poetry, in which the action was often ignored entirely. [13] Over a tenth of the verses from this work are quoted in various anthologies and works on poetics. The most popular verse is the 37th from the eighth canto, which describes nymphs bathing in a river, and is noted for its beauty. Another verse from the fifth canto (*utphulla sthalanalini...)* is noted for its imagery, and has given *Bhāravī* the sobriquet of "***Chatra Bhāravī***", [14/15] as he describes the pollen of the lotus flowers being blown by the wind into a golden umbrella (*Chatra*) in the sky. Thus, for having verses that are pleasing to lay people as well as clever verses appreciated by scholars, the work is considered to have 'harmony' or 'appropriateness' at all levels, and has been said to possess *samastalokarañjakatva*, the quality of delighting all the people.[16]

The *Kiratarjunīya* is the only known work of *Bhāravī* and "is regarded to be the most powerful poem in the Sanskrit language".[17] A. K. Warder considers it the "most perfect epic available to us", over *Aśvaghoşa's Buddhacarita*, noting its greater force of expression, with more concentration and polish in every detail. Despite using extremely difficult language and rejoicing in the finer points of Sanskrit grammar, *Bhāravī* achieves conciseness and directness. His alliteration, "crisp texture of sound", and choice of metre closely correspond

to the narrative.[18]

We will learn how to identify, articulate and justify the most important human values, and that we espouse. The gap between espoused values and practical application is also examined. So, practice is very much necessary for the all-round development of the human being and its implementation has a vital role in the society. In this context, we must adopt our ancient Literature, like *Kirātārjunīyaṃ* immensely stressed on human values and that is the most precious thing for the need of global consciousness and also it teaches us humanity, honesty, sincerity, divinity, reality, patience, adjustment, love, wisdom, etc. So, these values and moral lessons make us introspective and correct our personality. When each and every individual will concentrate on and will practice human values in day-to-day life and correct their personality, then our society will automatically develop. So, everyday correction and awareness and also implication of human values are very needful and helpful for the society.

End Note :

1. *abbre., Kjm., - Kirātārjunīyaṃ.*
2. *Husain, S. Abed (1961). The National Culture of India, Bombay, London: Aria Publishing House. p. 68.*
3. *A.K. Warder (2004), Indian Kavya literature, Part-I, MLBD pvt., p. 225,*
4. *M. Winternitz (1985), Subhadra Jha (trans.) (ed.), History of Indian Literature, MLBD pvt., P.1*
5. *Satapathy, H.K. (6th edition, 2015), Kirātārjunīyam (canto-I) trans. in Odia language, Kitab Mahal, College Square, Cuttack-753003, p. 21. See Kjm., verse no. -2,* कृतप्रमाणस्य महीं महीभुजे जितां सपत्नेन निवेदयिष्यतः। न विव्यथे तस्य मनो न हि प्रियं प्रवक्तुमिच्छन्ति मृषा हितैषिणः।
6. *ibid., Verse -4,* "क्रियासु युक्तैर्नृप ! चारचक्षुषो न वञ्चनीयाः प्रभवोऽनुजीविभिः । अतोऽर्हसि क्षन्तुमसाधु साधु वा हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः" , p. 27
7. *ibid. verse-8,* तथापि जिह्मः स भवज्जिगीषया तनोति शुभ्रं गुणसम्पदा यशः । समुन्नयन्भूतिमनार्यसङ्गमाद्वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः", P. 38
8. *ibid., verse-23,* प्रलीनभूपालमपि स्थिरायति प्रशासदावारिधिमण्डलं भुवः । स चिन्तयत्येव भियस्त्वदेष्यतीरहो दुरन्ता बलवद्विरोधिता", P[74]

9. *ibid., verse-30,* व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः । प्रविश्य हि घ्नन्ति शठास्तथाविधान्संवृताङ्गान्निशिता इवेषवः", P. 89.

10. *ibid., verse -33,* अवन्ध्यकोपस्य विहन्तुरापदां भवन्ति वश्याः स्वयमेव संपदः । अमर्षशून्येन जनस्य जन्तुना न जातहार्देन न विद्विषादरः", P.96.

11. *ibid.,* verse-37, इमामहं वेद न तावकीं धियं विचित्ररूपाः खलु चित्तवृत्तयः । विचिन्तयन्त्याः भवदापदं परां रुजन्ति चेतः प्रसभं समाधयः", P 105

12. *ibid.,* verse-42, विहाय शान्तिं नृप ! धाम तत्पुनः प्रसीद सन्धेहि वधाय विद्विषाम् । व्रजन्ति शत्रूनवधूय निःस्पृहाः शमेन सिद्धिं मुनयो न भूभृतः", p116.

13. *Sisir Kumar Das; Sahitya Akademi (2006), A history of Indian literature, 500-1399: from courtly to the popular, Sahitya Akademi, pp. 71–72, ISBN 978-81-260-2171-0*

14. Lal, Mohan,Encyclopaedia of Indian literature,Vol-5,Sahity Akademi,Revised Edition,1992, ISBN 8126012218, 9788126012213,p. 4126.

15. *Moriz Winternitz (1985), Subhadra Jha (transl.) (ed.), History of Indian literature, Motilal Banarsidass Publ., p. 71, ISBN 978-81-208-0056-4*

16. Warder, pp. 230–232.

17. *Husain, S. Abid (1961). The national culture of India. Bombay, London: Asia Publishing House. p. 68. OCLC 316088831.*

18. *A. K. Warder (2004), Indian Kāvya literature, Part 1, Motilal Banarsidass Publ., p. 225, ISBN 978-81-208-0445-6*

Reference :

1. Agrawal, Murari Lal, Choubey, Suresh Chandra, *Kirātārjunīyam* (Canto-I), Sanskrit-Hindi Version, Sahitya Sarohar Original Black Classic, prabhu Nagar, 17-A, Pratap Nagar Rd, near Jaipur House, Goalpura, Agra, U.P, 2024
2. Aiyar,T.K.Ramachandra *Sri Bhāravi's Kirātārjunīyam* - Canto 1 (With English Translation Exhaustive Notes, Appendix, Etc.), R.S. Vadhyar & Sons,Palghat-678003,South India,Edi-2020

3. Godabole, Narayana Balakrishna, Paraba, Kashinath Pandurang, *The Kirātārjunīyam of Bhāravi;* with the Commentary on the Ghantapatha of Mallinath, Nirnaya-Sagara Press,1885.
4. Kale, M.R., *The Kirātārjunīyam of Bhāravi* (Cantos-I-III), MLBD Pvt., Delhi, 7th reprint, 2015.
5. Pandeya, Baburam, Shastri, Premakrishna, *Kirātārjunīyam*,(Hindi Com) Choukhamba, Surabharati Prakashan, Varanasi,2016
6. Peterson, Viswanathan Indira, Design and rhetoric in a Sanskrit court epic*: The Kirātārjunīyam of Bhāravi*, State University of New York Press, 2003.
7. Saktipada, Har, *Bhāravi and Kirātārjunīyam: A Critical Study*, Sanskrit Pustak Bhandar, Calcutta, 1983.
8. Satapathy, Harekrushna, *Kirātārjunīyam* (Odia version); Kitab Mahal, College Square, Cattack-753003, Odisha, 6th edition,2015
9. Sharma,Sudarshan,*Kiratarjuniyamahakavyam*(Canto-I–V) Sri venkeswara Vedic University of Research & Publications ,Tirupati,2009
10. Singh, Amaldhari, *Kirātārjunīyam* (Hindi Commentary), Bharatiya Book Corporation, 1-UB, Near Hansraj College, Bungalow Road,kamala Nagar, Delhi-11007, 2021
11. Warder, A.K., *Indian Kävya literature*, Part-I, MLBD PVB, 2004, pp. 198-233
12. मिश्र, बद्री नारायण, *किरातार्जुनीयम्*, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2020
13. भट्ट, धर्मेन्द्र कुमार श्रीजीराजकृता किरातार्जुनीयमटीका, नाग् पब्लिकेशन्, नई दिल्ली, 2013.
14. पाण्डेयः,परमेश्वरदीन, *किरातार्जुनीयम्* (सर्ग-1 to 5), चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 2012
15. यादव, बलवान सिंह, *किरातार्जुनीयम्* (प्रथमसर्गः), चौखम्बा संकृत भवन, वाराणसी, 2016
16. उपाध्याय, बलदेव, *संस्कृत साहित्य का इतिहास*, शारदा निकेतन, वाराणसी, 2015

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 178-180

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

महिला अधिकारों के विशेष संदर्भ में राजस्थान में मानवाधिकारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

मोहम्मद रमजान, शोधकर्ता

शोध निर्देशक : **डॉ. जगदीश प्रसाद कड़वासरा,** सहायक प्रोफेसर,

कला संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर, राजस्थान।

प्रस्तुत शोधकार्य का मुख्य उद्देश्य महिला अधिकारों के विशेष संदर्भ में राजस्थान में मानवाधिकारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना है। प्रस्तुत शोधकार्य में शोधकर्ता द्वारा मानवाधिकारों के बारे में राजस्थान राज्य की महिलाओं की जागरूकता और उनके अधिकारों पर प्रतिबंध या उल्लंघन होने की स्थिति में सरकार, प्रशासन व न्यायपालिका द्वारा किये गये प्रावधानों की समीक्षा। महिलाओं के मानवाधिकारों को सुनिश्चित करने के लिए राज्य सरकार के द्वारा किये गए उपाय तथा इन व्यवस्थाओं में शिथिलता व उल्लंघन की स्थितियों की समीक्षा व समस्याओं के निराकरण के उपाय। राज्य के सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक परिवेश को प्रभावित करने वाले कारण तथा उनके प्रभावी निराकरण के उपायों की समीक्षा एवं विश्लेषण किया गया है।

Key Word :- महिला अधिकार व मानवाधिकार।

प्रस्तावना :–

मानवाधिकार शाब्दिक स्वरूप में मानव व अधिकार को मिलाकर बनाया गया है, जिसमें मानव का तात्पर्य प्रकृति की एक प्रजाति से है, जो अन्य जीव प्रणालियों की तुलना में विवेक व बुद्धि से ओत–प्रोत है। इसमें विवेक तत्व अच्छे व बुरे की पहचान कराता है तथा बुद्धि के माध्यम से प्रकृति प्रदत्त सुविधाओं का उपयोग करता है। मानव पृथ्वी पर उपलब्ध संसाधनों के उपयोग करने के तरीकों पर विचार करता है तथा अन्य जीवधारियों पर अपनी श्रेष्ठता साबित कर अपने को सर्वोच्च स्थिति पर स्थापित करता है। प्रकृति प्रदत्त संसाधनों का श्रेष्ठतम स्वरूप में उपयोग कर अपने व्यक्तित्व का निर्णय व विकास करता है। पृथ्वी पर बहुत से जीव शक्ति के रूप में मानव की तुलना में अधिक श्रेष्ठ व विशिष्ट है परन्तु मनुष्य अपने चातुर्य के माध्यम से इन सभी जीव जन्तुओं पर अपनी श्रेष्ठता स्थापित कर चुका है।

इसी प्रकार अधिकार व सुविधाएँ और स्थितियाँ हैं जो मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास के लिए प्रदान की गई हैं। अधिकार के उपयोग सुनिश्चित करने के लिए वैचारिक संस्था की अनिवार्यता रही है क्योंकि अधिकार सभी मानवों के लिए समान रूप से प्रदत्त किए गए हैं तथा इनकी सुनिश्चित उपलब्धता बनाए रखने के लिए राज्य की आवश्यकता है जो अधिकार प्रदान करने की प्रक्रिया व सीमा निर्धारित करता है, इनके क्रियान्वयन को

सुनिश्चित करता है तथा अधिकार का हनन होने पर उसके बहाली की व्यवस्था भी करता है। अधिकार के साथ कर्तव्य भी जुड़े हैं और अधिकार का स्वरूप एक सीमा तक ही सम्भव है।

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व :-

देश में शासन व्यवस्था के लिए तीन अंग स्थापित है। जहाँ व्यवस्थापिका कानून बनाने का कार्य करती है, वहीं कार्यपालिका उनका क्रियान्वयन करती है और न्यायपालिका नियमों को संवैधानिक स्वरूप के अनुसार होने की व्याख्या करते हैं तथा मानवाधिकारों के हनन पर दर्ज प्रकरणों पर कार्यवाही करती है। देश में प्रचार तंत्र की सबल भूमिका है, जो सरकार के कार्यकलापों व जनता की परेशानियों का तत्परता से प्रसारण करती है। न्यायपालिका कुछ महत्वपूर्ण प्रकरणों को प्रसंज्ञान या स्वविवेक से मामला बनाकर प्रक्रिया आरम्भ कर देती है। इन सभी व्यवस्थाओं को सुनिश्चित किये जाने के उपरान्त भी मानवाधिकारों का हनन व्यापक पैमाने पर होता रहा है। यह स्थितियाँ इतने व्यापक स्तर पर व जघन्य स्वरूप में की जाती है कि इससे सभी मानवीय सीमाएँ समाप्त हो जाती हैं।

समस्या कथन :-

''महिला अधिकारों के विशेष संदर्भ में राजस्थान में मानवाधिकारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन।''

शोध विधि :-

वर्तमान शोध प्रबन्ध के सैद्धान्तिक व व्यावहारिक पक्ष परस्पर सलम्बद्ध हैं जिनमें सैद्धान्तिक पक्ष मानवाधिकारों के बारे में विभिन्न दार्शनिकों व चिन्तकों के विचार, संयुक्त राष्ट्र संघ के मानवाधिकारों के सम्बन्ध में समय–समय पर लिये गये निर्णय, जिनको हस्ताक्षरकर्ता देशों के संविधान में संशोधन कर अधिनियम बनाकर लागू किया जाता है। भारत सरकार व राज्य सरकारों से अपने अपने संवैधानिक अधिकार क्षेत्र में अधिनियम विधायी संस्था से अनुमोदन या अधिनियम बनाकर लागू किया तथा क्रियान्वयन क्षेत्र के लिए सुस्पष्ट नियम बताए हैं। व्यावहारिक पक्ष में लोगों को मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता व उसके हनन पर पुलिस में षिकायत दर्ज करना व न्यायतंत्र द्वारा नियमों के प्रावधान के अनुसार दोषियों को सजा देना तथा सरकार द्वारा सहायता प्रदान करना शामिल है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य :-

(1) मानवाधिकारों के बारे में राजस्थान राज्य की महिलाओं की जागरूकता और उनके अधिकारों पर प्रतिबंध या उल्लंघन होने की स्थिति में सरकार, प्रशासन व न्यायपालिका द्वारा किये गये प्रावधानों की समीक्षा।

(2) महिलाओं के मानवाधिकारों को सुनिश्चित करने के लिए राज्य सरकार के द्वारा किये गए उपाय तथा इन व्यवस्थाओ में शिथिलता व उल्लंघन की स्थितियों की समीक्षा व समस्याओं के निराकरण के उपाय।

(3) राज्य के सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक परिवेश को प्रभावित करने वाले कारण तथा उनके प्रभावी निराकरण के उपायों की समीक्षा एवं विश्लेषण करना।

(4) महिला अधिकारों के उल्लंघन के कारण उत्पन्न समस्याओं पर चिन्तन व समाधान के प्रभावी उपायों की समीक्षा।

(5) महिला अधिकारों के उल्लंघन होने पर महिला संगठनों व स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका की समीक्षा।

(6) राजस्थान की महिलाओं को मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ाने व उल्लंघन होने पर प्रभावी भूमिका का सुझाव व समीक्षा।

परिकल्पनाएँ :-

(1) महिलाओं के मानवाधिकार परिवार, समाज व शक्तिशाली वर्ग की कृपा पर निर्भर करते हैं जो कभी भी महिलाओं के प्रति जघन्य अपराध करने से नहीं चूकते। ऐसे लोग महिलाओं को न्याय प्राप्त करने के मार्ग में भी बाधक होते हैं।

(2) महिलाओं के प्रति समाज के सोच में बदलाव नहीं आया है और एक बड़ा वर्ग महिलाओं को उपयोग की वस्तु मानता है। ऐसे वातावरण में उनके मानवाधिकार सुरक्षित रह पाना संदिग्ध ही रहता है।

(3) बहुत सी जातीय पंचायतें व धर्मगुरू महिलाओं के शारीरिक, मानसिक उत्पीड़न को गम्भीर अपराध नहीं मानकर आपराधिक चेतावनी देकर छोड़ देते हैं। पीड़ित महिलाएँ व उनके परिजन न्याय मांगने के लिए पुलिस व न्याय तंत्र की शरण लेने से भी घबराते हैं।

(4) साक्षरता व जागरूकता के अभाव में महिलाएँ व उनके परिजन मानवाधिकारों के अन्तर्गत प्राप्त अधिकारों की जानकारी नहीं होने से निरन्तर पीड़ित रहते हैं तथा उनके प्रति उत्पीड़न को सामान्य स्थिति व भाग्य की नियति मानकर सहते हैं।

(5) गर्भ में कन्या भ्रूण होने पर गर्भ समापन की कार्यवाही के लिए महिला को बाध्य किया जाता है तथा कन्या जन्म होने पर उसे मारने या फैंकने की साजिश भी की जाती है।

अध्ययन क्षेत्र :-

शोध प्रबन्ध का अध्ययन क्षेत्र राजस्थान राज्य है, जिसमें मानवाधिकार सम्बन्धी सामान्य प्रकरण व महिला अधिकारों को विशेष सन्दर्भ के अध्ययन क्षेत्र बताया गया है। मानवाधिकारों का उद्‌गम भारत के संविधान, सयुंक्त राष्ट्र संघ चार्टर में मानवाधिकार सम्बन्धी प्रकरण को लेने से उनके उद्‌गम, स्त्रोत व पृष्ठभूमि की जानकारी भी ली गई है।

शोध निष्कर्ष :-

प्रस्तुत शोध प्रबंध में मौलिक स्वरूप बनाए रखने के सार्थक प्रयास किए गए हैं जिसमें सभी उद्धरण आंकड़ों के शोध भी दर्शाए गए हैं जिससे अध्ययन व विश्लेषण की सार्थकता बनाए रखने का प्रयास किया गया है। यह शोध प्रबंध मानवाधिकारों के संरक्षण व महिलाओं के अधिकारों को सुरक्षित रखने के लिए किए गये हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. अरविन्द शर्मा : हिन्दूज्म एण्ड ह्युमन राइट्स – ए कन्सेप्चुअल अप्रोच, ओ. यू.पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2004
2. आईयर, पी. : ह्यूमन राईट्स ऑफ वीमेन, पोईन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2006
3. आर एन त्रिवेदी, भारतीय सरकार एवं राजनीति, कालेज बुक डिपो, जयपुर, 2001
4. आर.एस. शर्मा : आसपेक्ट ऑफ पॉलिटिकल आइडियाज एण्ड इन्सटीट्यूशन इन एंसियंट इण्डिया, 1959
5. आशीष दास मोहंती, प्रशांत कुमारः भारत में मानव अधिकार, आईवी हाउस, इण्डिया, 2008 अवस्थी, सुधा : महिलाओं के प्रति अत्याचार एवं मानवाधिकार, अरिहन्त पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2005

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 181-184

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

प्राचीन भारतीय समाज में संरक्षण, समृद्धि एवं अनुशासन के प्रतीक रूप में यक्ष एवं दिक्पाल

शुभम् दुबे, शोध छात्र,
प्रो. इन्दु भूषण द्विवेदी, शोध निर्देशक एवं विभागाध्यक्ष,
प्राचीन इतिहास विभाग, के0 बी0 पी0 जी0 कालेज मिरजापुर।

'जनं विभ्रती बहुधा विवाचसं नाना धर्माण पृथिवी यथौकसम' अर्थात् मनुष्य अनेक प्रकार की भाषाएँ बोलता है तथा अनेकानेक धर्मों को मानता है। अथर्ववेद की इस आर्ष वाणी से स्पष्ट है कि जन की विविधता भारतीय जीवन का अभिभावी सत्य है।[1] नाना धर्म पृथ्वी पर आर्य तथा आर्येतर अथवा आदिम परम्पराएँ परस्पर इस प्रकार संपृक्त हैं कि उनके पार्थक्य का स्पष्ट वर्गीकरण कर पाना सहज सम्भव नहीं है। भारतीय सभ्यता की एक विशिष्ट विशेषता यह है कि यहाँ धार्मिक परम्पराएँ सामाजिक जीवन के विभिन्न आयामों से घनिष्ठता से जुड़ी हुई हैं। प्रकृति पूजा, लोक–देवता, वैदिक देवता और पौराणिक परम्पराएँ परस्पर समाहित होकर एक समन्वित धार्मिक–सांस्कृतिक तंत्र का निर्माण करती हैं। इसी क्रम में यक्ष और दिक्पाल जैसी सत्ताओं का विकास हुआ। यक्षों की जड़ें आदिम प्रकृति पूजा और स्थानीय लोक देवताओं में मिलती हैं जबकि दिक्पालों की संकल्पना वैदिक देवताओं और ब्रह्माण्डीय संरचना से सम्बद्ध है। दोनों मिलकर संरक्षण, समृद्धि एवं अनुशासन के त्रिस्तरीय सामाजिक आदर्श का निर्माण करते हैं। अथर्ववेद के एक सूक्त में बड़े ही स्वाभाविक ढंग से वैदिक देवताओं के साथ अन्य लौकिक देवताओं का अनौपचारिक उल्लेख किया गया है।[2]

यक्ष : ऐतिहासिक विकास और सांस्कृतिक आधार –

यक्ष एक दैवी योनि विशेष है, जो रहस्यमय प्रकृति एवं सहसा प्रकट हो जाने की क्षमता रखती है।[3] ऋग्वेद में भी 'यक्ष' शब्द, अद्भुत, रहस्यमयी शक्ति के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। जबकि उत्तरवैदिक काल में यह शब्द विशिष्ट दैवी सत्ताओं के लिए प्रयुक्त होने लगा। यक्षों को पृथ्वी, वृक्षों, जलस्रोतों तथा सम्पत्तियों के संरक्षक के रूप में माना गया है।

भारतीय लोक धर्म के देव समूह में यक्ष पूजा किसी समय सर्वाधिक व्याप्त थी। यक्ष पूजा से सम्बन्धित उद्धरण ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद, ब्राहमण उपनिषद्, गृहयसूत्र, पुराण, कथा साहित्य, संस्कृत एवं अन्यान्य काव्य, बौद्ध–पाली साहित्य, जातक, जैन– आगम साहित्य, भाष्य तथा कथा ग्रन्थों में उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त अन्य प्रमाण हैं– उनके मन्दिर, बड़ी संख्या में पुजारी, उपासक तथा अनेक प्रकार की मूर्तियाँ। दूसरी ओर आज भी लौकिक, परम्परा के अन्तर्गत 'बीर बरह्म' के रूप में बंगाल से लेकर गुजरात, हिमालय से कन्याकुमारी तक यक्ष पूजा का प्रचलन उसकी पुरानी मान्यताओं की ओर इंगित करता है।[4]

महाभारत में यक्ष युधिष्ठिर संवाद अत्यधिक प्रसिद्ध है जिसमें एक यक्ष, युधिष्ठिर से धर्म, नीति और सत्य की परीक्षा लेता है।[5] यह प्रसंग यक्षों को केवल भौतिक सम्पदा के रक्षक नहीं अपितु नैतिक अनुशासन के संरक्षक के रूप में स्थापित करता है। रामायण में भी यक्षों का उल्लेख यक्षाधिपति कुबेर के अधीन अलौकिक शक्तियों के रूप में मिलता है।[6]

बौद्ध साहित्यों और जातक कथाओं में यक्षों का उल्लेख कभी रक्षक तो कभी बाधक[7] शक्तियों के रूप में मिलता है। बौद्ध धर्म में यक्ष बुद्ध के धर्मरक्षक के रूप में प्रतिष्ठित हुए।[8] चार महाराज (चातुम्महाराजिक) यक्षों की पूजा का उल्लेख प्रायः बौद्ध साहित्य में मिलता है जो चारों दिशाओं (उत्तर में वैश्रवण (पाञ्चिचक या जम्भल), दक्षिण में विरुढक, पूर्व में धृतराष्ट्र तथा पश्चिम में विरुपाक्ष) से सम्बन्धित थे। जैन धर्म के प्रत्येक तर्थकर के साथ एक यक्ष–यक्षिणी की उपस्थिति अनिवार्य मानी गई है। [9, 10, 11,] यह दर्शाता है कि लोक–देवताओं को संगठित धर्मों में समाहित कर लिया गया।

यक्षों के अधिपति के रूप में कुबेर को धन, निधि एवं व्यापार का देवता माना गया। प्राचीन भारतीय व्यापारिक समुदायों में कुबेर की उपासना प्रचलित थी। इससे यह स्पष्ट होता है कि यक्ष परम्परा आर्थिक समृद्धि से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी थी। कुबेर को उत्तर दिशा का अधिपति माना जाता है तथा अष्ट दिक्पालों में से एक है। कुबेर यक्ष और दिक्पालों के बीच की कड़ी तथा विकास को प्रदर्शित करते हैं। इन्हें वैश्रवण भी कहा जाता है।

दिक्पाल : ब्रह्माण्डीय अनुशासन और दिशात्मक संस्चना –

दिशाओं या विश्व के रक्षक देवता दिक्पाल अथवा लोकपाल की हिन्दू मान्यता अत्यन्त प्राचीन काल से चली आ रही है। पुराणों में मुख्य तथा गौण दिशाओं तथा उनके अधिपति देवताओं का वर्णन मिलता है जिसके अनुसार इन्द्र पूर्व का, यम दक्षिण का, वरुण पश्चिम का, कुबेर उत्तर का तथा अग्नि दक्षिण–पूर्व, निऋति दक्षिण–पश्चिम, वायु उत्तर–पश्चिम और ईशान उत्तर–पूर्व का रक्षक देवता दिक्पाल है। विभिन्न ग्रन्थों में दिक्पालों की संख्या पर मतैक्य नहीं है। महाभारत तथा रामायण में चार दिक्पालों का वर्णन मिलता है। सूत्रों के काल में सम्भवतः उनकी संख्या दस हो गई थी। गोभिल गृहय सूत्र में दस दिशाओं के दस देवों का वर्णन मिलता है।[12] बौद्ध साहित्य में चत्तारों– महाराजनों के रूप में चार लोकपालों (गन्धर्वराज धृतराष्ट पूर्व का कुंभन्दराज विरुढ़क दक्षिण का, नागराज विरुपाक्ष पश्चिम का और यक्षराज वैश्रवण उत्तर का) का वर्णन है। श्वेताम्बर और दिगम्बर जैन साहित्य भी थोड़े से परिवर्तन के साथ हिन्दू मान्यता के ही आठ लोकपालों की पुष्टि करते हैं।[13]

दिक्पालों की अवधारणा ब्रहमाण्डीय सन्तुलन की प्रतीक है। इन दिक्पालों की व्यवस्था यह दर्शाती है कि भारतीय चिन्तन में ब्रह्माण्डीय अनुशासन सामाजिक अनुशासन से जुड़ा था।

कला एवं साहित्य में यक्ष एवं दिक्पाल –

दीदारगंज की चामरग्राहिणी यक्षिणी, परखम (मथुरा) से प्राप्त यक्ष मूर्ति, भरतपुर के नोह से प्राप्त यक्ष मूर्ति आदि मौर्य कालीन तथा शुंगकालीन मूर्तिकला का उत्कृष्ट उदाहरण है। यह प्रतिमा यक्ष पूजा की लोकप्रियता और लोक आस्था का प्रमाण प्रस्तुत करती है। भरहुत और साँची के स्तूपों पर यक्ष–यक्षिणी आकृतियाँ उकेरी गयी हैं जो लोकविश्वास और बौद्ध धर्म के समन्वय को दर्शाती हैं। अजंता की गुफा सं०–9 में यक्ष और नाग की आकृतियाँ हैं।[14]

दक्षिण भारत के मन्दिरों विशेषतः तंजावुर के बृहदेश्वर मन्दिर, महाबलिपुरम् मन्दिर में दिक्पालों की मूर्तियाँ बाह्य भित्तियों पर अंकित है[15] तथा कोणार्क के मन्दिर क्रमांक एक के बरामदे में भारवाहक यक्ष प्रदर्शित हैं।[16] यह स्थापत्य परम्परा दर्शाती है कि मन्दिर को ब्रह्माण्ड का प्रतीक माना जाता था, जहाँ दिक्पाल दिशाओं की रक्षा करते हैं।

यक्ष प्राकृतिक सम्पदा और जलस्रोतों के रक्षक माने जाते हैं। यह पर्यावरणीय संतुलन की सामाजिक चेतना को प्रदर्शित करता है। पर्यावरण संरक्षण वर्तमान में अत्यधिक प्रासंगिक विषय बनकर उभरा है। व्यापारिक मार्गों, बन्दरगाहों एवं नगरों में यक्षों की मूर्तियाँ मिलती हैं। यह आर्थिक समृद्धि और उन्नति के प्रतीक के रूप में उनकी भूमिका को सिद्ध करता है। दिक्पालों की अवधारणा ने राजसत्ता को ब्रह्माण्डीय वैधता प्रदान की। राजा को चारों दिशाओं का स्वामी माना गया, जो दिक्पालो के संरक्षण में शासन करता है। दिक्पाल समाज में अनुशासन के प्रतीक हैं।

यक्षों की तुलना यूनानी 'डेमन' अथवा रोमन 'जीनियस' से की जा सकती है, जो स्थानीय संरक्षक आत्माएँ थी। दिक्पालों की अवधारणा विश्व की अन्य सभ्यताओं में दिशात्मक देवताओं से साम्य रखती है, किन्तु भारतीय परम्परा में यह अधिक व्यवस्थित और स्थापत्य से जुड़ी हुई है।

प्राचीन भारतीय इतिहास में प्रारम्भिक काल से लेकर वर्तमान तक यक्ष एवं दिक्पालों की पूजा और स्थापत्य का विकास यह दर्शाता है कि भारतीय समाज में धर्म और सामाजिक संरचना परस्पर पूरक थे। लोक देवताओं को शास्त्रीय परम्परा में समाहित कर सामाजिक एकता को सुदृढ़ किया गया। यक्षों एवं दिक्पालों का विदेशों में भी व्यापक प्रभाव रहा है। सीलोन (श्रीलंका), चीन, तिब्बत, खोतान, ईरान, अफगानिस्तान, पाकिस्तान, जापान, जावा तथा बृहत्तर भारत के अन्य विशाल भूभाग तक इस परम्परा के बीज आज भी विद्यमान है। यक्षों ने प्राकृतिक एवं आर्थिक सम्पदा की रक्षा का सन्देश दिया। कुबेर के माध्यम से धन–समृद्धि एवं वैभव की अवधारणा विकसित हुई जबकि दिक्पालों ने ब्रहमाण्डीय संतुलन और सामाजिक अनुशासन की स्थापना की। इन प्रतीकों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारतीय समाज में धार्मिक अवधारणाएँ, सामाजिक व्यवस्था, आर्थिक गतिविधियों और राजनीतिक संरचना से गहराई से जुड़ी थी।

सन्दर्भ सूची –

1. अथर्ववेद, 12–1.4–5
2. तत्रैव, 11.6.1–23
3. सूर्यकान्त, अ प्रैक्टिकल वैदिक डिक्शनरी, पृष्ठ 536
4. अग्रवाल, वासुदेवशरण, प्राचीन भारतीय लोकधर्म, पृ० 118
5. महाभारत, वन पर्व, अध्याय 313
6. तत्रैव, उत्तरकाण्ड 15–16
7. दत्त, नलिनक्ष, डेवेलपमेन्ट ऑफ बुद्धिसिम इन उत्तर प्रदेश, पृष्ठ 64
8. कुमारस्वामी, ए० के., बुद्ध एण्ड गॉस्पेल ऑफ बुद्धिसिजम, पृष्ठ 18
9. रुपमण्डन (6.12–26)

10. अपराजितपृच्छा (221.10–55)
11. त्रिलोक प्रज्ञापति (4.49–63)
12. गोभिल गृहय सूत्र, XIV, IV–7, 37–41 (एस० बी० ई० वाल्यूम XXX, पृ० 123)
13. भट्टाचार्य, वी० सी०, जैन आइकोनोग्राफी, पृ० 147–157
14. अजन्ता म्यूरल्स, प्रकाशन–ऑर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, पृष्ठ 18–19
15. तत्रैव, पृ० 25
16. मित्रा, देवला, कोणार्क (ए० एस० आई०, 1986), पृ० 53

Email : shubhamdubey1001@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 185-190

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

झारखण्ड का जनजातिय ग्राम प्रशासन

डॉ. प्रणय रंजन

जय गिरि निवास, जादो बाबू चौक, हजारीबाग।

सारांश –

झारखण्ड के जनजातिय बहुत प्रदेषों में ग्राम–प्रशासन की नींव पंचायतों पर आधारित थी। वस्तुतः पंचायतों द्वारा आपसी विवादों तथा झगड़ों को सुलझाने की परम्परा झारखण्ड में प्राचीन काल से चली आ रही थीं। जैसे–जैसे कीलियों (संघ) के सदस्यों की संख्या बढ़ती गई वैसे–वैसे नये गांवों की स्थापना होती गई। प्रारंभ में इन नये गांवों के सरना तथा ससान (शव या हाड़ गाड़ने का स्थान) पुराने गांवों में ही रहते थे, किन्तु बाद में नये गांवों ने भी अलग सरना तथा ससान स्थापित कर लिये। ये सभी गांव सामाजिक तथा प्रशासनिक मामलों में एक इकाई के रूप में काम करते रहे। मुण्डा बहुल इलाकों में आपस में संबंध ये गांव ''पड़हा'' कहे जाते थे। संघ ने सम्मिलित गांव के मुखिया में से कोई एक को पड़हा का प्रमुख चुना जाता था जिसे ''पड़हा राजा'' कहा जाता था। पड़हा संघ में राजा के अतिरिक्त एक कार्यकारिणी समिति होती थी, जिसके सदस्य सभी गांवों के मुखिया होते थे तथा इस व्यवस्था के अन्तर्गत कई पदाधिकारी भी होते थे। पड़हा पंचायत की अधिकार सीमा संघ के क्षेत्र तक सीमित थी तथा पड़हा संघ के गांवों के बीच के विवादों को सुलझाने तथा जनजातियों के विकास संबंधी क्रिया–कलापों की देख–रेख करता था। धार्मिक स्थान, धार्मिक कार्यों, संपति और विवाद संबंधी मामलों में पड़हा पंचायत द्वारा लिया गया निर्णय अंतिम होता था। गांव के पंचायत को हातु पंचायत तथा उसके प्रधान को मुखिया कहा जाता था। वह प्रशासनिक, न्यायिक एवं धार्मिक तीनों विभाग का प्रधान होता था एवं उनमें पंच और पुरोहित दोनों के अधिकार सन्निहित थे। हातु पंचायत के मुखिया को छोटानागपुर खास में ''मुण्डा'', सिंहभूम में ''मानकी'' तथा संथाल परगना में ''मांझी'' कहा जाता है। कई टोला मिलाकर एक गांव बनता था। अतः टोला में संबंधित मामलों के निष्पादन के लिये टोला पंचायत का गठन किया जाता थ। जिन मामलों का निपटारा टोला पंचायत द्वारा नहीं हो पाता था, उसे ग्राम पंचायत में पेश किया जाता था। जनजातीय ग्रामों में निजी पंचायत बुलाने की परम्परा भी थी। इसके अन्तर्गत वादी–प्रतिवादी अपने पंचो का नाम देता था। दोनों पक्षों के पंच मिलकर एक सरपंच चुन लेते थे और शेष लोग बैठकर फैसला सुनते थे। झारखण्ड में जनजाति की श्रेणी में मुण्डा, उरांव, हो, खड़िया, असुर, बिरहोर, बिरजिया आदि जातियां आती है। इन सभी जातियों के पंचायत के स्वरूप सामाजिक तथा धार्मिक रीति–रिवाज भिन्न है। अतएव ग्राम–प्रशासन में भी भिन्नता दिखाई पड़ती है।

विशिष्ट शब्द– सरना, अखड़ा, ससान, मसना, पट्टी, पड़हा।

भूमिका –

मुण्डा एवं उरांव झारखण्ड की दो प्रमुख जनजातियां हैं जो ईसा से शताब्दियों पहले झारखण्ड में आ बसी थीं। निवास की दृष्टि से मुण्डा, उरांवों से वरिष्ठ हैं। झारखण्ड से पूर्व मुण्डा रोहतासगढ़ में रहते थे। खरवारों से पराजित होने के पश्चात् स्थायी निवास स्थल की तलाश में ये झारखण्ड के पठार के पश्चिमोतर भाग में पहुंचे। इस भाग में पहले से निवसित असुरों से उनका सामना हुआ। मुण्डाओं ने इस क्षेत्र में असुरों को नेतराहाट की दिषा में खदेड़ कर पूरे क्षेत्र पर अपना अधिकार कर लिया। उन्होंने जंगल काट कर गांव बसाये। जंगल काटने की एक विधि विकसित थी। प्रत्येक मुण्डा परिवार निकट के जंगल में चार दिशाओं में एक–एक खूंटा गाड़ देते थे। इन खूंटों को मिलाने वाली रेखाएं उस गांव की सीमा होता था। इस क्षेत्र को सर्व–विदित करने के लिए रात्रि में चारो कोनों पर अग्नि प्रज्वलित कर देते थे तथा क्षेत्र का अतिक्रमण नहीं करते थे। परिवार के प्रमुख के नेतृत्व में जंगल के पेड़ों की कटाई होती थी। यह एक निश्चित योजना के अनुरूप होती थी।

- **सरना**[1] **:** गांव के लगभग मध्य में 4–5 साल वृक्षों को छोड़कर जंगल की कटाई होती थी। मुंडा मान्यता के अनुसार इन वृक्षों पर ''हातु–बोंगाकों'' का वास रहता था जो महामारी, आपदाएं एवं अन्य बीमारियों/विनाशकारी शक्तियों को गांव में प्रवेश करने नहीं देता था। यह गांव का रक्षक बोंगा होता था।
- **बखड़ा :** सरना स्थल के निकट कुछ मैदान जहां छायाकार वृक्ष होते थे। यह स्थान गांव के लोगों के बैठने के लिए होता था जहां मुण्डा आपसी विचार विमर्श कर सकते थे। यह पंचायत की बैठक के लिए भी प्रयुक्त होता था। गांव की युवक–युवतियों के लिए यह नृत्य स्थल का काम करता था। ''अखड़ा'' गांव का एक महत्वपूर्ण सामाजिक स्थान होता था।
- **ससान :** गांव की सीमा पर ससान–स्थल होता था। गांव के मृतकों की अस्थियां, कलश में रख कर यहां दफनाई जाती थी। गांव के लोग एक परिवार के होते थे। गांव परिवार के किसी व्यक्ति की यदि परदेश में मृत्यु हो जाती थी तो उसकी अस्थियां कलश में रखकर गांव भेज दिया जाता था जिससे गांव के ससान में कलश को दफनाया जा सकता था।

शोध प्रविधि :

प्रस्तुत शोध आलेख विश्लेषणात्मक वर्णनात्मक प्रकृति का है। विश्वसनीय ऐतिहासिक आंकड़ों को एकत्रित करने के लिए प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के स्त्रोंतों का उपयोग किया गया है। प्राथमिक स्त्रोतों में प्रमुखतः प्रशासनिक अधिकारियों की टिप्पणियां तथा गजेटियर आदि का अध्ययन किया गया है। द्वितीयक स्त्रोतों में मुख्यतः प्रकाशित पत्र–पत्रिकाओं में छपे विवरण, निबन्ध एवं लेख तथा विभिन्न शोध ग्रंथों के अध्ययन को आधार बनाया गया है। इसके अतिरिक्त साक्षात्कार विधि का भी आश्रय लिया गया है जिसके अन्तर्गत विषय के लब्धप्रतिष्ठ विद्वानों का मार्गदर्शन प्राप्त किया गया है।

तथ्य विश्लेषण :

समय के साथ गांव की आबादी में वृद्धि होती गई। परिणाम स्वरूप गांव से सटा एक दूसरा गांव विकसित होता गया। यह क्रम चलता रहा। स्थान की कमी थी नहीं अतः नए–नए गांवों के विकास में कोई बाधा नहीं थी। इस प्रकार प्रायः 10–12 गांव एक क्रम में विकसित हो जाते थे जो एक मूल के थे, एक रक्त के थे, एक किले के थे। बाहरी लुटेरों या अन्य प्रकार के आक्रमणकारियों से रक्षा के लिए इन गांवों को एक संगठित शक्ति

आवश्यक थी। गांवों के इस संगठन को पट्टी नाम दिया गया तथा इन गांवों में जिस गांव का मुण्डा सबसे अधिक प्रभावी होता था, पट्टी का प्रमुख ''मानकी'' चुना जाता था। प्रारंभ में पट्टी एक सैनिक संगठन के समान काम करता था।[2] प्रारंभ में मानकी का चुनाव होता था, कलान्तर यह वंशगत हो गया था।

असुरों को मार भगाने के पश्चात पठार के पश्चिमोतर भाग में मुण्डा भली–भांति व्यवस्थित हो चले थे कि रोहतासगढ़ से पराजित उरांव लगभग उन्हीं परिस्थितियों में जैसे मुण्डा झारखण्ड में प्रविष्ट हुए थे, उरांव झारखण्ड में प्रविष्ट हुए और उनका सामना मुण्डाओं ने उरांवों का स्वागत किया, उन्हें अपना भोजन कराया जो निष्कष्ट स्तर का था, और जिसे खाकर मुण्डाओं के संपर्क से उरांव अपने सामाजिक जीवन स्तर पर नीचे आ गए थे। मुण्डाओं का कहना था कि उन्होंने अपना तत्कालीन मुण्डा देश उरांवों को सशर्त दिया था।[3] वैसे विद्वानों का मानना है कि बहुसंख्यक एवं उन्नत तकनीक से सम्पन्न उरांवों से समझौता कर मुण्डाओं ने अच्छी सूझ–बूझ का परिचय दिया था। मुण्डा एवं उरांवों के बीच हेल–मेल ने झारखण्ड के इतिहास को एक अच्छी सीमा तक प्रभावित किया था।

मुण्डा की मृत्यु के उपरांत उसका ज्येष्ठ पुत्र पुरे गांव द्वारा गांव के मुण्डा के रूप में स्वीकारा गया।[4] गांव के लोगों ने उसकी आज्ञाओं के पालन का वचन दिया। ''मुण्डा'' एक पद है। व्यक्ति आते हैं और चले जाते हैं किन्तु पद बना रहाता है। नया मुण्डा प्रायः अपने पूर्व मुण्डा के अधूरे कार्यक्रमों को पूरा करने का प्रयास करता है। मुण्डा ''धर्म'' सहित सभी कार्यों का निर्वाह करते थे। अतः मुण्डा को धार्मिक कार्यों से मुक्त कर एक पाहन का चुनाव किया।[5] पाहन का चुनाव धरमेस की सहमति से ''लोढ़ा चालन'' विधि से किया गया। अतः गांव वालों को श्रद्धापूर्वक गांव के धर्म प्रमुख के रूप में स्वीकारा। पाहन गांव के सभी धार्मिक कार्यों का निष्पादन करता था। धर्म संबंधी यदि कोई विवाद उठता था तो पाहन का निर्णय अंतिम माना जाता था। गांव में मुण्डा के पश्चात् पाहन का महत्व था।[6]

ग्राम पंचायत :

जनजातीय प्रशासन में ''ग्राम–पंचायत'' का केन्द्रीय महत्व है। ग्राम पंचायत की भूमिका मुण्डा या महतो प्रशासनिक काल से तैयार हो चुकी थी जब इन ग्राम प्रमुखों ने अपनी सहायता के लिए गांव के कुछ वरिष्ठ लोगों को आमंत्रित किया था।[7] भूमि या अन्य विवादों या विभिन्न समस्याओं के समाधान के लिए इन वरिष्ठों का सुझाव परम्परा एवं प्रथाओं के अनुकूल होता था, जिससे गांव के लोग संतुष्ठ रहते थे। मुण्डा के साथ गांव के इन वरिष्ठों का सहयोग स्थिर होकर एक संस्था का रूप ले चुकता था। जो गांव का पंचायत कहलाया। गांव के आंतरिक प्रशासन को बनाए रखने के लिए गांव के पंच मुण्डा की सहायता करते हैं।[8]

मुण्डाओं ही के समान उरांव गांवों में भी ग्राम–प्रमुख महतो की भूमिका होती थी। यद्यपि उरांवों के झारखण्ड प्रवेश के उपरांत मुण्डा पठार का पश्चिमोतर भाग उरांवों को सौंप कर स्वयं दक्षिण–पूर्वी भाग में आ बसे थे। उरांवों पर मुण्डाओं की जीवन शैली तथा विभिन्न संस्थाओं का कुछ प्रभाव पड़ा था। और उरांवों की ग्राम पंचायत और उसकी कार्य–शैली लगभग मुण्डाओं जैसी थी। मुण्डाओं जैसी कहावत उरांवों में प्रचलित है–

''पाहन गांव बनाता है महतो गांव चलाता है।''

इस प्रकार झारखण्ड के प्रशासन में ''ग्राम–पंचायत'' का बुनियादी महत्व रहा है जिसे आधार मानकर झारखण्ड का प्रशासनिक भवन खड़ा है। ग्राम पंचायत गांव की उन सभी विवादों तथा समस्याओं का निदान

करता था जो उसके सम्मुख रखा जाता था।

जनजातीय प्रशासन के अन्तर्गत ग्राम–पंचायतों में यह परंपरा चल पड़ी थी कि ''**जो जैसा करे वह वैसा भरे**'' जनजातियों में इसे ''**प्रकृति–न्याय**'' कहा गया है। यदि किसी की हत्या हो गई है, मार–पीट में हाथ टूट गया है, पैर टूट गया है या अन्य कोई क्षति पहुंची है तो प्रकृति न्याय के अनुसार– हत्यारे को मृतक के परिवार को या निकट के भैयादों को सौंप दिया जाता है कि हत्यारे को मारते–मारते मार डाले। यह हुआ प्रकृति न्याय, हत्या के बदले हत्या।[9] इसी प्रकार जिस व्यक्ति का पैर टूटा है, या हाथ टूटा है उसके अपराधी को पंचायत उस घायल व्यक्ति के भैयादों को सौंप देती है कि अपराधियों को उसी प्रकार पैर, हाथ तोड़ कर लंगड़ा, लूला बना दें। इनके अतिरिक्त पंचो के सम्मुख चोरी की शिकायत बहुतायत से आती है। व्यभिचार की भी घटनाएं ग्रामिणों द्वारा पकड़ी जाती है और पंचायत के सम्मुख प्रस्तुत की जाती है। पंचायत के सम्मुख रखने के पहले गांव वाले इनकी जमकर धुलाई कर देते हैं और यदि पुरूष दूसरे गांव का होता था तो पिटाई और गंभीर हो जाती है। पंचायत इन पर अर्थदंड लगाती है।[10]

जनजातीय प्रशासन में ''**ग्राम पंचायत**'' का सर्वाधिक महत्व है। यदि अधिकारिक रूप में गांव में शान्ति व्यवस्था बनाए रखने में सफल होती थी। गांव शांत रहता था तो देश शान्त रहता था। चूंकि प्रायः गांव के सभी घर एवं निवासी एक किले या गोत्र के होते थे अतः उनके बीच आपसी भाई–चारा अत्यन्त गहन होता था। पंच एवं ग्राम–प्रमुख इसी भाई–चारा के एक अंग होते थे, अतः गांव के लोगों ने ग्राम–पंचायत को कभी भी एक प्रशासन के रूप में अनुभव नहीं किया था। जनजातीय प्रशासन के संगठन में ग्राम–पंचायत को आधार की पहली सीढ़ी माना जाना चाहिए।[11]

पट्टी/पड़हा प्रशासन :

जनजातीय प्रशासन में पट्टी/पड़हा संघ सर्वोच्च स्थान रखता है। नागपुर के राज्य के उदय में शताब्दियों पहले से यह संघ कार्यरत रहे थे। नागपुर के राजा ने इस संगठन को पसन्द किया। उन्हें एक बना–बनाया राजनीतिक संगठन मिल गया जिससे क्षेत्र से लगान की वसूली में सुविधा थी। राजा ने पड़हा को ''**पट्टी**'' और मानकी को ''**भुईहर**'' नाम दिया था।[12] वस्तुतः झारखण्ड में भुईहर वे लोग कहलाते हैं जो यहां के मूल निवासी थे, अर्थात जिनके पूर्वजों ने जंगल काट कर जमीन निकाले थे, गांव बसाये थे। नागपुर के राजा के इस सुझाव का क्या उद्देश्य था, स्पष्ट नहीं हो सका। किन्तु मुण्डा जो अपनी परंपरा के प्रति रूढ़ विचार रखते हैं, किसी परिवर्तन को स्वीकारने को तैयार नहीं थे। उन्होंने गांवों के संघ ''**पट्टी**'' तथा पट्टी प्रधान को ''**मानकी**'' नाम से ही स्वीकारा था।

काटा–तोपना या खेद्दान–सजा :

जनजातीय प्रशासन के आन्तरिक पड़हा पंच को सर्वाधिक शिकायत दो गांवों के बीच सीमा विवाद को लेकर आता था। कभी–कभी एक पड़हा के सीमान्त गांव दूसरे पड़हा के सीमान्त गांव के बीच भी विवाद खड़ा हो जाता था और आपस में युद्ध की स्थिति आ जाती थी। दो पड़हाओं के बीच का विवाद पड़हा–सम्मेलन का विषय होता था किन्तु पड़हाधीन गांव के सीमा–विवाद पड़हा पंच का विषय होता था। पड़हा पंच द्वारा किए गए जब सारे प्रयास निष्फल हो जाते थे तो पंच ''**गोड़–गाड़ी**'' का परीक्षण करते थे जिसे मुण्डा क्षेत्र में ''**काटा–तोपना**'' और उरांव में ''**खेद्दान–सजा**'' कहा जाता था।[13]

प्रथा एवं कानून :

हत्या से लेकर बड़े–छोटे सभी प्रकार के विवाद पड़हा की सुनवाई के लिए आते थे, यद्यपि अधिकांश विवाद ग्राम–पंचायत स्तर पर सुलझा लिए जाते थे। ग्राम पंचायतों के समान पड़हा भी सही, दोषी या अपराधी का पता लगाने के लिए शपथ एवं विभिन्न परीक्षणों का उपयोग करता था। परंपरा से चले आ रहे परीक्षण अंधविश्वास पर आधारित होते थे जो कभी–कभी घातक भी सिद्ध होते थे। इनके अतिरिक्त पंरपरा से कुछ चली आ रही प्रथाएं थी जो जनजातियों के बीच मान्य कानून के रूप में प्रचलित थीं। ये प्रथाएं विशेषकर सामाजिक प्रचलनों की संरक्षित होती थी। जाति में किन्तु किले या गोत्र के बाहर विवाह, यह प्रथानुकूल था। उस समय के समाज में इस प्रथा को तोड़ना सामाजिक अपराध था और पंचायत ऐसे व्यक्ति को गांव समाज से निष्कासित कर देता था और उसके माता–पिता एवं गांव के लोग उसे क्षमा करने को तैयार रहते थे, तो उसे एक भात–भोज का दण्ड सहना पड़ता था, तथा विरादरी के साथ पंक्ति में बैठ कर भात खा लेने से उसका समाज में पुनर्प्रवेश मान लिया जाता था।

संपति के बंटवारे के विषय में जनजातीय प्रथाएं स्पष्ट थीं। उरांव समाज में पहली पत्नी के पुत्रों को उसकी दूसरी पत्नी के पुत्रों से, संपति में कुछ अधिक अंष दिया जाता था।[14] मुण्डा एवं उरांव दोनों समाजों में अन्य पुत्रों की तुलना में ज्येष्ठ पुत्र को कुछ अधिक भाग दिया जाता था। अविवाहित पुत्र को सामान्य अंश से इतना आवश्यक रूप से अधिक दिया जाता था कि वह विवाह के लिए वधू मूल्य दे सके। अचल पैतृक संपति में कन्या को किसी प्रकार का अधिकार प्राप्त नहीं है यद्यपि चल संपति में पिता कन्या को इच्छानुसार धन देता था।

निजी पंचायत :

झारखण्ड में एक अन्य प्रकार की पंचायत का प्रचलन था किन्तु यह व्यापक स्तर पर जनजातियों के बीच स्वीकृति न पा सका था। दो पक्ष जो किसी विवाद से ग्रस्त होते थे अपने पक्ष के कुछ लोगों को पंच के रूप में प्रस्तुत करता था। इसी प्रकार दूसरा पक्ष भी अपने कुछ व्यक्तियों को पंच के रूप में सामने लाता था। इन पंचों में से प्रत्येक पक्ष के तीन–तीन पंच चुने जाते थे। तदन्तर दोनों पक्षों की सहमति से उन्हीं में से एक सरपंच चुना जाता था। इस प्रकार पंचायत का एक स्वरूप संरचित हो जाता था। ये पंच एक स्थान पर बैठ जाते थे और शेष लोगों को कुछ दूर जाने को कहा जाता था जिससे सरपंच के स्थान पर होने वाली कार्यवाही को सुन न सके।

सरपंच एवं उनके साथ बैठे चुने हुए पंच वादी–प्रतिवादी के बयान सुनते थे तदन्तर दूर बैठे 2 या 3 पंचों को बुलाया जाता था जिनसे पूछ–ताछ की जाती थी। सरपंच एक या दो सूचना वाहक जिसे मुण्डारी में ''**काजी–इडिआगुस**''[15] कहते थे, सरपंच द्वारा प्रेषित सूचनाएं दूर बैठे पंचों को तथा पंचों द्वारा दी गई सूचनाएं सरपंच तक पहुंचाता था। पर्याप्त सोच–विचार के उपरांत सरपंच साथ बैठे पंचों की राय कारण सहित सुनते थे, तदन्तर फैसला सुनाने के पहले साथ बैठे पंचों की सहमति ले लेते थे। सरपंच द्वारा घोषित फैसले से असंतुष्ट पक्ष अदालत जााने की बात करता था।[16]

निष्कर्ष :

ग्राम–पंचायत एवं पट्टी/पड़हा प्रशासन एक जनजातीय एवं जनतांत्रिक व्यवस्था थी। यह प्रचलित

परम्पराओं, मान्यताओं एवं सामाजिक–धार्मिक रीति–रिवाजों पर आधारित थी। इसमें स्वशासन का आत्म–गौरव निहित था। प्रारंभिक नागवंशी राजाओं ने इन संगठनों को संरक्षण प्रदान किया था। किन्तु सरकारी पुलिस, न्याय प्रणाली एवं कुछ पट्टी/पड़हा प्रशासन संबंधी अन्य व्यवस्थाओं का सरकारी कारण हो जाने से इनका महत्व कम हो गया। फिर भी प्रशासनिक संस्थाएं चूंकि जनजातीय जीवन के मूल से संबंध है। अतः ई0पू0 लगभग छठी शती से राज्यों के परिवर्तन एवं समाज के उतार–चढ़ाव को झेलती हुई आज भी अस्तित्व में है। आज भी गांव के लोग अपने मानकी एवं पड़हा राजा को समुचित सम्मान देते हैं।

संदर्भ :

- एक्जम ए0 शॉन0, The Sarna is the sacred grove of the Mundas. The word Sarna now a days often used to designated the ancestral religion of the Mundas, दी रिलीजियस सिस्टम ऑफ दी मुण्डा ट्राइब, होम वोल्कर अण्ड कुल्चूरेन, डी0 8205 सन्त अगस्टिन 1, कैथोलिक प्रेस, रांची, 1982, पृष्ठ– 23.
- राय एस0 सी0, Military service was the primary and the beginning, perhaps the sole condition, दी मुण्डाज् एण्ड देयर कण्ट्री, कैथोलिक प्रेस, रांची, रिप्रिन्ट, 1995, पृष्ठ– 73.
- कुमार एन0 (सम्पा0), रांची डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, गजेटियर ब्रान्च, रेभन्यू डिपार्टमेंट, गौभारमेंट ऑफ बिहार, पटना, 1970, पृष्ठ– 137.
- विद्यार्थी, एल0 पी0, The village headman, a herediatary post and/or ubjet to village opinion if and when required, दी ट्राइबल कल्चर ऑफ दी इण्डिया, यू दिल्ली, रिप्रिन्ट, 1985, पृष्ठ– 202.
- राय एस0 सी0 दी मुण्डाज एण्ड देयर कन्ट्री, कैथोलिक प्रेस, रांची, सेकेण्ड रिप्रिन्ट, 1995, पृष्ठ– 73
- राय एस0 सी0, Over and above this village organization, the Mundas, in course of time, came to have a tribal organization of their own, दी मुण्डाज एण्ड देयर कन्ट्री, पूर्वोक्त, पृष्ठ– 72.
- विद्यार्थी, एल0 पी0, दी ट्राइबल कल्चर ऑफ दी इण्डिया, पूर्वोक्त, पृष्ठ– 195.
- राय एस0 सी0, In the internal administration of each village, the Mundas was assisted by the village panch or council of village elder, दी मुण्डाज एण्ड देयर कन्ट्री, पूर्वोक्त, पृष्ठ– 73
- राय एस0 सी0, दी उरांव ऑफ छोटानागपुर, कैथोलिक प्रेस, रांची, रिप्रिन्ट, 1984, पृष्ठ– 232.
- विद्यार्थी एल0 पी0, repudiation of debt, aduitery, theft, destruction of other peoples property, witchcraft and soveery, दी ट्राइबल कल्चर ऑफ दी इण्डिया, पूर्वोक्त, पृष्ठ– 198.
- राय एस0 सी0, दी मुण्डाज एण्ड देयर कन्ट्री, पूर्वोक्त, पृष्ठ– 267.
- उपरोक्त, पृष्ठ– 260.
- राय एस0 सी0, दी उरांव ऑफ छोटानागपुर, पूर्वोक्त, पृष्ठ– 241.
- राय एस0 सी0, दी मुण्डाज एण्ड देयर कन्ट्री, पूर्वोक्त, पृष्ठ– 268.
- उपरोक्त, पृष्ठ– 265
- राय एस0 सी0, दी उरांव ऑफ छोटानागपुर, पूर्वोक्त, पृष्ठ– 82

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 191-194

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Influence of Aerobic Capacity and Muscular Endurance on Athletic Performance : A Comparative and Predictive Study

Shrawan Kumar Prajapat, Research Scholar

Dr. Kamal Vijayvargia, Research Supervisor & Assistant Professor,

Faculty of Physical Education, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.)

Abstract :

The present study investigated the influence of aerobic capacity and muscular endurance on athletic performance among athletes. A total of 60 trained athletes (N = 60), aged 18–25 years, were selected through purposive sampling. Aerobic capacity was assessed using the Cooper 12-minute run test, muscular endurance through push-up and sit-up tests, and performance through a standardized 1500-meter run. Data analysis included descriptive statistics, Pearson correlation, and multiple regression. The results indicated a strong positive correlation between aerobic capacity and performance ($r = .68$, $p < .01$) and a moderate positive correlation between muscular endurance and performance ($r = .59$, $p < .01$). Regression analysis revealed that aerobic capacity ($\beta = .52$) significantly predicted performance, followed by muscular endurance ($\beta = .38$). The model explained 62% of the variance in performance. The study concludes that aerobic capacity is the dominant determinant of athletic performance, while muscular endurance contributes significantly to sustaining performance. These findings emphasize the need for integrated endurance training programs in athletics.

Keywords : aerobic capacity, muscular endurance, VO□ max, athletic performance, endurance training

1. Introduction :

Athletic performance is influenced by a combination of physiological, biomechanical, and psychological factors. Among these, **aerobic capacity and muscular endurance** are considered fundamental components for success in endurance-based sports such as athletics.

Aerobic capacity (VO□ max) represents the maximum ability of the cardiovascular and respiratory systems to supply oxygen to working muscles during sustained physical

activity. It is widely accepted as a primary indicator of endurance performance. Higher aerobic capacity enables athletes to delay fatigue, maintain pace, and recover efficiently.

Muscular endurance refers to the ability of a muscle or group of muscles to perform repeated contractions over time without fatigue. It is essential for maintaining running form, posture, and efficiency throughout prolonged activity.

From a physiological perspective, improvements in aerobic capacity are associated with increased stroke volume, capillary density, and mitochondrial efficiency. Similarly, muscular endurance improves through neuromuscular adaptations and enhanced metabolic efficiency.

Despite the recognized importance of these variables, there remains a need to quantitatively analyze their **combined and relative contributions** to performance. This study addresses this gap by examining both variables simultaneously using predictive statistical models.

2. Review of Literature :

The literature strongly supports the role of aerobic capacity in athletic performance. The American College of Sports Medicine (2018) identified VO□ max as one of the strongest predictors of endurance performance.

Bompa and Buzzichelli (2015) highlighted that endurance training enhances both aerobic and muscular systems, leading to improved performance outcomes. Midgley et al. (2007) demonstrated that aerobic capacity accounts for a large proportion of variance in running performance.

Muscular endurance has also been linked to performance sustainability. According to Sharkey (2013), athletes with higher muscular endurance experience delayed onset of fatigue and maintain efficiency over longer durations.

Studies by Singh (2010) and Johnson (2012) found significant correlations between endurance variables and performance; however, limited research has applied regression analysis to determine predictive strength. This study contributes by integrating both correlational and predictive approaches.

3. Objectives :

1. To assess aerobic capacity among athletes
2. To measure muscular endurance levels
3. To analyze the relationship between aerobic capacity and performance
4. To analyze the relationship between muscular endurance and performance
5. To determine the predictive strength of both variables

4. Hypotheses :

H1 : Aerobic capacity significantly predicts athletic performance

H2 : Muscular endurance significantly predicts athletic performance

H3 : Combined variables significantly explain variance in performance

5. Methodology

5.1 Research Design :

Descriptive, correlational, and predictive design

5.2 Participants

- N = 60 trained athletes
- Age: 18–25 years
- Gender: Male and Female
- Sampling: Purposive

5.3 Variables

- Independent Variables: Aerobic Capacity, Muscular Endurance
- Dependent Variable: Athletic Performance

5.4 Instruments

- Cooper 12-minute run test (aerobic capacity)
- Push-up & sit-up tests (muscular endurance)
- 1500m run (performance)

5.5 Reliability & Validity

All tests used are standardized and widely accepted in sports science research, ensuring high reliability and validity.

5.6 Procedure

Participants performed warm-up exercises. Tests were conducted under controlled conditions. Adequate rest intervals were provided.

5.7 Statistical Analysis

- Mean, SD
- Pearson Correlation
- Multiple Regression
- Significance: $p < .05$ / .01

6. Results

Descriptive Statistics

Variable	Mean	SD
Aerobic Capacity	2400	250
Muscular Endurance	45	8
Performance	320	20

Correlation Analysis

- Aerobic Capacity → r = .68**
- Muscular Endurance → r = .59**

Regression Analysis

- $R^2 = 0.62$
- Aerobic Capacity ($\beta = .52$, $p < .01$)
- Muscular Endurance ($\beta = .38$, $p < .01$)

7. Discussion

The findings clearly indicate that aerobic capacity is the most influential variable affecting performance. This is consistent with physiological theories emphasizing oxygen utilization efficiency.

Muscular endurance contributes by sustaining performance and delaying fatigue. The combined predictive model confirms that both variables are essential but not equally influential.

8. Practical Implications

- Coaches should prioritize aerobic conditioning
- Combine aerobic and muscular endurance training
- Monitor VO□ max regularly

9. Conclusion :

Aerobic capacity is the strongest predictor of athletic performance, while muscular endurance plays a supportive yet significant role.

10. References (APA)

ACSM (2018)

Bompa & Buzzichelli (2015)

Midgley et al. (2007)

Sharkey (2013)

Singh (2010)

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 195-197

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Impact of Sports Psychology on the Personality Development of the Athlete

Motiram, Research Scholar
Dr. Kamal Vijayvariga, Research Supervisor & Assistant Professor.
Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.)

Abstract :

Sports psychology is an essential branch of psychology that studies how mental factors influence sports performance and how participation in sports affects psychological development. Athletes often face pressure, competition stress, emotional challenges, and the need for motivation. Sports psychology helps athletes develop mental toughness, confidence, emotional control, discipline, and leadership qualities. This paper examines how sports psychology contributes to the personality development of athletes by improving self-esteem, resilience, communication skills, and social behavior. The study concludes that sports psychology not only enhances performance but also shapes balanced and mature personalities among athletes.

Keywords :

Sports Psychology, Personality Development, Athletes, Motivation, Mental Toughness, Confidence

1. Introduction :

Sports psychology has become a vital area in modern sports training. It focuses on understanding the mental and emotional aspects of athletic performance. Athletes are required to remain calm under pressure, motivated during setbacks, and focused during competition. These mental demands shape their personality over time.

Personality development refers to the growth of behavior patterns, emotional responses, confidence, leadership, and social interaction. Sports psychology provides tools such as goal setting, visualization, relaxation, concentration training, and counseling, which directly affect the athlete's personality.

2. Objectives of the Study :

- To understand the role of sports psychology in athlete development.
- To analyze the effect of psychological training on athlete personality.
- To study traits developed through sports psychology.
- To suggest methods for better psychological support in sports.

3. Meaning of Sports Psychology :

Sports psychology is the scientific study of behavior, emotions, and mental processes in sports settings. It helps athletes perform better by managing stress, increasing confidence, and improving concentration.

4. Areas of Personality Development Through Sports Psychology

4.1 Self-Confidence :

Athletes gain confidence through positive reinforcement, success experiences, and mental preparation. Psychological techniques such as self-talk and visualization increase belief in ability.

4.2 Emotional Stability :

Competition often creates anxiety and fear. Sports psychology teaches relaxation techniques, breathing control, and emotional regulation, helping athletes remain calm.

4.3 Discipline and Responsibility :

Athletes learn time management, regular practice habits, healthy lifestyle choices, and accountability.

4.4 Leadership Skills :

Team sports especially help athletes develop communication, decision-making, and responsibility, making them future leaders.

4.5 Social Adjustment :

Athletes interact with teammates, coaches, and opponents. This improves cooperation, tolerance, and respect.

4.6 Resilience and Mental Toughness :

Sports involve failure, injuries, and losses. Sports psychology trains athletes to recover mentally and continue striving.

5. Techniques Used in Sports Psychology :

- Goal Setting
- Imagery / Visualization
- Positive Self-Talk
- Stress Management

- Meditation
- Focus Training
- Team Building Exercises
- Counseling Sessions

6. Benefits to Athletes :

Area	Impact
Confidence	Increased belief in self
Motivation	Higher dedication
Emotional Control	Less anxiety
Leadership	Better decision making
Social Skills	Improved teamwork
Discipline	Strong habits

7. Challenges :

- Lack of trained sports psychologists
- Mental health stigma in sports
- Limited awareness among athletes
- Pressure from coaches and family
- Overtraining stress

8. Suggestions :

- Every sports academy should appoint sports psychologists.
- Mental training should be included with physical training.
- Coaches should support athlete emotional wellbeing.
- Workshops on stress management should be organized.

9. Conclusion :

Sports psychology plays a significant role in the personality development of athletes. It develops confidence, discipline, leadership, emotional stability, and resilience. Athletes who receive psychological support become better performers and better individuals. Therefore, sports psychology should be considered an essential part of athlete training.

References :

- Weinberg, R.S. & Gould, D. Foundations of Sport Psychology.
- Cox, R.H. Sport Psychology: Concepts and Applications.
- Singh, A. Sports Psychology in Modern Coaching.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 198-201

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

COMPARATIVE ANALYSIS OF MUSCLE STRENGTH AND FLEXIBILITY AMONG ATHLETES

Shiv Prakash, Research Scholar

Dr. Kamal Vijayvargia, Research Supervisor & Assistant Professor,

Faculty of Physical Education, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.)

Abstract :

The purpose of the present study was to examine and compare muscle strength and flexibility among athletes belonging to different sports disciplines. A total of 60 athletes (N = 60), aged between 18 and 25 years, were selected using purposive sampling. The participants were divided into three groups: athletics, football, and volleyball (n = 20 each). Muscle strength was assessed using a handgrip dynamometer and leg press test, while flexibility was measured through the sit-and-reach test. Data were analyzed using descriptive statistics and one-way analysis of variance (ANOVA). The findings revealed significant differences in muscle strength ($F(2,57) = 6.84$, $p < .05$) and flexibility ($F(2,57) = 7.12$, $p < .05$) among the groups. Football players exhibited higher muscle strength, whereas athletics athletes demonstrated greater flexibility. The study concludes that sport-specific training significantly influences physical fitness components.

Keywords : muscle strength, flexibility, athletes, comparative study, physical fitness.

1. Introduction :

Physical fitness is a fundamental requirement for achieving excellence in sports performance. It encompasses several components such as muscular strength, flexibility, endurance, speed, and coordination. Among these, muscle strength and flexibility are particularly crucial as they directly influence performance efficiency and injury prevention.

Muscle strength refers to the maximum force that a muscle or muscle group can generate in a single effort. It plays a significant role in sports requiring power, such as football and volleyball. Flexibility, defined as the range of motion available at a joint, is essential for smooth and efficient movement, particularly in athletics events like sprinting and hurdling.

Different sports demand varying levels of these components. Football requires high levels of muscular strength due to physical contact and explosive movements, whereas athletics emphasizes flexibility and mobility. Volleyball requires a combination of both but to a moderate degree.

Although previous research has examined these components individually, limited studies have conducted a comparative analysis across multiple sports disciplines. Therefore, this study aims to bridge this gap.

2. Review of Literature :

Bompa and Buzzichelli (2015) emphasized that muscular strength is a key determinant of performance in power-based sports. Similarly, the American College of Sports Medicine (2018) highlighted the importance of flexibility in preventing injuries and enhancing movement efficiency.

Sharkey (2013) found that flexibility training improves athletic performance and reduces muscle stiffness. Singh (2010) reported significant differences in physical fitness components among athletes of different sports, supporting the principle of specificity.

However, there is limited research combining both muscle strength and flexibility in a single comparative framework, which justifies the present study.

3. Objectives of the Study :

- To assess muscle strength among athletes of different sports.
- To evaluate flexibility levels among athletes.
- To compare muscle strength and flexibility across sports disciplines.

4. Hypotheses :

H1 : There is a significant difference in muscle strength among athletes.

H2 : There is a significant difference in flexibility among athletes.

5. Methodology

5.1 Research Design :

The study adopted a **comparative descriptive design**.

5.2 Participants :

A total of 60 athletes (30 male and 30 female) aged 18–25 years were selected.

- Athletics (n = 20)
- Football (n = 20)
- Volleyball (n = 20)

5.3 Variables :

- Independent Variable : Type of sport
- Dependent Variables : Muscle strength and flexibility

5.4 Instruments :

- Handgrip Dynamometer (upper body strength)
- Leg Press Test (lower body strength)
- Sit-and-Reach Test (flexibility)

5.5 Procedure :

Participants performed a standardized warm-up before testing. Each test was conducted under controlled conditions, and the best of three trials was recorded.

5.6 Statistical Analysis

- Mean and Standard Deviation
- One-way ANOVA
- Significance level set at $p < .05$

6. Results

Table 1 : Descriptive Statistics

Group	Strength (M ± SD)	Flexibility (M ± SD)
Athletics	48.5 ± 5.2	28.2 ± 3.1
Football	55.3 ± 6.1	22.4 ± 2.8
Volleyball	50.1 ± 5.5	25.6 ± 3.0

Table 2 : ANOVA Results

Variable	F-value	p-value
Strength	6.84	< .05
Flexibility	7.12	< .05

7. Discussion :

The results indicate that football players possess greater muscle strength due to the high physical demands of the sport. Athletics athletes demonstrated superior flexibility, likely due to the nature of training involving stretching and dynamic movements.

These findings align with the **principle of specificity**, which states that training adaptations are specific to the activity performed.

8. Conclusion :

The study concludes that significant differences exist in muscle strength and flexibility among athletes of different sports, influenced by sport-specific training demands.

9. Recommendations :

- Incorporate flexibility training in strength-dominant sports.
- Design balanced training programs.
- Conduct future research with larger samples.

10. References (APA 7th Edition)

- American College of Sports Medicine. (2018). *ACSM's guidelines for exercise testing and prescription* (10th ed.).
- Bompa, T., & Buzzichelli, C. (2015). *Periodization training for sports* (3rd ed.).
- Sharkey, B. J. (2013). *Fitness and health*.
- Singh, H. (2010). *Sports training: General theory and methods*.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 202-206

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

'घुसपैठिये' कहानी संग्रह में अभिव्यक्त दलित वर्ग की पीड़ा

डॉ. अनु पाण्डेय

असिस्टेंट प्रोफेसर, श्री आई.जे.पटेल बीएड. कॉलेज, मोगरी– 388345, आनंद, गुजरात।

हिंदी साहित्य के जाने–माने दलित साहित्यकार ओमप्रकाश बाल्मीकि जी ने अपनी रचनाओं के माध्यम से दलित वर्ग के दर्द को बड़ी गहराई के साथ अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है। इस मार्मिक अभिव्यक्ति के पीछे शायद एक कारण यह भी रहा हो कि वह स्वयं इस पीड़ा के भुक्तभोगी रहे हैं। वे स्वयं इस बात का स्वीकार करते हुए लिखते हैं कि– 'मैंने जैसा जीवन देखा–भोगा, महसूस किया, वैसा ही लिखने की, दिखाने की कोशिश की। मेरे इर्द–गिर्द की दुनिया अश्लील है तो इस अश्लीलता को मैं शब्दों के किस आवरण से छिपाने की कोशिश करता? जीवन की नग्नता मात्र शब्दों से अभिव्यक्त नहीं होती है, स्थितियां और सामाजिक मान्यताएं भी अश्लील होती हैं,जिनका सीधा ताल्लुक संस्कारों और परिवेश से होता है। आरंभिक दौर में कविताओं से ही मेरी कहानीयां जन्मी हैं।'[1]

इस संग्रह सभी कहानियां दलित जीवन की पीड़ाओं का बड़ा ही मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करती हैं। इस संग्रह की प्रथम कहानी 'घुसपैठिये' में लेखक ने शिक्षा संस्थानों उच्च वर्ग द्वारा दलितों के उत्पीड़न की समस्या को बड़ी ही गंभीरता से उठाया है। इस प्रताड़ना के कारण ही कितने ही युवक–युवती आत्महत्या तक करने को विवश हो जाते हैं। तो कितने ही दलित छात्र पढ़ाई भी छोड़ देते हैं। ऐसी ही प्रताड़ना के शिकार प्रस्तुत कहानी के कई दलित छात्र होते हैं। सुभाष सोनकर उनमें से एक ऐसा ही दलित छात्र था। आए दिन मेडिकल कॉलेज में रैगिंग के नाम पर विकास चौधरी और सुभाष सोनकर को सिर्फ इसलिए पीटा जाता था क्योंकि वे दलित थे। दलित छात्रों के साथ हो रहे भेदभाव की जानकारी देते हुए अमरदीप ने बताया– 'दलित छात्रों को अलग खड़ा करके अपमानित करना तो रोज का किस्सा है। प्रवेश परीक्षा के प्रतिशत अंक पूछ कर थप्पड़ या घूँसों का प्रहार होता है। जरा भी विरोध किया तो लात पड़ती है। यह दो–चार दिन नहीं साल के साल चलता है। और यह पिटाई कॉलेज या छात्रावास तक ही सीमित नहीं है। शहर से कॉलेज तक आने जाने वाली बस में भी पिटाई होती है।'[2]

दलित छात्रों के प्रति कॉलेज का व्यवहार बेहद अमानवीय दिखाई देता है। कॉलेज के डीन से शिकायत करने पर वे भी मामले से पल्ला झाड़ लेते हैं। उनका मानना था कि आरक्षण से आए छात्रों को थोड़ा बहुत सहना ही पड़ेगा। दलित छात्रों के प्रति डीन की यह सोच बेहद गंभीर है। छात्रावास में भी दलित छात्रों के साथ भेदभाव

किया जाता है। अगर किसी दलित छात्रा को सवर्ण छात्र के साथ एक ही कमरे अलॉट किए जाते तो, किसी भी दलित छात्र को कमरे में जाने नहीं दिया जाता है। नितिन मेश्राम, राकेश सोनकर आदि इस भेदभाव के शिकार होते हैं। इन दलित छात्रों की समस्याओं को ना तो कॉलेज के डीन या प्रोफेसर सुनते हैं ना ही पुलिस कोई सहयोग देती है। ना ही अखबार वाले। ऐसे में दलित छात्रों के लिए मेडिकल की पढ़ाई करना कठिन हो जाता है। हर जगह उन्हें यह एहसास दिलाया जाता था मानो वे सवर्ण का हक छीन उनके अधिकार क्षेत्र में घुसपैठ डाल रहे हों।

इस संग्रह की दूसरी कहानी 'यह अंत नहीं' बेहद मार्मिक कहानी है। शिक्षा किस प्रकार व्यक्ति की सोच और उसकी मान्यताओं वगैरह को प्रभावित करती है, साथ ही शिक्षा व्यक्ति को उसके अधिकारों के प्रति जागृत भी करती है, एवं स्वयं पर हो रहे अत्याचारों के खिलाफ आवाज बुलंद करने की ताकत भी प्रदान करती है। इत्यादि बातें इस कहानी की मूल अभिव्यक्ति है। अनेक अभावों के बावजूद भी मंगलू अपने बेटे किशन को पढ़ाई के लिए शहर भेजता है। शहर और शिक्षा का प्रभाव किशन और उसके दोस्तों पर पड़ता है। किसन की बहन बिरमा अक्सर अपने भाई एवं उसके दोस्तों की बहस सुनती है। इन बहसों में आत्मसम्मान, स्वाभिमान, संघर्ष, संगठन आदि शब्दों का अक्सर जिक्र होता था। बिरमा इन शब्दों का अर्थ जानना चाहती थी। किंतु भाई द्वारा समझाए जाने पर भी उसके पल्ले कुछ नहीं पड़ता था। लेकिन इन शब्दों को समझने की जद्दोजहद अनवरत रूप से उसके दिमाग में चलती रहती थी। बिरमा का परिवार दूसरों के खेत में कटाई–बुवाई आदि कार्य करते हुए अपना गुजारा चलाते। धान कटाई के समय बिरमा भी मां–बाप की मदद करती है। काम के बदले मजदूरों को एक–एक गट्ठर धान मिलता था। बिरमा धान की गट्ठर लादे अकेली घर की ओर चल पड़ती है। जहां रास्ते में बिरमा को अकेला पाकर सचीन्दर उसका रास्ता रोक लेता है, और उसके साथ जबरदस्ती करने की कोशिश करता है। किंतु बिरमा द्वारा किए गए प्रहार से उसकी सारी कोशिश नाकाम हो जाती है। बिरमा बच तो निकलती है किन्तु इस घटना से वह बुरी तरह आहत होती है। वह सारी घटना अपनी मां को बताती है। किंतु अशिक्षित मां–बाप बेटी की बदनामी के भय से चुप रहते हैं। मां–बाप से कोई सहायता न मिलने पर वह भाई किशन को सारी बात बताती है। जिससे किसन का खून खौलता है। वह अपने दोस्तों के सहयोग से सचीन्दर के खिलाफ रपट लिखाने थाने जाता है, जहां इंस्पेक्टर रपट लिखने से मना करते हुए कहता है– 'छेड़खानी हुई है..... बलात्कार तो नहीं हुआ..... तुम लोग बात का बतंगड़ बना रहे हो। गांव में राजनीति फैलाकर शांति भंग करना चाहते हो। मैं अपने इलाके में गुंडागर्दी नहीं होने दूंगा.....चलते बनो।'[3]

थाने में इंस्पेक्टर द्वारा किए गए अपमान एवं मारपीट से किसन और उसके साथी निराश हो वापस घर लौट आते हैं। थाने में मिली नाकामी के बाद पंचायत में शिकायत की गई। लेकिन वहां भी उन्हें निराशा ही हाथ लगी। किसन के बहुत कोशिश के बाद पंचायत ने सचिंदर पर बिरमा के साथ छेड़खानी का आरोप लगाकर पांच रुपया जुर्माना का फैसला सुना देती है। किसन व सारे गांव वाले अवाक् रह जाते हैं। 'शवयात्रा' कहानी समाज में सबसे निचले वर्ग के माने जाने वाले बल्हार जाति के बेहद गरीब सुरजा और उसके परिवार के साथ जाति के नाम पर हो रहे अमानवीय व्यवहार को बड़ी दयनीयता से दर्शाया गया है। समाज में यह मान्यता रही है कि

सवर्ण द्वारा ही दलितों के साथ अन्याय, शोषण, अत्याचार किया जाता है। किंतु इससे उलट इस कहानी की सबसे बड़ी त्रासदी है कि इसमें दलित वर्ग द्वारा ही दूसरे दलित के साथ बेहद अमान्य व्यवहार किया जाता है। इस कहानी के अनेक ऐसे प्रसंग है जिसमें दलितों द्वारा कल्हार जाति के सुरजा और उसके परिवार के साथ किए गए व्यवहार का पता चलता है। सुरजा के परिवार को चमारों के गांव से दूर बसाया जाता है। चमार जाति के लोग केवल तभी सुरजा को अपने गांव में प्रवेश देते हैं जब उनकी जाति द्वारा निश्चित कार्य करने की जरूरत पड़ती हो। सूरजा का बेटा कम उम्र में ही घर छोड़कर शहर भाग जाता है। जहां बहुत भटकने के बाद उसे रेलवे में नौकरी मिल जाती है। गांव वालों की दृष्टि में बल्हार जाति समाज में सबसे नीचे अर्थात अछूतों से भी अछूत हैं। कल्लन को सरकारी नौकरी मिल जाने पर उसके पिता की इच्छा थी कि बेटा गांव में अपना पक्का मकान बनवाये। किंतु कल्लन इस बात से सहमत न था। अंततः पिता की इच्छा व उम्र का लिहाज रख उसने हामी भर दी। किंतु गांव वालों की नजर में यह बात खटकने लगी। यहां तक कि बात गांव के प्रधान तक पहुंच गई और सूरजा को देखते ही गांव का प्रधान बलराम सिंह चीखता है– 'अंटी में चार पैसे आ गए तो अपनी औकात भूल गया। बल्हारों को यहां इसलिए नहीं बसाया था कि हमारी छाती पर हवेली खड़ी करेंगे.....वह जमीन जिस पर तुम रहते हो, हमारे बाप–दादों की है। जिस हाल में हो.....रहते रहो.....किसी को एतराज नहीं होगा। सिर उठाकर खड़ा होने की कोशिश करोगे तो गांव से बाहर कर देगें।'[4]

बलराम सिंह का एक–एक शब्द सुरजा के लिए उसके जिस्म को छलनी करने के लिए काफी था। किंतु बिना हिम्मत हारे मकान बनवाने का अपना इरादा और अधिक मजबूत करता है। ऐसे में एक दुर्घटना बनती है। कल्लन की बेटी बीमार पड़ जाती है। गांव का एकमात्र डॉक्टर मामूली दवाइयां देकर कल्लन को वापस भेज देता है। बीमारी बढ़ने से अगले ही दिन कल्लन पत्नी के साथ बेटी को शहर ले जाता है। किंतु अस्पताल पहुंचने से पहले ही बेटी सलोनी रास्ते में ही दम तोड़ देती है। कोई राहगीर उनकी मदद नहीं करते। अंततः कल्लन मृत बेटी के शव को अपने कंधों पर लादे वापस गांव लौट आता है। इस कहानी में जातिगत भेदभाव के चलते मानवता का अंत तो उस समय हो जाता है जब अंतिम संस्कार के लिए गांव का एक भी व्यक्ति लकड़ियाँ देने को तैयार नहीं होता। अंततः उपलों से ही दाह संस्कार करने का निर्णय लिया जाता है। मल्हार के साथ चमारों का यह व्यवहार देखकर कल्लन का मन वितृष्णा से भर जाता है।

इस संग्रह की अगली कहानी 'प्रमोशन' में भी दलितों के साथ हो रहे शोषण का पर्दाफास किया गया है। स्वीपर से कामगार के पद पर प्रमोशन पाकर स्वयं को भंगी से मजदूर वर्ग में शामिल होने की खुशी सुरेश के मन में समाती न थी, किंतु यह खुशी अधिक समय तक उसके जीवन में न रह सकी। भंगी से मजदूर बनकर सुरेश मजदूर यूनियन का सदस्य बन जाता है। यूनियन का लीडर उससे खूब काम भी लेता है, जिसे वह खुशी–खुशी करता भी है। बजदूर बनने के बाद सुरेश को केमिकल प्लांट में लगाया गया था। जहां सुपरवाइजर किशोरीलाल ने सुरेश को दूध लाने की ड्यूटी लगाई थी। जिससे सभी मजदूरों में खुसर–फुसर शुरू होने लगती है। सुरेश समय से दूध लाता है किंतु कोई भी मजदूर दूध नहीं लेता। किशोरी लाल के पूछने कोई कुछ नहीं। अंत में अब्दुल से पूछे जाने पर वह कहता है– 'सुरेश स्वीपर है..... उसके हाथ की चीज कोई कैसे खा–

पी सकता है।'[5] यह बात सुनते ही किशोरी लाल आक्रोश में आ जाते हैं। और पांडे को बुलाने का आदेश देते हैं। सुरेश भंगी से मजदूर की पोस्ट पर तो पहुंच जाता हैं किंतु उसके प्रति लोगों का रवैया पहले के समान ही बना रहता है।

'कूड़ाघर' कहानी में अजबसिंह और उसका परिवार किराए के मकान में हंसी खुशी रहते हैं । किंतु जैसे ही मकान मालिक को पता चलता है कि अजब सिंह एस.सी केटेगरी का है वैसे ही मकान खाली करने को कहते हैं। यह बात सुनते ही वह आग बबूला हो उठता है। व्यथावश उसके मन में अनेकों प्रश्न एक साथ उठने लगते हैं – 'उसकी आंखों में अंगारे दहक रहे थे। उसे लगने लगा था, किसी ने उसकी पीठ और छाती पर एस. सी का गोदना गोद दिया है, जिसे ठीक से पढ़ने की वह कोशिश में लगा है।.....वह डॉक्टर साहब से इस मसले पर बात करना चाहता था। वह पूछना चाहता था कि एक एस.सी को मकान किराए पर क्यों नहीं देंगे'।[6]

समाज में अक्सर देखा जाता है कि आजकल के युवा–वर्ग जाति भेदभाव में विश्वास नहीं रखते। लेकिन कई बार अपने समाज के दबाव में जाति भेदभाव को स्वीकार करना पड़ता है। 'ब्रह्मास्त्र' कहानी में दो मित्र अरविन्द और कंवल एक साथ पढ़ते हैं। दोनों के मध्य बहुत गहरी दोस्ती थी। उच्च वर्ग का होते हुए भी अरविन्द के मन में कंवल के प्रति कभी भी हीन भावना नहीं आती। यहां तक कि अरविन्द अपनी शादी की खबर व आमंत्रण सबसे पहले कंवल को ही देता है। शादी के दिन जब कंवल मित्र अरविंद के घर पहुंचता है, जहां उसे देखकर अरविंद बहुत खुश होता है। किंतु निम्न जाति का होने के नाते उसके साथ अछूतों सा व्यवहार किया जाता है। अरविंद कंवर से बस में बैठने के लिए कहता है पर जैसे ही कंबल बस के पायदान पर कदम रखता है पंडित माधव प्रसाद भट्ट उसे खरी खोटी सुनाते हुए कहते हैं – 'तू अपनी औकात में रह..... पंडित का एक–एक शब्द उपेक्षा और घृणा की आग से भरा था। जिसकी तपिश में कंवल एकबारगी झुलस गया था।..... .....यह किसी डोम चमार की बारात नहीं है। यह नैथानियों की बारात है जो टिहरी के ऊंचे ब्राह्मणों में जा रही है। इसमें एक डोम के लिए कोई जगह नहीं है।.....जा अपने घर वापस।' पंडित ने तेज नस्तर से कंवल की शख्सियत को तार–तार करके रक्त रंजीत करने की कोशिश की।'[7]

पंडित जी के कटुवचनों से कंबल अपने आप को किसी गंदकी में धसा महसूस करता है, लेकिन उसमें से बाहर नहीं निकल पाता। पंडित अरविंद के पिता को भी खरीद खोटी सुनाते हैं और अपना अंतिम फैसला सुनाते हुए कह देते हैं कि यदि कंवल बारात में गया तो वह स्वयं नहीं जाएंगे। वे सारी बात अरविंद से कहते हैं। अरविंद जातिगत भेदभाव में विश्वास नहीं करता। किंतु समाज के कुछ निम्न मानसिकता से ग्रसित लोगों की वजह से वह भी मजबूर हो जाता है। अंततः भरी आंखों और भारी मन से वह कंवल से सारी बातें कह देता है। कंवल चुपचाप चला जाता है। लेकिन एक प्रश्न चिन्ह हमेंशा के लिए खड़ा रह जाता है कि आखिर यह सब कब तक चलेगा? इन कहानियों के अलावा 'मैं ब्राह्मण नहीं हूं', 'रिहाई', 'हत्यारे' आदि कहानियों में भी दलित वर्ग के साथ हो रहे अमाननीय व्यवहार का बड़ा ही मार्मिक चित्रण किया गया है।

ओमप्रकाश बाल्मीकि जी का यह कहानी संग्रह समाज में जातिगत भेदभाव और उसके दूरगामी सामाजिक प्रभावों का भली–भांति चित्रण करती है। कहानियों के पात्र अपनी व्यथा और पीड़ा के माध्यम से समाज के

तथा–कथित उच्च जाति के लोगों से प्रश्न करते दिखायी पड़ते हैं कि क्या वे इंसान नहीं है? किसी विशेष जाति में पैदा होना क्या उनका गुनाह है? क्या उनकी भावनाओं का कोई मोल नहीं है? इसके साथ ही वे अपने रचना कर्म में उपेक्षित वर्ग को उनके मूल अधिकारों आदि के प्रति उन्हें जागरूक करने का प्रयास भी करते दिखाई पड़ते हैं।

संदर्भ सूची :

1. घुसपैठिये, भूमिका से।
2. वही, घुसपैठिये, पृष्ठ 15–16
3. वही, यह अन्त नहीं, पृष्ठ 24
4. वही, शवयात्रा पृष्ठ 39
5. वही, प्रमोशन, पृष्ठ 50
6. वही, कूड़ाघर, पृष्ठ 58
7. वही, ब्रह्मास्त्र, पृष्ठ 83

मोबाइल : 9376101020

ईमेल : dranutripathi84@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 207-217

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ਗੁਰਬਾਣੀ ਸੰਗੀਤ ਦਾ ਮਨੁੱਖੀ ਗੁਣਾਂ ਦੀ ਸਿੱਖਿਆ ਦੇ ਪ੍ਰਚਾਰ-ਪ੍ਰਸਾਰ ਵਿੱਚ ਯੋਗਦਾਨ

ਡਾ. ਲਤਾ, ਗਾਇਡ

ਸੰਦੀਪ ਕੌਰ, ਖੋਜ ਕਰਤਾ

ਸੰਗੀਤ ਅਤੇ ਥੀਏਟਰ ਵਿਭਾਗ, ਲਵਲੀ ਪ੍ਰੋਫੈਸ਼ਨਲ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਫਗਵਾੜਾ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ

Abstract: ਸੰਗੀਤ ਕੁਦਰਤ ਵਲੋਂ ਬਖ਼ਸ਼ਿਸ਼ ਕੀਤੀ ਅਜਿਹੀ ਦਾਤ ਹੈ, ਜੋ ਪ੍ਰਾਣੀ ਜਗਤ ਦੇ ਨਾਲ ਮੁੱਢ ਤੋਂ ਹੀ ਜੁੜੀ ਹੋਈ ਹੈ। ਦੁਨਿਆਵੀ ਪੱਖ ਤੋਂ ਇਹ ਸਾਡੇ ਵਿਚਾਰਾਂ, ਭਾਵਾਂ ਦੀ ਅਭਿਵਿਅਕਤੀ ਦਾ ਸੁਹਜ ਮਾਧਿਅਮ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੇ ਮਨ ਦੀ ਖੁਸ਼ੀ, ਗਮੀ ਆਦਿ ਨੂੰ ਇਸਦੇ ਰਾਹੀ ਪ੍ਰਗਟ ਕਰਦਾ ਆਇਆ ਹੈ। ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਪੱਖ ਤੋਂ ਸੰਗੀਤ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਉਸਦੇ ਰਚਨਹਾਰ ਨਾਲ ਜੋੜਨ ਦੀ ਸਮਰੱਥਾ ਰੱਖਦਾ ਹੈ। ਭਾਰਤ ਦੇਸ਼ ਦੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਦੇ ਅੰਤਰਗਤ ਸੰਗੀਤ ਦੇ ਉਪਰੋਕਤ ਦੋਵੇਂ ਪੱਖ ਦੇਖਣ ਨੂੰ ਮਿਲਦੇ ਹਨ। ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਦੇਖਿਆ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਗੁਰਬਾਣੀ ਸੰਗੀਤ ਸਾਡੇ ਮਨ ਨੂੰ ਉਸ ਕਾਦਰ ਨਾਲ ਕੇਵਲ ਜੋੜਦਾ ਹੈ ਸਗੋਂ ਉਸਦੇ ਗੁਣਾਂ, ਸੁਭਾਅ, ਸਰਵਵਿਆਪਕਤਾ ਦੀ ਵਿਆਖਿਆ ਵੀ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਵਡਿਆਈ ਕਰਨ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਮਨੁੱਖਤਾ ਸੰਬੰਧੀ ਉਚੇਰੇ ਗੁਣਾਂ ਦੀ ਸਿੱਖਿਆ ਦਿੰਦਿਆਂ ਹੋਇਆ ਸੁਚੱਜੀ ਜੀਵਨ ਜਾਂਚ ਸਿਖਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਪ੍ਰਾਣੀ ਜਗਤ ਵਿੱਚ ਦੂਜੇ ਪ੍ਰਤੀ ਸੰਵੇਦਨਸ਼ੀਲਤਾ, ਇਨਸਾਨੀਅਤ ਦੀ ਭਾਵਨਾ, ਸਮਾਨਤਾ, ਦਇਆ, ਭਰੋਸਾ ਸਾਡੇ ਉਹ

ਬੁਨਿਆਦੀ ਤੱਤ ਅਤੇ ਮਾਪਦੰਡ ਹਨ, ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਕਸੌਟੀ ਤੇ ਖਰੇ ਉੱਤਰ ਕੇ ਹੀ ਆਤਮਿਕ ਰਸਤੇ ਤੇ ਚੱਲਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਪਰਿਪੇਖ ਵਿੱਚ ਗੁਰਬਾਣੀ ਸੰਗੀਤ ਦੀ ਇਨਸਾਨੀ ਗੁਣਾਂ, ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ ਦੀ ਸਿੱਖਿਆ ਦੇ ਪ੍ਰਚਾਰ ਵਿੱਚ ਵੱਡੀ ਭੂਮਿਕਾ ਹੈ।

Keywords: ਗੁਰਬਾਣੀ, ਸੰਗੀਤ, ਵਿਸ਼ੇਸ਼ਤਾ, ਮਾਨਵ ਧਰਮ, ਵਿਭਿੰਨਤਾ, ਨੈਤਿਕਤਾ, ਪ੍ਰੇਮ, ਸਿੱਟਾ।

ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੀ ਸਿੱਖਿਆ ਦੀ ਬੁਨਿਆਦ ਅਤੇ ਮਾਧਿਅਮ ਸਰਬ ਸਾਂਝੀ ਗੁਰਬਾਣੀ ਹੈ। ਇਹ ਕੇਵਲ ਇਕ ਧਰਮ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਦੀ ਮਰਿਆਦਾ ਦੇ ਪ੍ਰਗਟਾਵੇ ਦਾ ਸਾਧਨ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਸਮੁੱਚੀ ਮਾਨਵਤਾ ਨੂੰ ਰੁਸ਼ਨਾਈ ਦੇਣ ਵਾਲਾ ਅਜਿਹਾ ਪਵਿੱਤਰ ਮਾਰਗ ਹੈ, ਜਿਸ ਤੇ ਚੱਲ ਕੇ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਨਾਮ ਦੀ ਵਡਿਆਈ ਦੇ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖੀ ਭਾਈਵਾਲਤਾ, ਪ੍ਰੇਮ, ਵਿਸ਼ਵਾਸ, ਨਿਸ਼ਚਾ ਆਦਿਕ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ਤਾਵਾਂ ਨੂੰ ਸਮਝਿਆ ਅਤੇ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿੱਚ ਦਰਜ ਬਾਣੀ ਨੇ ਮੱਧਕਾਲ ਦੇ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਨਿੱਘਰ ਰਹੀ ਮਾਨਵਤਾ, ਘਾਣ ਹੋ ਰਹੀ ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ, ਧਰਮ ਦੇ ਨਾਮ ਤੇ ਹੋਣ ਵਾਲ ਪਾਖੰਡ, ਆਡੰਬਰ, ਜਾਤ-ਪਾਤ, ਡਰ ਆਦਿ ਦੇ ਹਨੇਰੇ ਨੂੰ ਦੂਰ ਕੀਤਾ।

ਸੋਹਣ ਸਿੰਘ ਸੀਤਲ ਦੇ ਅਨੁਸਾਰ, ‘‘ਗ੍ਰੰਥਕਾਰਾਂ ਨੇ ਚਾਰ ਬਾਣੀਆਂ ਮੰਨੀਆਂ ਹਨ - ਪਰਾ (ਮੂਲਾਧਾਰ ਵਿੱਚ ਰਹਿਣ ਵਾਲਾ ਸ਼ਬਦ), ਪਸ਼ਯੰਤੀ (ਮੂਲਾਧਾਰ ’ਚੋਂ ਉਠਕੇ ਹਿਰਦੇ ਵਿੱਚ ਆਇਆ ਸ਼ਬਦ), ਮੱਧਮਾ (ਹਿਰਦੇ ’ਚੋਂ ਨਿਕਲ ਕੇ ਕੰਠ ਵਿੱਚ ਆਇਆ ਸ਼ਬਦ), ਤੇ ਵੈਖਰੀ (ਮੁੱਖ ਤੋਂ ਉਚਾਰਿਆ ਗਿਆ ਸ਼ਬਦ), ਪਰ ਏਥੇ ਬਾਣੀ ਤੋਂ ਭਾਵ ‘ਗੁਰਬਾਣੀ’ ਹੈ, ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਦੀ ਰਚਨਾ।’’[1] ਭਾਈ ਕਾਨ੍ਹ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨਾਭਾ ਗੁਰਮਤ ਮਾਰਤੰਡ ਵਿੱਚ ਗੁਰਬਾਣੀ

ਬਾਰੇ ਲਿਖਦੇ ਹਨ ਕਿ, "ਸਤਿਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਅਤੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਜਾਨਸ਼ੀਨ ਸਤਿਗੁਰਾਂ ਦੇ ਮੁੱਖ ਤੋਂ ਅਕਾਲ ਦੀ ਪ੍ਰੇਰਣਾ ਨਾਲ ਪ੍ਰਗਟ ਹੋਈ ਬਾਣੀ ਦੀ 'ਗੁਰਬਾਣੀ' ਸੰਗਯਾ ਹੈ।"[2] ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਗੁਰਬਾਣੀ ਨੂੰ ਚਾਨਣ, ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਅਤੇ ਗੁਰੂ ਦੀ ਉਪਾਧੀ ਦਿੰਦੇ ਹਨ:

'ਗੁਰਬਾਣੀ ਇਸੁ ਜਗ ਮਹਿ ਚਾਨਣੁ ਕਰਮਿ ਵਸੈ ਮਨਿ ਆਇ॥'

(ਸਿਰੀ ਰਾਗੁ, ਮਹਲਾ 3, ਅੰਗ 67)

'ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਸਬਦੁ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਹਰਿ ਬਾਣੀ॥ ਸਤਿਗੁਰਿ ਸੇਵਿਐ ਰਿਦੈ ਸਮਾਣੀ॥'

(ਮਾਝ, ਮਹਲਾ 3, ਅੰਗ 119)

'ਬਾਣੀ ਗੁਰੂ ਗੁਰੂ ਹੈ ਬਣੀ ਵਿਚਿ ਬਾਣੀ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਸਾਰੇ॥'

(ਨਟ, ਮਹਲਾ 4, ਅੰਗ 982)

ਪੁਰਾਤਨ ਸਮੇਂ ਤੋਂ ਹੀ ਸੰਗੀਤ ਧਰਮ ਦੇ ਨਾਲ ਜੁੜਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਮਨ ਨੂੰ ਇਕਾਗਰ ਚਿੱਤ ਕਰਨ ਲਈ ਅਤੇ ਆਤਮਿਕ ਵਿਕਾਸ ਲਈ ਸੰਗੀਤ ਦਾ ਆਸਰਾ ਲਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਧਰਮ ਦਾ ਸਦੀਵੀ ਉਦੇਸ਼ ਜਿੱਥੇ ਮੁਕਤੀ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਮੰਨਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ, ਉੱਥੇ ਸੰਗੀਤ ਦਾ ਟੀਚਾ ਵੀ ਪਰਮ ਆਨੰਦ ਨੂੰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰਨਾ ਹੀ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਆਪਣੇ ਉਦੇਸ਼ ਵਿੱਚ ਇਹ ਸਾਧਕ ਨੂੰ ਸੰਸਾਰਿਕ ਵਿਸ਼ੇ-ਵਿਕਾਰਾਂ ਤੋਂ ਉੱਪਰ ਚੁੱਕ ਕੇ ਉਸ ਪੱਧਰ ਤੇ ਪਹੁੰਚਾਉਂਦਾ ਹੈ, ਜਿੱਥੇ ਉਸਦੇ ਮਨ ਦੀਆਂ ਵਾਸ਼ਨਾਵਾਂ ਸਮਾਪਤ ਹੋ ਜਾਂਦੀਆਂ ਹਨ, ਇਸ ਅਵਸਥਾ ਵਿੱਚ ਹੀ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਜੀਵ ਨੂੰ ਸਵੀਕਾਰ ਕਰਦਾ ਹੈ।

ਗੁਰਬਾਣੀ ਦੀ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਡੀ ਖਾਸੀਅਤ ਇਸ ਦਾ ਸਿੱਖਿਅਕ ਸੰਸਥਾ ਹੋਣਾ ਹੈ, ਜਿਸ ਦੀ ਪਰੰਪਰਾ ਕੀਰਤਨ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਸ਼ੁਰੂ ਕੀਤੀ ਅਤੇ ਉਪਰਾਂਤ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨਾਂ, ਰਾਗੀਆਂ, ਰਬਾਬੀਆਂ, ਵੱਖ-ਵੱਖ ਟਕਸਾਲਾਂ, ਥਾਵਾਂ ਨੇ ਇਸ ਰਵਾਇਤ ਨੂੰ ਵਿਕਸਿਤ ਕੀਤਾ, ਜੋ ਕਿ ਸਿੱਖ ਜੀਵਨ ਸ਼ੈਲੀ ਦਾ ਅਨਿੱਖੜਵਾਂ ਅੰਗ ਬਣੀ। "The Divine Bani has been classified according to the various Raagas and various singing styles. In each and every composition of shabad, a specific title has been assigned such as Raags, Mohalaa, particular forms of Bani as Padey, Asatpadi, Alahunian, Ghorian, Chhant etc. and other terms related to poetry and music which create an original and specific musicological system."[3] ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿੱਚ ਰਚੀ ਬਾਣੀ 31 ਰਾਗਾਂ - ਸਿਰੀ ਰਾਗੁ, ਮਾਝ, ਗਉੜੀ, ਆਸਾ, ਗੁਜਰੀ, ਦੇਵਗੰਧਾਰੀ, ਬਿਹਾਗੜਾ, ਵਡਹੰਸੁ, ਸੋਰਠਿ, ਧਨਾਸਰੀ, ਜੈਤਸਰੀ, ਟੋਡੀ, ਬੈਰਾੜੀ, ਤਿਲੰਗ, ਸੂਹੀ, ਬਿਲਾਵਲ, ਗੌਂਡ, ਰਾਮਕਲੀ, ਨਟ ਨਾਰਾਇਨ, ਮਾਲੀ ਗਉੜਾ, ਮਾਰੂ, ਤੁਖਾਰੀ, ਕੇਦਾਰਾ, ਭੈਰਉ, ਬਸੰਤ, ਸਾਰੰਗ, ਮਲਾਰ, ਕਾਨੜਾ, ਕਲਿਆਨ, ਪ੍ਰਭਾਤੀ, ਜੈਜਾਵੰਤੀ, ਵਿੱਚ ਦਰਜ ਹੈ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਦਾ ਮੰਤਵ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਦੀ ਪ੍ਰੇਰਨਾ ਦੇਣ ਦੇ ਨਾਲ ਸੁਚੱਜੀ ਜੀਵਨ ਜਾਚ ਸਿਖਾਉਣਾ ਵੀ ਹੈ ਅਤੇ ਸੰਗੀਤ ਇਸ ਸਿੱਖਿਆ ਨੂੰ ਪ੍ਰਵਾਹਮਾਨ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੇ ਮੋਢੀ ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੀ ਸਿੱਖਿਆ ਅਤੇ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਾ ਪ੍ਰਚਾਰ ਸੰਗੀਤ ਰਾਹੀਂ ਕੀਤਾ। ਉਮੇਸ਼ ਜੋਸ਼ੀ ਦੇ ਸ਼ਬਦਾਂ ਵਿੱਚ, "ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਦੁਆਰਾ ਸਾਰੇ ਪੰਜਾਬ ਵਿੱਚ ਧਾਰਮਿਕ ਸੰਗੀਤ ਦਾ ਖ਼ੂਬ ਪ੍ਰਚਾਰ ਹੋਇਆ... ਪੰਜਾਬ ਵਿੱਚ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਸੰਗੀਤ ਦੀ ਇਕ ਨਵੀਂ ਚੇਤਨਾ ਬਿਖੇਰ ਦਿੱਤੀ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ ਭਜਨਾਂ ਰਾਹੀਂ ਦੱਸਿਆ ਕਿ ਮਿੱਥਿਆ ਆਡੰਬਰ, ਪਾਖੰਡ, ਅੰਧਵਿਸ਼ਵਾਸ, ਇਕ ਦੂਸਰੇ

ਪ੍ਰਤੀ ਈਰਖਾ, ਵਿਰੋਧ, ਘ੍ਰਿਣਾ ਦੇ ਭਾਵ, ਮਨੁੱਖ ਦੁਆਰਾ ਬਣਾਏ ਊਚ-ਨੀਚ ਦੇ ਭੇਦਾਂ ਤੋਂ ਉੱਪਰ ਉੱਠ ਕੇ ਪ੍ਰੇਮ, ਸਮਾਨਤਾ ਅਤੇ ਭਾਈਵਾਲਤਾ ਨੂੰ ਅਪਣਾਉਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਸੱਚ, ਸੰਤੋਖ ਅਤੇ ਵਿਚਾਰ-ਨਵੀਨਤਾ ਦਾ ਏਕੀਕਰਨ ਸਾਨੂੰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਭਜਨਾਂ ਵਿੱਚ ਮਿਲਦਾ ਹੈ।"[4] ਗੁਰਬਾਣੀ, ਸੰਗੀਤ ਰਾਹੀਂ ਮਨੁੱਖਤਾ ਦੇ ਰਾਹ ਨੂੰ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਮਾਨ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਸੰਦਰਭ ਵਿੱਚ ਇਹ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਉਸਦੇ ਧਰਮ ਅਤੇ ਜੀਵਨ-ਆਦਰਸ਼ ਪ੍ਰਤੀ ਚੇਤਨ ਕਰਨ ਦਾ ਕਾਰਜ ਵੀ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਧਰਮ ਤੋਂ ਭਾਵ ਕੇਵਲ ਈਸ਼ਵਰ-ਉਸਤਤਿ ਕਰਨ ਲਈ ਕਿਸੇ ਖ਼ਾਸ ਨੇਮਾਂ ਦੀ ਪਾਲਣਾ ਕਰਨਾ ਨਹੀਂ, ਬਲਕਿ ਇਹ ਵਿਅਕਤੀ ਦੇ ਜੀਵਨ ਨੂੰ ਖ਼ਾਸ ਅਤੇ ਉਚਿਤ ਮੰਤਵ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਧਰਮ ਸ਼ਬਦ ਦੀ ਉਤਪੱਤੀ ਤੇ ਵਿਚਾਰ ਕਰੀਏ ਤਾਂ ਇਹ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤ ਭਾਸ਼ਾ ਦੀ ਧਾਤੂ 'ਧ੍ਰੀ' ਤੋਂ ਹੋਈ ਮੰਨੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ, ਜਿਸ ਤੋਂ ਭਾਵ ਧਾਰਨਯੋਗ ਕਰਤੱਵ ਹੈ। ਗੀਤਾਂ ਵਿੱਚ ਕਰਤੱਵ ਨੂੰ ਹੀ ਧਰਮ ਕਿਹਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਅਸਲ ਵਿੱਚ "ਧਰਮ ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਨੂੰ ਸਾਰਥਕ ਉਦੇਸ਼ਾਂ ਵਾਲਾ ਇਕ ਜੀਵਨ ਨਿਸ਼ਾਨਾ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਦਾ ਕੇਂਦਰੀ ਧੁਰਾ ਇਕ ਦ੍ਰਿੜ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਹੁੰਦਾ ਹੈ, ਅੰਧ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਨਹੀਂ। ਇਸ ਵਿੱਚ ਬਿਬੇਕ ਨਾਲ ਭਰਪੂਰ ਗਿਆਨ, ਨਿਸ਼ਕਾਮ ਕਰਮ, ਸ਼ਰਧਾ ਤੇ ਪ੍ਰੇਮ ਯੁਕਤ ਭਗਤੀ ਦਾ ਸੁਮੇਲ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।"[5] ਇਸ ਦੇ ਅੰਤਰਗਤ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਮੁੱਖ ਨਿਸ਼ਾਨਾ ਕੇਵਲ ਸਮਾਧੀ ਲਾਉਣਾ ਨਹੀਂ ਬਲਕਿ ਜੀਵਨ ਦੇ ਉਤਰਾਅ-ਚੜਾਅ ਵਿੱਚ ਆਪਣੇ ਆਪ ਦੀ ਖੋਜ ਕਰਨਾ ਹੈ ਅਤੇ ਜਦੋਂ ਬਿਬੇਕ, ਨਿਸ਼ਕਾਮਤਾ ਅਤੇ ਸਦਭਾਵਨਾ ਵਰਗੇ ਗੁਣ ਇਨਸਾਨ ਦੇ ਜੀਵਨ ਵਿੱਚ ਸਾਕਾਰ ਹੋ ਜਾਂਦੇ ਹਨ, ਉਸ ਨੂੰ ਜੀਵਨ ਦਾ ਸਹੀ ਮਨੋਰਥ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਸਭ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਜੀਵ ਦੇ ਅੰਦਰੋਂ 'ਤੇਰਾ-ਮੇਰਾ' ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਨੂੰ ਖ਼ਤਮ ਕਰ ਕੇ ਸਭ ਨੂੰ ਇਕ ਸਮਾਨ ਤੇ ਇਕ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਨਾਲ ਦੇਖਣ ਦੀ ਸਮਰੱਥਾ ਪ੍ਰਦਾਨ

ਕਰਦੀ ਹੈ। ਇਨਸਾਨੀ ਸੋਚ ਵਿੱਚ ਵਿਭਿੰਨਤਾ ਦਾ ਮੂਲ ਵੱਖੋ-ਵੱਖਰਾ ਪਹਿਰਾਵਾ, ਭਾਸ਼ਾ, ਦਿੱਖ, ਰਹਿਣ-ਸਹਿਣ ਜਾਂ ਫਿਰ ਧਾਰਮਿਕ ਰੀਤੀਆਂ ਹੁੰਦੀਆਂ ਹਨ। ਪਰੰਤੂ ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿੱਚ ਦਰਜ ਗੁਰੂਆਂ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਭਗਤ ਸਾਹਿਬਾਨਾਂ ਅਤੇ ਭੱਟਾਂ ਦੀ ਬਾਣੀ ਸਾਡੀ ਅਜਿਹੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਦਾ ਖੰਡਨ ਕਰਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਇਨਸਾਨ ਦੀ ਉਤਪੱਤੀ ਦਾ ਇਕ ਸਰੋਤ ਉਸ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਮੰਨਦੀ ਹੈ -

"ਅਵਲਿ ਅਲਹ ਨੂਰੁ ਉਪਾਇਆ ਕੁਦਰਤਿ ਕੇ ਸਭ ਬੰਦੇ॥
ਏਕ ਨੂਰ ਤੇ ਸਭੁ ਜਗੁ ਉਪਜਿਆ ਕਉਨ ਭਲੇ ਕੋ ਮੰਦੇ॥੧॥"

(ਰਾਗੁ ਪ੍ਰਭਾਤੀ, ਅੰਗ-1349)

ਗੁਰਬਾਣੀ ਕਿਸੇ ਵਿੱਚ ਕਿਸੇ ਵੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦਾ ਭੇਦਭਾਵ ਨਹੀਂ ਸਿਖਾਉਂਦੀ। ਊਚ-ਨੀਚ ਤੋਂ ਰਹਿਤ ਮਨੁੱਖੀ-ਜਾਤ ਨੂੰ ਭਾਈਚਾਰੇ ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਤੋਂ ਜਾਣੂ ਕਰਾਉਣਾ ਅਤੇ ਇਸੇ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਨੂੰ ਪ੍ਰਫੁੱਲਤ ਕਰਨ ਵਿੱਚ ਇਸ ਦਾ ਮੁੱਖ ਯੋਗਦਾਨ ਹੈ, ਜੋ ਮਨੁੱਖ ਇਸ ਵਿਚਾਰ ਨੂੰ ਸਮਝ ਜਾਂਦਾ ਹੈ, ਉਸ ਦੇ ਅੰਤਮ ਵਿੱਚੋਂ ਦੂਸਰਿਆਂ ਪ੍ਰਤੀ ਈਰਖਾ, ਵੈਰ, ਵਿਰੋਧ ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਸਮਾਪਤ ਹੋ ਜਾਂਦੀ ਹੈ, ਉਸ ਲਈ ਕੋਈ ਵੀ ਵੈਰੀ ਜਾਂ ਬੇਗਾਨਾ ਨਹੀਂ ਰਹਿ ਜਾਂਦਾ।

"ਬਿਸਰਿ ਗਈ ਸਭ ਤਾਤਿ ਪਰਾਈ॥ ਜਬ ਤੇ ਸਾਧਸੰਗਤਿ ਮੋਹਿ ਪਾਈ॥੧॥
ਨਾ ਕੋ ਬੈਰੀ ਨਹੀ ਬਿਗਾਨਾ ਸਗਲ ਸੰਗਿ ਹਮ ਕਉ ਬਨਿ ਆਈ॥੧॥"

(ਰਾਗੁ ਕਾਨੜਾ, ਅੰਗ-1299)

ਮਾਨਵ ਧਰਮ ਜੇਕਰ ਵਿਭਿੰਨਤਾ ਪ੍ਰਤੀ ਸਨਮਾਨ ਦਾ ਨਜ਼ਰੀਆ ਰੱਖਣਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਲਿੰਗ ਦੇ ਆਧਾਰ ਤੇ ਸਮਾਨਤਾ ਦਾ ਵਿਵਹਾਰ ਵੀ ਇਸਦੇ ਹੀ ਅੰਤਰਗਤ ਮੰਨਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ

ਹੈ। ਮੱਧਕਾਲ ਦਾ ਸਮਾਂ ਕੇਵਲ ਮਜ਼ਹਬੀ ਅਤੇ ਵਿਚਾਰਕ ਵਖਰੇਵਿਆਂ ਦਾ ਹੀ ਨਹੀਂ ਸੀ। ਇਸ ਦੇ ਵਿੱਚ ਇਸਤਰੀ ਪੁਰਸ਼ ਦਾ ਭੇਦਭਾਵ ਵੀ ਚਰਮ ਸੀਮਾ ਤੇ ਦੇਖਣ ਨੂੰ ਮਿਲਦਾ ਹੈ, ਜਿੱਥੇ ਔਰਤ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਬਹੁਤ ਨਾਜ਼ੁਕ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਇਸਤਰੀ ਪ੍ਰਤੀ ਸੰਵੇਦਨਾ ਪ੍ਰਗਟ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਉਸਦੀ ਮਹਾਨਤਾ ਤੇ ਚਾਨਣਾ ਪਾਇਆ, ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਉਹ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਜਨਮ ਲੈਣ ਤੋਂ, ਉਸਦੇ ਸਾਰੇ ਰਿਸ਼ਤੇ-ਨਾਤਿਆਂ ਦਾ ਮੁੱਖ ਮਾਧਿਅਮ ਔਰਤ ਨੂੰ ਹੀ ਮੰਨਦੇ ਹਨ -

"ਭੰਡਿ ਜੰਮੀਐ ਭੰਡਿ ਨਿਮੀਐ ਭੰਡਿ ਮੰਗਣੁ ਵੀਆਹੁ॥
ਭੰਡਹੁ ਹੋਵੈ ਦੋਸਤੀ ਭੰਡਹੁ ਚਲੈ ਰਾਹੁ॥
ਭੰਡੁ ਮੁਆ ਭੰਡੁ ਭਾਲੀਐ ਭੰਡਿ ਹੋਵੈ ਬੰਧਾਨ॥
ਸੋ ਕਿਉ ਮੰਦਾ ਆਖੀਐ ਜਿਤੁ ਜੰਮਹਿ ਰਾਜਾਨ॥"

(ਰਾਗੁ ਆਸਾ, ਅੰਗ 473)

ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਸੂਤਕ ਦੇ ਸਮੇਂ ਇਸਤਰੀ ਵਰਗ ਨਾਲ ਅਛੂਤ ਵਿਵਹਾਰ ਕਰਨ ਸੰਬੰਧੀ ਵੀ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਵਿਚਾਰ ਪ੍ਰਗਟ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਇਸ ਨੂੰ ਭਰਮ ਦੀ ਸੰਗਿਯਾ ਦਿੰਦੇ ਹੋਏ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਜੇਕਰ ਸੂਤਕ ਦੀ ਮਰਿਆਦਾ ਨੂੰ ਸਹੀ ਮੰਨੀਏ ਤਾਂ ਫਿਰ ਸਭ ਪਾਸੇ ਸੂਤਕ ਹੁੰਦਾ ਹੈ, ਜਿਵੇਂ ਲਕੜੀ ਅਤੇ ਗੋਹੇ ਦੇ ਅੰਦਰ ਵੀ ਕੀੜੇ ਹੁੰਦੇ ਹਨ, ਜੋ ਜਨਮ ਲੈਂਦੇ ਅਤੇ ਮਰਦੇ ਰਹਿੰਦੇ ਹਨ-

"ਜੇ ਕਰਿ ਸੂਤਕੁ ਮੰਨੀਐ ਸਭ ਤੈ ਸੂਤਕੁ ਹੋਇ॥
ਗੋਹੇ ਅਤੈ ਲਕੜੀ ਅੰਦਰਿ ਕੀੜਾ ਹੋਇ॥"

(ਰਾਗੁ ਆਸਾ, ਅੰਗ 472)

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਔਰਤ ਦੇ ਮਹੱਤਵ ਅਤੇ ਸਤਿਕਾਰ ਨੂੰ ਪ੍ਰਗਟ ਕਰਨ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਲੋਕਾਈ ਵਿੱਚ ਫੈਲੇ ਅੰਧਵਿਸ਼ਵਾਸ ਦੇ ਹਨੇਰੇ ਨੂੰ ਵੀ ਦੂਰ ਕੀਤਾ। ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਸੱਚ ਅਤੇ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਤੇ ਆਧਾਰਿਤ ਹੋਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ, ਕਿਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੇ ਅੰਧਵਿਸ਼ਵਾਸ ਤੇ ਨਹੀਂ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿਚ ਇਨਸਾਨ ਨੂੰ ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੇ ਅੰਧਕਾਰ ਤੋਂ ਦੂਰ ਰਹਿਣ ਲਈ ਕਿਹਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਮਨ ਦਾ, ਪਖੰਡ ਦਾ ਅਤੇ ਤੰਗ ਸੋਚ ਦਾ ਹਨੇਰਾ ਵਿਅਕਤੀ ਨੂੰ ਗਿਆਨ ਤੋਂ ਦੂਰ ਦਿੰਦਾ ਹੈ, ਉਸ ਵਿੱਚ ਚੰਗੇ-ਬੁਰੇ ਦੀ ਪਹਿਚਾਣ ਨਹੀਂ ਰਹਿੰਦੀ। ਉਹ ਆਪਣਾ ਧਰਮ ਅਥਵਾ ਫ਼ਰਜ਼ ਭੁੱਲ ਕੇ ਕਾਮ, ਕ੍ਰੋਧ, ਲੋਭ, ਮੋਹ ਅਤੇ ਅਹੰਕਾਰ ਦੇ ਵੱਸ ਪੈ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਅਜਿਹੀ ਅਵਸਥਾ ਉਸ ਨੂੰ ਨੈਤਿਕ ਗੁਣਾਂ ਤੋਂ ਹੀਣ ਕਰ ਦਿੰਦੀ ਹੈ ਜਦਕਿ ਨੈਤਿਕ ਆਚਰਨ ਦੀ ਪਾਲਣਾ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਮਨੁੱਖਤਾ ਦੇ ਉਚੇਰੇ ਆਸਨ ਤੇ ਪਹੁੰਚਾਉਂਦੀ ਹੈ। ਪਵਿੱਤਰਤਾ, ਇਮਾਨਦਾਰੀ, ਤਿਆਗ, ਸੱਚਾਈ ਆਦਿ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਕਿਰਦਾਰ ਦਾ ਹਿੱਸਾ ਬਣਾ ਕੇ ਉਹ ਇਕ ਆਦਰਸ਼ ਸਮਾਜ ਦਾ ਨੀਂਹ ਪੱਥਰ ਰੱਖ ਸਕਦਾ ਹੈ, ਜਿੱਥੇ ਸਮਾਨਤਾ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਦਇਆ, ਸੰਤੋਖ, ਪਰੋਪਕਾਰ, ਨਿਮਰਤਾ ਦੀਆਂ ਭਾਵਨਾਵਾਂ ਜਨਮ ਲੈਂਦੀਆਂ ਅਤੇ ਵਿਕਸਿਤ ਹੋਣ ਦੀ ਸਮਰੱਥਾ ਰੱਖਦੀਆਂ ਹਨ।

ਗੁਰਬਾਣੀ ਅਨੁਸਾਰ ਸਹੀ-ਗਲਤ ਦੀ ਪਛਾਣ ਰੱਖਣ ਵਾਲਾ ਵਿਵੇਕੀ ਵਿਅਕਤੀ ਦੂਸਰਿਆਂ ਦੇ ਔਗੁਣ ਨਹੀਂ ਦੇਖਦਾ, ਸਗੋਂ ਆਤਮ ਚਿੰਤਨ ਕਰਦਾ ਹੋਇਆ ਆਪਣੇ ਅੰਦਰ ਝਾਤ ਮਾਰਦਾ ਹੈ। ਬਾਬਾ ਫ਼ਰੀਦ ਜੀ ਇਸ ਸੰਦਰਭ ਵਿੱਚ ਲਿਖਦੇ ਹਨ -

"ਫਰੀਦਾ ਜੇ ਤੂ ਅਕਲਿ ਲਤੀਫੁ ਕਾਲੇ ਲਿਖੁ ਨ ਲੇਖ॥

ਆਪਨੜੇ ਗਿਰੀਵਾਨ ਮਹਿ ਸਿਰੁ ਨੀਵਾਂ ਕਰਿ ਦੇਖੁ॥"

(ਅੰਗ 1378)

ਗਿਆਨ ਅਤੇ ਬੁੱਧੀ ਤੋਂ ਸੰਪੂਰਨ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਸੋਚ ਕਲਿਆਣ ਦੇ ਹਿੱਤਕਾਰੀ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਉਹ ਨਾਂ ਤਾਂ ਆਪਣੇ ਸਵਾਰਥ ਦੇ ਅੰਤਰਗਤ ਕਿਸੇ ਨੂੰ ਆਪਣਾ ਡਰ ਦਿੰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਨਾ ਹੀ ਕਿਸੇ ਵੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੇ ਹਲਾਤਾਂ ਦੇ ਅਧੀਨ ਹੋਰ ਦਾ ਡਰ ਮੰਨਦਾ ਜਾਂ ਸਵੀਕਾਰ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਹੰਕਾਰ ਦੇ ਵੱਸ ਵਿੱਚ ਪੈ ਕੇ ਇਨਸਾਨ ਆਪਣੇ ਹੀ ਵਿਕਾਰਾਂ ਵਿੱਚ ਵਾਧਾ ਕਰਦਾ ਹੈ।

"ਹਉ ਹਉ ਕਰਤ ਬਧੇ ਬਿਕਾਰ॥ ਮੋਹ ਲੋਭ ਹੂਬੋ ਸੰਸਾਰ॥"

(ਰਾਗੁ ਬਸੰਤ, ਅੰਗ 1192)

ਇਨ੍ਹਾਂ ਹੀ ਨਹੀਂ ਤੀਰਥਾਂ ਤੇ ਇਸ਼ਨਾਨ ਕਰਕੇ ਅਤੇ ਦਾਨ-ਪੁੰਨ ਕਰਨ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਵੀ ਜਿਸਦੇ ਮਨ ਵਿੱਚ ਹੰਕਾਰ ਦਾ ਵਿਕਾਰ ਆ ਜਾਵੇ, ਉਸ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਉਸ ਹਾਥੀ ਵਾਂਗ ਹੁੰਦੀ ਹੈ, ਜੋ ਪਾਣੀ ਵਿੱਚ ਨਹਾਉਣ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਰੇਤ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਉੱਪਰ ਪਾ ਲੈਂਦਾ ਹੈ, ਅਰਥਾਤੁ ਉਸਦਾ ਕੀਤਾ ਸਾਰਾ ਯਨ ਨਿਸ਼ਫਲ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਕਹਿਣ ਤੋਂ ਭਾਵ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਹੰਕਾਰ ਦੇ ਵੱਸ ਵਿੱਚ ਪੈ ਕੇ ਵਿਅਕਤੀ ਜਿਹੜੇ ਵੀ ਉਪਰਾਲੇ ਕਰਦਾ ਹੈ, ਉਸਦਾ ਕੋਈ ਸੁਫ਼ਲ ਪ੍ਰਾਪਤ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦਾ, ਜਿਸ ਦਾ ਮੁੱਖ ਕਾਰਨ ਮਨ ਦੀ ਅਵਸਥਾ ਦਾ ਚੰਗੇ ਗੁਣਾਂ ਤੋਂ ਵਾਂਝਾ ਹੋਣਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਹੰਕਾਰ ਦੇ ਵਿਪਰੀਤ ਨਿਮਰਤਾ ਦਾ ਗੁਣ ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਮੁਬਾਰਕ ਹੈ, ਜੋ ਸਾਨੂੰ ਦੂਸਰਿਆਂ ਪ੍ਰਤੀ ਸੰਵੇਦਨਸ਼ੀਲ ਬਣਾਉਂਦੀ ਹੈ। ਇਹ ਮਨ ਦੇ ਅੰਦਰ ਸਕਾਰਾਤਮਕ ਵਿਚਾਰਾਂ ਦਾ ਸੰਚਾਰ ਕਰਦੀ ਨਿਸ਼ਕਾਮ ਸੇਵਾ ਭਾਵਨਾ ਲਈ ਪ੍ਰੇਰਦੀ ਹੈ। ਨਿਮਰਤਾ ਰੂਪੀ ਸ਼ਕਤੀ ਤੇ ਅੱਗੇ ਕੋਈ

ਵਿਕਾਰ ਜਾਂ ਔਗੁਣ ਫਿਰ ਸਥਾਈ ਨਹੀਂ ਰਹਿ ਸਕਦਾ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਦੇ ਅਨੁਸਾਰ ਜਿਹੜਾ ਨਿਮਰਤਾ ਨੂੰ ਧਾਰਨ ਕਰਦਿਆਂ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਨੀਵਾਂ ਜਾਣਦਾ ਹੈ, ਅਸਲ ਵਿੱਚ ਉਸ ਨੂੰ ਹੀ ਮਾਣ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਦੀ ਸਿੱਖਿਆ ਨੂੰ ਧਾਰਨ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਪ੍ਰਤੀ ਗਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨਿਮਰਤਾ ਦੇ ਪਰਿਪੇਖ ਵਿੱਚ ਲਿਖਦੇ ਹਨ-

"ਜੋ ਦੀਸੈ ਗੁਰਸਿਖੜਾ ਤਿਸ ਨਿਵਿ ਨਿਵਿ ਲਾਗਉ ਪਾਇ ਜੀਉ॥"

(ਰਾਗੁ ਸੂਹੀ, ਅੰਗ 763)

ਦਇਆ ਅਤੇ ਖਿਮਾ ਅਜਿਹੇ ਸਦਗੁਣ ਹਨ, ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਧਾਰਨ ਕਰਨ ਵਾਲਾ ਵਿਅਕਤੀ ਸਾਧਾਰਨ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦਾ। ਖਿਮਾ ਜਿੱਥੇ ਦੂਸਰੇ ਦੇ ਕੀਤੇ ਅਪਰਾਧ ਜਾਂ ਗਲਤੀ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਇੱਛਾ ਨਾਲ ਭੁਲਾ ਕੇ ਕ੍ਰੋਧ ਅਤੇ ਸ਼ਤਰੂਤਾ ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਨੂੰ ਖ਼ਤਮ ਕਰਦੀ ਹੈ, ਉੱਥੇ ਦਇਆ ਦਾ ਭਾਵ ਦੂਸਰਿਆਂ ਦੀ ਗਮੀ, ਤਕਲੀਫ਼, ਤ੍ਰਾਸਦੀ ਨੂੰ ਮਹਿਸੂਸ ਕਰਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਦੋਵੇਂ ਭਾਵਨਾਵਾਂ ਦੀਆਂ ਸਥਿਤੀਆਂ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਅੰਦਰ ਕਿਸੇ ਵੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੇ ਵਿਰੋਧ, ਹੀਣਤਾ ਜਾਂ ਦਵੇਸ਼ ਨੂੰ ਖ਼ਤਮ ਕਰ ਦਿੰਦੀਆਂ ਹਨ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿੱਚ "ਦੂਖੁ ਨ ਦੇਈ ਕਿਸੈ ਜੀਅ ਪਤਿ ਸਿਉ ਘਰਿ ਜਾਵਉ॥" ਕਹਿ ਕੇ ਗੁਰੂ ਅਰਜਨ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਕਿਸੇ ਨੂੰ ਵੀ ਕਸ਼ਟ ਨਾ ਪਹੁੰਚਾਉਣ ਤੇ ਬਲ ਦਿੱਤਾ ਹੈ।

ਪ੍ਰੇਮ ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਅਤੇ ਲੌਕਿਕ ਦੋਹਾਂ ਪੱਖਾਂ ਦਾ ਬੁਨਿਆਦੀ ਤੱਤ ਹੈ। ਇਸ ਦਾ ਵਜੂਦ ਹੀ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਦੂਸਰੇ ਮਨੁੱਖ ਨਾਲ ਅਤੇ ਜੀਵ ਨੂੰ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਨਾਲ ਜੋੜਦਾ ਹੈ। "ਜਿਨ ਪ੍ਰੇਮ ਕੀਓ ਤਿਨ ਹੀ ਪ੍ਰਭ ਪਾਇਓ॥" ਉਸ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਨੂੰ ਪ੍ਰਵਾਹਿਤ ਕਰਦਾ ਹੈ, ਜਿੱਥੇ ਆ ਕੇ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਅੰਦਰਲੇ ਸਮੁੱਚੇ ਔਗੁਣ ਨਸ਼ਟ ਹੋ ਜਾਂਦੇ ਹਨ।

ਸਿੱਟਾ

ਸਿੱਟੇ ਵਜੋਂ ਕਿਹਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਕਿ ਗੁਰਬਾਣੀ ਸੰਗੀਤਕ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਇਨਸਾਨ ਦੇ ਤਪਦੇ ਹਿਰਦੇ ਨੂੰ ਠਾਰਦੀ, ਆਨੰਦ ਦਿੰਦੀ ਅਤੇ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਨਾਲ ਜੋੜਨ ਦਾ ਸਫ਼ਲ ਮਾਧਿਅਮ ਤਾਂ ਬਣਦੀ ਹੀ ਹੈ, ਨਾਲ ਹੀ ਭੌਤਿਕ ਸੰਸਾਰ ਵਿੱਚ ਵਿਚਰਣ ਦੀ ਕਲਾ ਵੀ ਸਿਖਾਉਂਦੀ ਹੈ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਦੀ ਸਿੱਖਿਆ ਅਤੇ ਸੰਗੀਤ ਦਾ ਮਹਾਤਮ ਸ਼ਬਦ ਕੀਰਤਨ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਸਾਕਾਰ ਹੋ ਕੇ ਮਨੁੱਖੀ ਗੁਣਾਂ ਦੇ ਸੰਚਾਰ ਵਿੱਚ ਵੱਡਮੁੱਲਾ ਯੋਗਦਾਨ ਦੇ ਰਹੇ ਹਨ।

ਸੰਦਰਭ ਗ੍ਰੰਥ ਸੂਚੀ

1. ਸੀਤਲ, ਸੋਹਣ ਸਿੰਘ (1978), ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿਚਾਰ, ਲੁਧਿਆਣਾ: ਲਾਹੌਰ ਬੁੱਕ ਸ਼ਾਪ, ਪੰਨਾ 89.
2. ਨਾਭਾ, ਭਾ.ਸਾ. ਭਾਈ ਕਾਨ੍ਹ ਸਿੰਘ (1992), ਗੁਰੁਮਤ ਮਾਰਤੰਡ, ਸ੍ਰੀ ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ : ਸ਼੍ਰੋਮਣੀ ਗੁਰਦੁਆਰਾ ਪ੍ਰਬੰਧਕ ਕਮੇਟੀ, ਪੰਨਾ 384.
3. Singh, Dr. Gurnam, Sikh Sacred Music Gurmat Sangeet (2008), Patiala : Gurmat Prakashan, pg. 11.
4. ਜੋਸ਼ੀ, ਉਮੇਸ਼ (1957), ਭਾਰਤੀਯ ਸੰਗੀਤ ਕਾ ਇਤਿਹਾਸ, ਫਿਰੋਜ਼ਾਬਾਦ : ਮਾਨਸਰੋਵਰ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ ਮਹਿਲ, ਪੰਨਾ 308-309.
5. ਸਿੰਘ, ਸ਼ਮਸ਼ੇਰ, ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਵਿੱਚ ਆਦਰਸ਼ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਸੰਕਲਪ (1995), ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਪਟਿਆਲਾ : ਪਬਲੀਕੇਸ਼ਨ ਬਿਊਰੋ, ਪੰਨਾ 32.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
May 2026 Page No. : 218-224

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

हिंदी साहित्य के इतिहास में आदिवासी अस्मिता

डॉ. मनोज कुमार
सह–प्रोफेसर, हिंदी विभाग, सत्यवती कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय।

भूमिका :

साहित्य समाज का दर्पण है। यह एक ऐसा प्रतिरूप है जिसमें समाज की छवि दिखाई देती है। दोनों का ही अन्योन्याश्रित संबंध है। साहित्य समाज के आचार–विचार की अभिव्यक्ति भी है। हिंदी साहित्य के इतिहास में 'आचार्य रामचंद्र शुक्ल', आरंभ में ही इस अवधारणा को व्यक्त करते हैं, **"जबकि प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चितवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब होता है, तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है।"**[1] यह अवधारणा साहित्य और समाज के अन्योनाश्रित संबंध का द्योतक है। समाज का परिवर्तन ही साहित्य के विकासशील स्वरूप को भी आकार देता है।

हिंदी पट्टी का समाज, भाषा और साहित्य के स्तर पर लगभग सवा एक हजार साल पुराना है। दोनों के स्वरूप में लगातार परिवर्तन हुआ है। यह परिवर्तन साहित्य की समझ और उसके बुनियादी सरोकारों पर प्रश्नचिन्ह भी खड़ा करती है। समाज और साहित्य की अवधारणा के भीतर ऐसे बहुत से सवाल है जिसका उत्तर दोनों के पास नहीं है। हिंदी साहित्य का समाज जातियों का समाज है। इस साहित्य में जातियों को ही समाज समझ लिया गया है। एक जाति के पास दूसरी जाति को समझने का नजरिया समाज की अवधारणा नहीं हो सकती। समाज की अवधारणा मनुष्य की समानता से जुड़ी है। एक तरह का आचार–व्यवहार ही मनुष्य को सामाजिक बनाता है। हिंदी साहित्य का इतिहास किन मानव समाजों का दर्पण है, इस पर विचार किया जाना चाहिए?

प्रथम चरण – आदिकाल :

हिंदी साहित्य के इतिहास की प्रारंभिक रचनाओं से जिस सामाजिक संरचना का बोध होता है उसमें समाज की मुक्कमल छवि दिखाई नहीं देती है। यह साहित्य एकपक्षीय अस्मिताओं का बोध कराता है। यह एकपक्षीय चित्रण भी पुरुषवादी है। आधी आबादी के चित्र यहाँ नहीं मिलते। जो चित्रण हैं भी, वह कहीं से भी स्त्री मन की बात नहीं करते। थोड़े बहुत चित्र विरह में तड़पती या प्रेम के संताप को झेलती हुई स्त्रियों के हैं। आदिकाल की रचनाओं की प्रवृत्तियों में स्त्री गायब है। यदि है भी तो उपभोग की वस्तु के रूप में। रासों ग्रंथों की प्रामाणिकता भले ही संदिग्ध हो, लेकिन इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि आधी–आबादी की संवेदना से यह साहित्य संपृक्त है। यहाँ स्त्री भौतिक वस्तु के रूप में है। आमीर खुसरो के साहित्य में इसकी

अस्मिता दिखाई देती है– **"काहे को व्याहे विदेस, अरे, लखिय बाबुल मोरे। काहे को ब्याहे बिदेस।"**[2] यह चिंता सदियों की चिंता है। इस रूप में यह कविता आधी–आबादी के मन का नेतृत्व करती है। विद्यापति के यहाँ आधी आबादी का यह दर्द और संघर्ष दिखाई नहीं देता। स्त्री की देह श्रृंगार की परिपाटी का निर्वहन करने तक सीमित रही है। उसका सौंदर्य केवल प्रेयसी के रूप तक सीमित नहीं है। न ही उसका वर्णन केवल नायिका भेद तक ही सीमित है। हिंदी साहित्य का आरंभिक इतिहास ऐसे अनगिनत प्रश्नचिन्हों के साथ पाठक वर्ग के सामने आता है।

द्वितीय चरण – भक्तिकाल :

हिंदी साहित्य के इतिहास का दूसरा चरण भक्तिकाल भी, इन सवालों से अनभिज्ञ नहीं है। हिंदी साहित्य का स्वर्ण–काल साहित्यिक और वैचारिक समृद्धि रूप में अपने से पूर्व की परंपरा का निर्वहन तो नहीं करता। लेकिन सीधे–सीधे उन सवालों से टकराता भी नहीं है। ईश्वर की मौजूदगी भी सामाजिक संरचना से एक पूरे वर्ग को बाहर रखने पर आमादा दिखाई देती है। यह अलग बात है कि इस चरण के अधिकांश रचनाकार निम्न जातियों से आए हुए हैं। और वही अस्मिताएं अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करती हुई दिखाई देती हैं। इन अस्मिताओं को समाज की मुख्य धारा स्वीकार नहीं करती। महाकवि तुलसीदास का महाकाव्य रामचरित मानस के सुंदरकांड की चौपाई है, **"ढोल गंवार शूद्र पशु नारी, सकल ताड़ना के अधिकारी।"**[3] आधुनिक समीक्षक इसका अर्थ लेने के लिए स्वतंत्र हैं। इसे लेकर प्रायः विवाद की स्थिति उत्पन्न होती रही है। किसी कविता का अर्थ सभी के लिए एक जैसा नहीं हो सकता है। कविता या साहित्य का अर्थ विभिन्न कालखण्डों में बदलता रहा है।

तुलसी का रामचरित मानस सामाजिक समन्वय की कोशिश में महान ग्रंथ है, लेकिन स्त्रियों, दलितों और आदिवासियों के सवाल पर यहाँ समन्वय का संकट दिखाई देता है। रामचरित मानस में निम्न जातियों की अस्मिता का अंकन जिन रूपों में हुआ है वह महत्वपूर्ण है–**"अधम जाति में विधा पाए, भयहू यथाअहि दूध पिलाए।"**[4] अर्थात् जिस प्रकार से सांप को दूध मिलाने से वह अधिक विषैला हो जाता है वैसे ही शूद्रों को शिक्षा देने से वे और खतरनाक हो जाते हैं। ऐसे अनेक पद हैं जैसे– **"जे वर्णाधम तेली कुम्हारा, स्वपच किरात कौल कलवारा।"**[5] अर्थात् तेली, कुम्हार, सफाई कर्मचारी, आदिवासी कोल, कलवार इत्यादि नीच वर्ण के लोग हैं। यह किस प्रकार का साहित्य है और यह साहित्य की कौन सी दृष्टि है, इस पर विचार करने की जरूरत है। साहित्य समाज का दर्पण है, लेकिन साहित्य रचनाकार की सामाजिक प्रतिबद्धता उसकी जातीय सोच और पूर्वाग्रह की दृष्टि से भी पाठक को अवगत करवाता है। स्त्रियों को लेकर तुलसी की मानसिक अवस्था ऐसी क्यों है, इसे समीक्षक जानते हैं। स्वपीड़ा से रामचरित मानस की कथा प्रभावित है। स्त्रियों को लेकर पुरुषवादी मनोवृति के उदाहरण मानस में भरे पड़े हैं– **काने, खोटे, कुबड़े, कुटिल, कूचाली, कुमतिजानतिय विशेष पुनि चेरी कही, भरतु मातुमुस्कान।"**[6] अर्थात् काना, लंगड़ों और कुबड़ों को नीच और धोखेबाज जानना चाहिए, उनमें से स्त्री खासकर नौकरानी को। इतना कहकर भरत की माता मुस्कराने लगी। भारतीय समाज की सामाजिक संरचना में अस्मिता के सवाल भरे पड़े हैं। भक्ति काव्य में मीरा अपवाद हैं। लेकिन पुरुषवादी समाज की जकड़न में मीरा भी अपनी पहचान के लिए संघर्ष करती हैं। भक्तिकालीन साहित्य की स्वर्णिम सीमा का निर्माण सवर्ण अस्मिताओं द्वारा रचित रचनाओं से ही संभव नहीं हुआ है। बल्कि भक्तिकालीन कविता के सवर्णिम इतिहास के निर्माण में कबीरदास, रैदास, सेना, धन्ना, पीपा इत्यादि रचनाकारों का योगदान भी कम नहीं है। एक तरफ तुलसीदास समन्वय के

रचनाकार कहे जा रहे हैं वहीं दूसरी तरफ उनके साहित्य में भारी अंर्तविरोध भी दिखाई देता है। यह संकट पहचान का संकट है। दूसरे की अस्मिता के अस्वीकार का संकट है।

तृतीय चरण – रीतिकाल :

अंग्रेजों के आगमन के बाद भारतीय समाज की जातीय अस्मिता जस के तस बनी रहती है। समाज की जिस छवि का निर्माण साहित्य करता है वास्तव में वह समाज अपनी वास्तविकता से कोसों दूर है। यह सर्वसाधारण का समाज नहीं है। रीतिकालीन कविता की संरचना में हाशिए का समाज नहीं है। श्रृंगार में डूबा हुआ साहित्य किस वर्गीय समाज का चित्र हमारे सामने लाता है इससे पाठक अनभिज्ञ नहीं है। स्त्री अस्मिता के अधिकांश चित्र श्रृंगारिक, दरबारी, भोगविलासी है। सवाल यह है कि स्त्री क्या इतने तक ही सीमित है या स्त्री अस्मिता की परिणिति इसी में है? स्त्री के सवाल से पूरा मध्यकाल मौन है। यदि स्त्री माया है तो पुरुष के लिए मुक्ति का मार्ग भी है। भगवान बुद्ध के बौद्धत्व प्राप्ति का रास्ता बिना उसके बिना तय नहीं हो सकता। रीतिकालीन साहित्य में सेवादार, मजदूर, कामगार और निम्नमध्यवर्गीय अस्मिताएं नहीं है। आदिवासियों की अस्मिता से रीतिकालीन कविता परिचित नहीं है। रीतिकाल में संभवतः एकमात्र स्त्री कवयित्री महारानी वृंदावन हैं, जिनकी छिटपुट रचनाएं मिलती है।

हिंदी साहित्य का इतिहास आदिकाल से लेकर आधुनिक युग के आरंभ तक अस्मिताओं के सवाल से मौन है। कुछ खास जातियों की पहचान का साहित्य भारतीय समाज की पहचान नहीं करा सकता है। आचार्य शुक्ल के इतिहास की क्या मजबूरी है कि प्रत्येक रचनाकार का परिचय उसकी जातीय अस्मिता से जुड़ा हुआ मिलता है। जो साहित्य प्रभुत्वशाली जातियों का मंच भर बनकर रह जाएगा वह साहित्य समाज का दर्पण नहीं हो सकता। साहित्य की सामाजिकता सही मायनों में बीसवीं शताब्दी के आरंभ में ही दिखाई देती है। साहित्य समाज का दर्पण, यदि है तो उसे समाज की पूरी तस्वीर दिखानी चाहिए। आधी–अधूरी तस्वीर से समाज और साहित्य दोनों को खतरा है। इसी कारण साहित्य कटघरे में यदा–कदा खड़ा पाया जाता है।

चतुर्थ चरण – आधुनिक काल :

आधुनिक युग का आरंभ सन् 1850 ई. के बाद होता है। जिन कारणों से इस युग की पहचान आधुनिक रूप में की गयी है, उसमें 'स्वत्व बोध' की चेतना गहराई से जुड़ी है। भारतीय आधुनिकता के केंद्र में 'स्वत्व बोध', 'साम्राज्यवाद का विरोध' और 'स्वतंत्रता का आग्रह' गहराई से रूपायित है। 'हिंदी साहित्य' भी इससे अनभिज्ञ नहीं है। भारतेंदु हरिशचंद्र, बालकृष्ण भट्ट, राजा लक्ष्मण सिंह, जगन्नाथ दास रत्नाकर, श्रीधर पाठक इत्यादि आरंभिक साहित्य के रचनाकारों के पास समाज को देखने–परखने का अपना नजरिया था। तत्कालीन परिस्थितियों के आलोक में आधुनिक युग के प्रारंभिक रचनाकारों ने समाज को देखने और परखने की कोशिश भी की। उनके प्रयास में 'स्वत्व का बोध, साम्राज्यवाद का विरोध और स्वतंत्रता का आग्रह भी था। स्वत्व का बोध यदि स्वयं या व्यक्ति के बोध की परिभाषा तक सीमित रह जाए तो वह अपनी पृष्ठभूमि में सीमित हो जाएगा। 'स्वत्व के बोध' में सम्पूर्णता अनिवार्य है। इसके अभाव में इसकी व्यापक दृष्टि नहीं रह जाती है। 'स्वत्व बोध' का अर्थ व्यक्ति से परिवार, परिवार से समुदाय और समुदाय से समाज का बोध कराती है। समाज की संस्कृति, उसका इतिहास, वर्तमान भाषा इत्यादि का समष्टिक बोध ही 'स्वत्व का बोध' है। लेकिन साहित्य और इतिहास की पाण्डुलिपियों में इसका अभाव है।

भारतेंदू युग के बाद का साहित्य सामाजिक रूप से अधिक क्रियाशील है। बीसवीं शताब्दी के आरंभ के साथ ही साहित्य की दृष्टि में स्त्रियों को लेकर बदलाव नज़र आता है। इसका सबसे बड़ा उदाहरण 'हरिऔध की रचना प्रिय–प्रवास है। प्रिय प्रवास की राधा 'स्त्री अस्मिता' की सकारात्मक पक्ष का निर्माण करती है। इसी युग में मैथिलीशरण गुप्त की रचनाएं भी इन बुनियादी सवालों को उठाती हैं। आधुनिक युग के सभी चरण 'स्त्री अस्मिता' के पक्ष में सकारात्मक माहौल का निर्माण करते हैं। सवाल ये है कि यह कौन सी स्त्रियां हैं? स्त्रियों को लेकर भी भारतीय समाज की सामाजिक संरचना जटिल है। स्त्रियों को लेकर भी भारतीय समाज में वर्ग और जातियां हैं। स्त्री जेंडर के रूप में अपनी अलग पहचान तो रखती ही है, लेकिन समाज जाति, वर्ग और नस्ल के आधार पर भी उसकी पहचान करता है। भारतीय समाज में स्त्रियों की पहचान भी जाति, वर्ण, वर्ग आधारित है। उसकी स्वतंत्रता समानता की बात करना उसकी दोहरी आजादी की कोशिश है। स्त्री की पहचान पुरुष की पहचान से बिल्कुल अलग है। उसका विरोध पुरुषसतात्मक साम्राज्य का विरोध है। देश की आजादी के साथ स्त्री आजादी का सवाल आधुनिक साहित्य के इतिहास का सबसे बड़ा सवाल है। इसी तरह के सवाल दलित और आदिवासी अस्मिता के साथ भी जुड़े हैं। दलित और आदिवासी अस्मिता से आधुनिक युग परिचित है, लेकिन उसकी अस्मिता को स्वीकार करने का साहस मुख्यधारा के साहित्यिक इतिहास और समीक्षकों के पास नहीं है।

आधुनिक युग की विशेषताओं में सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसने उन लोगों को पहचान दी है, जिसे आधुनिक युग से पूर्व पहचाना नहीं गया था। उनकी पहचान का सवाल धार्मिक और साहित्यिक ग्रंथों में नकारात्मक रूप में अधिक आया है। सबसे पहले इनकी पहचान इतिहास ने की है। इतिहास ने इनकी अस्मिता को न केवल पहचाना है बल्कि उसे स्थापित भी किया है। उन्हें मनुष्य के रूप में पहचान भी दी है।

आदिवासी अस्मिता और साहित्य :

आधुनिक हिंदी साहित्य समाज से बहिष्कृत अस्मिताओं को पहचानने पर बल देता है। आधुनिक वैचारिक दृष्टि उन लोगों के बारे में विचार करती है, जो अभी तक अपनी पहचान के लिए संघर्षरत थे। हिंदी में स्त्री अस्मिता के बाद दलित और आदिवासी अस्मिता से जुड़ा लेखन इसी सोच का परिणाम है। धर्म ग्रंथों में जो अस्मिताएं नकारात्मक रूप से चित्रित हुई है वह आधुनिक युग में वास्तविक विशेषताओं के साथ सामने आती हैं। हिंदी में आदिवासी अस्मिता से जुड़ा हुआ लेखन सन् 1930 के आसपास सामने आता है। आदिवासी साहित्य हिंदी साहित्य की महत्वपूर्ण साहित्यिक धारा है। आदिवासी जीवन, रहन–सहन उनकी परम्परा और संस्कृति आदिवासी साहित्यिक धारा के मूल में है। आलोचना के लिए यह विमर्श का विषय है। और यही विमर्श आदिवासी साहित्य को पाठक के सामने लाने का जरिया भी है। दलित और स्त्री साहित्य की तरह आदिवासी साहित्य के साथ भी पहचान का संकट आरंभ से जुड़ा हुआ है। क्योंकि यहाँ भी सहानुभूति और स्वानुभूति का प्रश्न खड़ा है। एक वर्ग आदिवासियों के द्वारा लिखित साहित्य को स्वीकार नहीं करता तो दूसरा वर्ग उनके द्वारा आदिवासियों के चित्रण को वास्तविक नहीं मानता। सहानुभूति पूर्वक लिखा गया साहित्य हमारे धार्मिक ग्रंथों की तरह ही है। इसलिए दूसरा वर्ग स्वयं के द्वारा लिखित साहित्य को आदिवासी साहित्य मानकर सहानुभूति के प्रश्न को ही खारीज कर देता है। उनका मानना है कि सहानुभूति यदि वास्तविक होती तो आधुनिक युग से पूर्व के साहित्य में उनकी चर्चा या उनकी छवि नकारात्मक नहीं होती।

आदिवासी साहित्य के साथ एक महत्वपूर्ण तथ्य यह निकलकर आया है कि 'आदिवासी साहित्य' की

पहली रचनाकार एक स्त्री है। हिंदी कविता में इनकी चर्चा नहीं मिलती। सबसे महत्वूपर्ण बात है कि यह कवयित्री छायावादी है। कवयित्री 'सुशीला सामद' नाम की इस आदिवासी स्त्री का काव्य संग्रह सन् 1935 ई. में प्रकाशित हुआ। इस काव्य संग्रह का नाम 'प्रलाप' है। सन् 2017 में इस काव्य संग्रह को वंदना टेटे ने अपनी विस्तृत भूमिका और संपादन के साथ प्रकाशित करवाया है। वंदना टेटे इस काव्य संग्रह की भूमिका में लिखती हैं ''भारतीय पत्रकारिता और साहित्य के इतिहास में आदिवासी और महिलाओं दोनों की स्थिति एक समान है। लेखन में भी और लेखक के रूप में भी। लेखन में जहाँ उन्हें विषय और कथ्य के रूप में नहीं लाया गया या लाया भी गया तो उनके गरिमापूर्ण अस्तित्व को नकारकर। वहीं, दूसरी ओर उनकी लेखकीय अभिव्यक्ति को लगातार दमित–पीड़ित किया गया। प्रकाशनों में उन्हें स्थान नहीं दिया। अगर अपने दम पर वे अपना प्रकाशन ले भी आए तो उसमें भाषायी त्रुटि, साहित्यिक दोष, सौंदर्यात्मक अनुभूतियों की कमी आदि बताकर पत्रकारिता व साहित्य के मुख्य मंच पर आने से जबरन रोक दिया। फिर भी, आ भी गए तो नजरें ऐसे फेर सी मानो उस दिशा में न तो आँखों की पुतलियाँ फिरती हों और न ही गर्दन मुड़ती हों। और वे अनदेखे–अनजाने ही रह गए। भारत की प्रथम आदिवासी हिंदी कवयित्री सुशीला सामद के साथ ऐसा ही हुआ।''[7] इनकी कविताएं इन्हीं की समकालीन महादेवी वर्मा और सुभद्रा कुमारी चौहान से कमतर नहीं है। सुशीला सामद बहुत मजबूती से कविताओं में अपनी बात रखती हैं। वे अपनी पीड़ा और वेदना को व्यक्त करती हैं– **गरजते प्रलय-घन हैं आ, बरस दें उपल मनमाना / इस सूने हृदय में अब तो, रोना है और न गाना।''**[8] आखिर क्या कारण है कि अपनी समकालीन रचनाकारों की तरह का लेखन करने के बावजूद सुशीला सामद को स्वीकार नहीं किया गया। इसका उत्तर भी 'प्रलाप' की भूमिका में वंदना टेटे ने लिखा है– ''सुशीला सामद को हिंदी साहित्य के इतिहास से मठाधीशों ने फाड़कर फेंक दिया है। इसीलिए की आदिवासी हिंदी के आरंभिक काल से लिख रहे थे। इसीलिए कि आदिवासी हिंदी भाषी होते हुए भी अपने पहली ही कविता संकलन से तत्कालीन कविता शीर्ष को छू लेने वाली इस आदिवासी कवयित्री को ये स्वीकार नहीं करना चाहते। इसलिए कि ये महिलाओं को साहित्य लेखन का श्रेय देने को तैयार नहीं थे। और इसलिए भी कि वे आदिवासियत के प्रबल स्वर को दबाना चाहते थे। साहित्य का समूचा इतिहास लेखन आधी–अधूरी, नस्लीय, सामंती और लैंगिक भेदभाव से भरा है। सुशीला सामद की जानबूझकर की गई उपेक्षा और अनुपस्थिति यही दर्शाती हे।''[9] हिंदी साहित्य के इतिहास से अलग ऐसे बहुत अधिक तथ्य मिलते हैं, जिनके साथ समाज और साहित्य के इतिहास ने न्याय नहीं किया है।

साहित्य का संबंध कल्पना और गल्प से है। लेकिन उसका उतना ही संबंध समाज से है। समाज और मनुष्य के अनुभव से है। एक ही समाज या राष्ट्र में रहने के बावजूद प्रत्येक मनुष्य का सत्य और अनुभव अलग है। स्वानुभूति का सत्य और सहानुभूति के सत्य में अंतर होता है। हिंदी साहित्य का इतिहास उन अस्मिताओं की बात नहीं करता जो हाशिए पर हैं। हाशिए या परिधि का साहित्य समाज में अपने अस्तित्व के होने से पड़ने वाले प्रभाव की बात अधिक करता है, जहाँ समाज की वस्तुस्थिति का अंकन वास्तविक रूप में दिखाई देता है। मुख्यधारा के साहित्य के पास यह सवाल ही नहीं है। मुख्यधारा के समाज के साहित्य का सौंदर्यबोध बिल्कुल अलग है। इस सौंदर्यबोध में व्याकरिणक शब्द जाल अधिक हैं। अस्मिता का साहित्य इन्हीं व्याकरणिक शब्द जाल से बचना चाहता है।

आदिवासी अस्मिता की बात जो करे वह आदिवासी साहित्य है। मुख्यधारा का साहित्य बगल से गुजर

जाता है। इसकी चेतना में जल, जंगल और जमीन के सवाल नहीं है। आदिवासी अस्मिता अपनी पृष्ठभूमि में ही अलग है। यह उन सवालों की पहचान करता है जो दूसरों के लिए वाजिब नहीं है। प्रकृति को अपनी दुनिया समझने वाले आदिवासियों के साहित्य में नदियां, पोखर, तालाब, खेत, जंगल, पहाड़, पशु–पक्षी इत्यादि दिखाई देते हैं। प्रकृति का यह रूप ही उनकी पहचान है। आदिवासी साहित्य में आदिवासी समाज का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है। जिस प्रतिबिम्ब की बात आचार्य रामचंद्र शुक्ल हिंदी साहित्य का इतिहास' में करते हैं। 'चित्तवृत्ति में संचित प्रतिबिम्ब' ही महाश्वेता देवी के साहित्य में आता है। संजीव का जंगल जहाँ से शुरू होता है या अनिल यादव का 'वह भी कोई देश है महाराज' में बोडो–कछारी, राभा, हाजंग, लालुंग, अका, मनपा, डफला, मेइतेइ इत्यादि का बिम्ब ही इस साहित्य का प्रतिबिम्ब है।

आदिवासी अस्मिता को रेखांकित करने वाला साहित्य आदिवासियों की गरीबी, पिछड़ापन, उनके भीतर शिक्षा की कमी, आर्थिक स्थिति, सामाजिक स्तर, संस्कृति की बात ही नहीं करता बल्कि सामाजिक–आर्थिक रूप से पिछड़ेपन के कारणों की खोज करता है। उनके असंतोष को जानने पर बल देता है। जिसका निराकरण करके उन्हें मुख्यधारा से जोड़ा जा सके।

निर्मला पुतुल हिंदी कविता के लिए एक चर्चित नाम है। उनकी कविताएं न केवल 'स्त्री अस्मिता' की दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि स्त्री के साथ–साथ आदिवासी अस्मिता की दृष्टि से भी इनकी कविताएं समीक्षकों और पाठकों को आकर्षित करती हैं। निर्मला पुतुल अपनी कविताओं में स्त्री संघर्ष, उनके सपने, परिवार, समाज में उनकी स्थिति, आदिवासी के रूप में समाज में उनकी भूमिका, जंगल के खत्म होने की चिंता इत्यादि दिखाई देता है। संबंधों पर लिखी उनकी कविताएं जितनी गहराई तक जाती है वैसा अनुभव अन्यत्र कहीं नहीं मिलता है– **"बाबा इतनी दूर मत ब्याहना / जहाँ जाने के लिए तुम्हें बेचनी पड़े अपनी बकरियाँ / जहाँ जाकर सांझ तक लौट भी न सको।"**[10] यह दर्द व्यक्तिगत से कहीं अधिक हैं। इससे पहले की कविता में ऐसा बिम्ब कहाँ आया है, इस पर विचार किया जाना चाहिए।

जंगलों के कटने से, पहाड़ों को तोड़ने से, जमीनों के अधिग्रहण से जो दर्द आदिवासियों को होता है, वैसा दर्द किसी अन्य को नहीं होता। आदिवासियों के जीवन का जुड़ाव इन्हीं से है। अशोक सिंह अपनी कविताओं में इसी संवेदना को अभिव्यक्त करते हैं– **"अब हम कहाँ मिलेंगे फूलमनी किस जंगल / किस पहाड़ पर मिलेंगे हम दोनों / गाँव के पिछवाड़े का सारा जंगल / कट गया है धीरे–धीरे...। तुम ही बताओ फूलमनी / हम कहाँ मिलेंगे तुमसे।"**[11] यह चिंता क्या केवल समाज विशेष की है? या मनुष्य की अस्मिता ही खतरे में है। खतरा बड़ा है, लेकिन सवाल करने का साहस सबके पास नहीं है। आदिवासियों को लेकर मुख्यधारा की जो राय बनी है वह भी विचारणीय है "आदिवासी बेचारे हैं, शोषित और उत्पीड़ित–लेखकीय सहानुभूति के पात्र नैरेटर मसीहा हैं जो आदर्शवाद, सिद्धांतवादिता और 'अव्यवहारिकता' के चलते सभ्य समाज का कांटा है। लेखक की सारी शुभेच्छा और संवेदनाएं इनके साथ हैं क्योंकि वह लेखक के ही अहं का विस्तार है।"[12] इस सोच से मुख्यधारा के साहित्य को बाहर निकलना होगा।

विशेषकर आदिवासी स्त्रियों के संदर्भ में इस तरह का लेखन और भी क्रूर दिखाई देता है। यह सब हाशिए के विमर्श की अनभिज्ञता का परिणाम है। हाशिए का विमर्श उन अस्मिताओं की बात करता है, जिसे समझने का प्रयास मुख्य धारा के लेखक को, अपने साहित्यिक मापदंडों को हाशिए पर रखकर करने की जरूरत है। हाशिए

का विमर्श और उसके साहित्यिक मापदंड बिल्कुल अलग हैं। मुख्यधारा की सौंदर्याभिरूचियों के आलोक में हाशिए का विमर्श हमेशा हाशिए पर ही रहेगा। आदिवासी अस्मिता को रेखांकित करने वाला साहित्य अपने समाज की तरह ही हाशिए पर है। इस हाशिए का चुनाव आदिवासी साहित्य ने स्वयं नहीं किया है। आदिवासी समाज का साहित्य और गैर–आदिवासी समाज के साहित्य में बुनियादी फर्क सामाजिक संरचना की ऊपज है। सामाजिक संरचना की श्रेष्ठता साहित्य की परिधि तय करने का कार्य करती है।

हिंदी साहित्य का समाज, आदिवासी समाज की पृष्ठभूमि और इतिहास से कितना परिचित है, यह छिपा हुआ नहीं है। 'आदिवासी अस्मिता' इतिहास से बेदखल है। थोड़ी बहुत पहचान मिल रहे आरक्षण और नक्सली के रूप में है। साहित्य का आरक्षण मुख्य धारा को मिला हुआ है। यह आरक्षण दूसरी अस्मिताओं के लिए घातक और मृत्युशैया पर ले जाने वाला है। हजार साल की साहित्यिक परम्परा में सम्पूर्ण समाज नहीं है जो है, वह इतिहास में नहीं है। यहाँ हिंदी साहित्य या भारतीय आधुनिकता की अवधारणा संदेहास्पद हो जाती है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल की अवधारणा ''जबकि प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति में संचित प्रतिबिम्ब होता है।''[13] वह इस सवाल पर खंडित हो जाती है। जबकि हमें आदिवासी इतिहास, संस्कृति, समाज और साहित्य का मिजाज समझने के लिए साहित्य का बोध बदलने की आवश्यकता है। बोध बदलने से हम आदिवासी समाज या हाशिए के विमर्श को समझ सकते हैं। उन अस्मिताओं के साहित्यिक अवदान को समझ सकते हैं, जिनसे हिंदी साहित्य की परम्परा विकासोन्मुख रहेगी।

संदर्भ सूची :

1. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ.सं. 13
2. खुसरो, अमिर, गजल, साभार कविता कोश Kavitakosh.org
3. दास, तुलसी, रामचरितमानस, सुंदरकांड, पृ.सं. 847
4. वही, उत्तरकांड, पृ.सं. 929, मंझला साइज, प्रकाशक गीताप्रेस गोरखपुर।
5. वही, पृ.सं. 1097
6. वही, अयोध्याकांड–14, पृ.सं. 922
7. सामद, सुशीला, प्रलाप, भूमिका, पृ.सं. 05
8. वही, पृ.सं. 137
9. वही, पृ.सं. 22
10. पुतुल, निर्मला, नगाड़े की तरह बजते हैं शब्द, पृ.सं. 49
11. सिंह, अशोक, वही, पृ.सं. 192
12. अग्रवाल, रोहिणी, वही, पृ.सं. 34
13. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ.सं. 13

PRINTED MATTER/PRINTING BOOK CLAUSE 121 (A) P & T GUIDE

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)
द्वारा भिवानी (हरियाणा), काठमाण्डू (नेपाल) से प्रकाशित

ISSN : 2395-7115
Impact Factor : 8.642

बोहल शोध मंजूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY, MULTIPLE LANGUAGES PEER REVIEWED, REFREED RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website : www.bohalshodhmanjusha.com
Email : grsbohal@gmail.com

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Adv.
M. : 8708822674, 9466532152

गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा श्रीगंगानगर, (राजस्थान), पटियाला (पंजाब) व नेपाल से प्रकाशित

ISSN : 2321-8037
Impact Factor : 7.834

Gina Shodh SANGAM

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : www.ginajournal.com
Email : grngobwn@gmail.com
Office : 8708822674

Editor :
Dr. Rekha Soni, Vice Principal
Education, Tantia University
M. 9828531975

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ
द्वारा नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639
Impact Factor : 6.521

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : https://ginajournal.com/shodh-samalochan/
Executive Editor : Dr. Varsha Rani M. 9671904323
Managing Editor : Dr. Mukesh Verma M. 9627912535

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गुगनराम सोसायटी रजि. के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने मनभावन प्रिन्टर्ज, भिवानी से छपवाकर गीना प्रकाशन, 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड भिवानी-127021 (हरि.) से वितरित की।

ISSN 2395:7115

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

भीमसेन मालिया, शोधार्थी,

डॉ. सचिन कुमार, शोध निर्देशक,

भूगोल विभाग, श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय, हनुमानगढ़।

for the paper titled

ग्रामीण एवं नगरीय जनसांख्यिकी का विश्लेषणात्मक अध्ययन : हनुमानगढ़ जिले के विशेष संदर्भ में

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 10-14

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. रवि देव 'कर्मयोगी'

पूर्व ए. एम.एच. डी. एस. एस. सी रक्षा मंत्रालय, भारत सरकार।
प्रदेश सह संयोजक, शिक्षक प्रकोष्ठ, भारतीय जनता पार्टी, दिल्ली।

for the paper titled

प्राचीन हिन्दू शिक्षा पद्धति (गुरूकुल व्यवस्था) एवं आधुनिक शिक्षा प्रणाली का तुलनात्मक अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 15-23

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

श्रीमती रतनी, शोधार्थी (शिक्षा)

डॉ. सुमन रानी, रिसर्च सुपरवाइजर,

टांटिया विश्वविद्यालय श्रीगंगानगर, राजस्थान।

for the paper titled

वैदिक कालीन शिक्षा व्यवस्था का विश्लेषणात्मक अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 24-28

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. पूराराम मेघवाल

for the paper titled

शिक्षा में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की भूमिका और भविष्य

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 29-36

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

ANIL KANT SAHU

M.Lib.I.Sc, UGC-NET, Central University Gold Medalist
Librarian (Guest), Government M.M.R Post Graduate College, Chhattisgarh

for the paper titled

Enhancing Information Literacy Through Libraries : Challenges And Opportunities Under NEP 2020

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 37-40

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. गौरव नायक

for the paper titled

धर्म, संस्कृति और सामाजिक संरचना : भारतीय परिप्रेक्ष्य में अंतःक्रियात्मक अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 41-46

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

प्रणय मणि त्रिपाठी, शोधार्थी

डॉ. संध्या शुक्ला, शोध निर्देशक

राजनीति विज्ञान, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा (म०प्र०)

for the paper titled

राष्ट्रीय राजनीति पर क्षेत्रीय दलों का प्रभाव : एक अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 47-52

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Gagandeep Kaur

Assistant Professor, Department of Political Science,
SMHS Government College, Mohali, Punjab.

for the paper titled

SYRIAN DISPLACEMENT AND THE INTERNATIONAL ORDER

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 53-63

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

सुमन, शोधार्थी,

नवीन राय, शोधार्थी,

भूगोल विभाग, स्वामी विवेकानन्द राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, लोहाघाट, चम्पावत (उत्तराखण्ड)

for the paper titled

पर्यावरणीय शिक्षा और सतत् विकास : राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के भूगोल पाठ्यक्रम की भूमिका

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 64-73

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

दीपिका राज, शोधार्थी

शोध पर्यवेक्षक : **डॉ. धर्मवीर सिंह,** सहायक प्रोफेसर

पुस्तकालय विज्ञान विभाग, वाई. बी. एन. विश्वविद्यालय, रांची।

for the paper titled

ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल साक्षरता बढ़ाने में सार्वजनिक पुस्तकालयों की भूमिका : एक आलोचनात्मक अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 74-81

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Ravi Verma, Research Scholar,

Professor Dr. J.C. Sinha, Research Supervisor,

School of Social Science, Devi Ahilya Vishwavidyalaya,
Indore, Madhya Pradesh.

for the paper titled

Jal, Jangal, Zameen as Sacred Assets : Revisiting Tribal Resource Rights under PESA through the Vedic Concept of 'Pancha Mahabhuta'

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 82-88

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Juveria Alam

Research Scholar, Department of Linguistics, Aligarh Muslim University.

Ovais Amin

Research Scholar, Department of Linguistics, University of Kashmir

for the paper titled

Aspect Based Split Ergativity and Verbal Categories in Spoken Braj Bhasha

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 89-95

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

.गीता गम्भीरी, पीएच.डी. शोधार्थी,

डॉ. निशा साहनी, शोध पर्यवेक्षक, असिस्टेंट प्रोफेसर,

टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर।

for the paper titled

नासिरा शर्मा के उपन्यासों में सामाजिक विमर्श

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 96-100

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

प्रियंका शर्मा, शोधकर्त्री

शोध निर्देशक : **डॉ. दीपक शर्मा,** सहायक प्रोफेसर,

शिक्षा संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर, राजस्थान।

for the paper titled

दक्षिणांचल कवियों का काव्य-शिल्प

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 101-103

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Dr. Poonam Tomar

Guest Faculty (Economics).
SOS in Law jiwaji University Gwalior (M.P.)

for the paper titled

Impact of Artificial Intelligence on Retail Market

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 104-111

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Dr. Sujith S.

Assistant Director of Physical Education,
National University of Advanced Legal Studies (NUALS), Kochi.

for the paper titled

Role of Sports in Character Building and Moral Development among Youth

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 112-118

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Mayuri Jain, Student

Jaya Nayak, Assistant Professor,

RKDF UNIVERSITY, BHOPAL

for the paper titled

Corporate Social Responsibility in India - An Analytical Study

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 119-127

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Koshinder Singh

Research scholar, NET JRF Qualified,
Department of History, Meerut College Meerut.

for the paper titled

AZAMPUR VILLAGE : A HISTORICAL STUDY

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 128-133

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

मयंक वसु, शोधार्थी,
इतिहास विभाग, चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ, उ0 प्र0
डॉ. दीपक कुमार, शोध निर्देशक एवं असिस्टेंट प्रोफेसर,
इतिहास विभाग, एस.एस.वी. कॉलेज, हापुड़, उ0 प्र0

for the paper titled

आधुनिक हिन्दी साहित्य और ऐतिहासिक यथार्थ : एक आलोचनात्मक अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 134-140

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

राहुल गर्ग

शोधार्थी, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

प्रो. रजिंदर कौर

शोध निर्देशक, हिंदी विभाग, माता सुंदरी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

for the paper titled

'दादी अम्मा' और 'बहनें' कहानी में पारिवारिक संबंधों की बदलती संवेदनाओं का विश्लेषण

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 141-146

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Vaibhav Yadav

Research Scholar, NET JRF
Department of History, Chaudhary Charan Singh University,
Meerut, Uttar Pradesh.

for the paper titled

From Battle of Mandan to Rezang La : The Evolution of Martial Identity in AHIRWAL

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 147-154

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. समय दीन गुप्ता

सहायक प्राध्यापक, रक्षा एवं स्त्रातेजिक अध्ययन विभाग,
वी.एस.एस.डी. कॉलेज, कानपुर नगर, उत्तर प्रदेश, भारत।

for the paper titled

अमेरिका–ईरान युद्ध का भारत की अर्थव्यवस्था, ऊर्जा सुरक्षा और विदेश नीति पर प्रभाव

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 155-162

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Ram Krishan Saran, Research Scholar

Dr. Surjeet Singh Kaswan (Professor), Research Supervisor

Faculty of Physical Education, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.)

for the paper titled

Impact of Measurement Accuracy and Marking Procedures on Athlete Performance and Safety in Physical Education and Sports

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 163-167

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Sushanta Dharua, Research Scholar, Dept. of Sanskrit, KISS DU., Bhubaneswar-751024

Dr. Biraj Krushna Mishra, Asst. Prof. & Head, Dept. of Sanskrit, KISS DU.

Dr. Trupti Mishra, Asst. Professor, Dept. of Sanskrit, KISS DU.

for the paper titled

Human Values as envisaged in *Kirātārjunīyaṃ* : A study [With special reference to Canto-I]

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 168-177

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

मोहम्मद रमजान, शोधकर्ता

शोध निर्देशक : **डॉ. जगदीश प्रसाद कड़वासरा,** सहायक प्रोफेसर,
कला संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर, राजस्थान।

for the paper titled

महिला अधिकारों के विशेष संदर्भ में राजस्थान में मानवाधिकारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 178-180

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

शुभम् दुबे, शोध छात्र,
प्रो. इन्दु भूषण द्विवेदी, शोध निर्देशक एवं विभागाध्यक्ष,
प्राचीन इतिहास विभाग, के0 बी0 पी0 जी0 कालेज मिरजापुर।

for the paper titled

प्राचीन भारतीय समाज में संरक्षण, समृद्धि एवं अनुशासन के प्रतीक रूप में यक्ष एवं दिक्पाल

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 181-184

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. प्रणय रंजन

जय गिरि निवास, जादो बाबू चौक, हजारीबाग।

for the paper titled

झारखण्ड का जनजातिय ग्राम प्रशासन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 185-190

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Shrawan Kumar Prajapat, Research Scholar

Dr. Kamal Vijayvargia, Research Supervisor & Assistant Professor, Faculty of Physical Education, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.)

for the paper titled

Influence of Aerobic Capacity and Muscular Endurance on Athletic Performance : A Comparative and Predictive Study

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 191-194

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Motiram, Research Scholar

Dr. Kamal Vijayvariga, Research Supervisor &
Assistant Professor.
Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.)

for the paper titled

Impact of Sports Psychology on the Personality Development of the Athlete

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 195-197

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D.,
D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

Shiv Prakash, Research Scholar

Dr. Kamal Vijayvargia, Research Supervisor & Assistant Professor, Faculty of Physical Education, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.)

for the paper titled

COMPARATIVE ANALYSIS OF MUSCLE STRENGTH AND FLEXIBILITY AMONG ATHLETES

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 198-201

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. अनु पाण्डेय

असिस्टेंट प्रोफेसर, श्री आई.जे.पटेल बीएड. कॉलेज, मोगरी– 388345, आनंद, गुजरात।

for the paper titled

'घुसपैठिये' कहानी संग्रह में अभिव्यक्त दलित वर्ग की पीड़ा

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 202-206

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

ਡਾ. ਲਤਾ, ਗਾਇਡ

ਸੰਦੀਪ ਕੌਰ, ਖੋਜ ਕਰਤਾ

ਸੰਗੀਤ ਅਤੇ ਥੀਏਟਰ ਵਿਭਾਗ, ਲਵਲੀ ਪ੍ਰੋਫੈਸ਼ਨਲ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਫਗਵਾੜਾ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ

for the paper titled

ਗੁਰਬਾਣੀ ਸੰਗੀਤ ਦਾ ਮਨੁੱਖੀ ਗੁਣਾਂ ਦੀ ਸਿੱਖਿਆ ਦੇ ਪ੍ਰਚਾਰ-ਪ੍ਰਸਾਰ ਵਿੱਚ ਯੋਗਦਾਨ

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 207-217

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. मनोज कुमार

सह–प्रोफेसर, हिंदी विभाग,
सत्यवती कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय।

for the paper titled

हिंदी साहित्य के इतिहास में आदिवासी अस्मिता

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue -5, Part-2, Page No. 218-224

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A.J.M., M.Lib.& Information Science, M.Phil. Ph.D., D.Litt (Nepal) Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper Copy.

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152